जीवराज जैन ग्रन्थमाला, ग्रन्थ १७

ग्रन्थमाला संपादक

प्रो. आ. ने. उपाध्ये व प्रो. हीरालाल जैन

तीर्थवन्दनसंग्रह

(दिगम्बर जैन तीर्थक्षेत्रों के बारे में ४० लेखकों की प्राचीन और मध्ययुगीन रचनाओं का संकलन और अध्ययन)

संपादक

प्रा. डॉ. विद्याधर जोहरापूरकर एम्.ए., पीएच्. डी.

संस्कृतविभाग, शासकीय महाविद्यालय, जावरा (म. प्र.)

प्रकाशक

गुलाबचन्द हिराचन्द दोशी

जैन संस्कृति संरक्षक संघ, सोलापूर.

वीर नि. सं. २४९१]   सन १९६५   [विक्रम सं. २०२१

मूल्य रुपये पांच मात्र

प्रकाशक :
गुलाबचंद हिराचंद दोशी,
जैन संस्कृति संरक्षक संघ,
सोलापूर

मुद्रक :
स. रा. सरदेसाई, बी. ए., एल्.एल्.बी.,
'वेद-विद्या' मुद्रणालय, ४१ बुधवार पेठ,
पुणें २.

JĪVARĀJA JAINA GRANTHAMĀLĀ, NO. 1

GENERAL EDITORS:
Dr. A. N. UPADHYE & Dr. H. L. JAIN

TĪRTHAVANDANASAṂGRAHA

(A Compilation and Study of Extracts from Ancient and Medieval Works of Forty Authors about Digambara Jaina Holy Places)

by

Dr. V. P. JOHRAPURKAR, M.A., Ph.D.
Asst. Professor of Sanskrit, Govt. Degree College,
Jaora (M.P.)

Published by
GULABCHAND HIRACHAND DOSHI
Jaina Saṁskṛti Saṁrakṣaka Saṅgha
SHOLAPUR
1965

Price Rs. Five only

First Edition : 750 Copies

Copies of this book can be had direct from Jaina Saṁskṛti Saṁrakshaka Sangha, Santosha Bhavana, Phaltan Galli, Sholapur (India)

Price Rs. 5/- Per copy, exclusive of Postage

जीवराज जैन ग्रंथमालाका परिचय

सोलापूर निवासी ब्रह्मचारी जीवराज गौतमचंदजी दोशी कई वर्षोंसे संसारसे उदासीन होकर धर्मकार्यमें अपनी वृत्ति लगा रहे थे। सन १९४० में उनकी यह प्रबल इच्छा हो उठी कि अपनी न्यायोपार्जित संपत्तिका उपयोग विशेष रूपसे धर्म और समाजकी उन्नतिके कार्यमें करें। तदनुसार उन्होंने समस्त देशका परिभ्रमण कर जैन विद्वानोंसे साक्षात् और लिखित सम्मतियां इस बातकी संग्रह कीं कि कौनसे कार्यमें संपत्तिका उपयोग किया जाय। स्फुट मतसंचय कर लेनेके पश्चात् सन् १९४१ के ग्रीष्म कालमें ब्रह्मचारीजीने तीर्थक्षेत्र गजपंथा (नासिक) के शीतल वातावरणमें विद्वानोंकी समाज एकत्र की और ऊहापोहपूर्वक निर्णयके लिए उक्त विषय प्रस्तुत किया। विद्वत्सम्मेलनके फलस्वरूप ब्रह्मचारीजीने जैन संस्कृति तथा साहित्यके समस्त अंगोंके संरक्षण, उद्धार और प्रचारके हेतुसे 'जैन संस्कृति संरक्षक संघ' की स्थापना की और उसके लिए ३००००, तीस हजारके दानकी घोषणा कर दी। उनकी परिग्रहनिवृत्ति बढ़ती गई और सन् १९४४ में उन्होंने लगभग २,००,०००, दो लाखकी अपनी संपूर्ण संपत्ति संघको ट्रस्ट रूपसे अर्पण कर दी। इस तरह आपने अपने सर्वस्वका त्याग कर दि. १६-१-५७ को अत्यन्त सावधानी और समाधानसे समाधिमरणकी आराधना की। इसी संघके अंतर्गत 'जीवराज जैन ग्रंथमाला' का संचालन हो रहा है। प्रस्तुत ग्रंथ इसी ग्रंथमालाका सत्रहवाँ पुष्प है।



स्व. ब्रह्मचारी जीवराज गौतमचंदजी दोशी
संस्थापक, जैन संस्कृति संरक्षक संघ, सोलापूर

विषयानुक्रम

—:०:—

GENERAL EDITORIAL

The *Tīrthavandanasaṁgraha* is an attempt to put together authentic details about Jaina (especially Digambara) Tīrthas or Holy Places which lie scattered practically all over India. The author has a plan in his presentation. He has extracted passages in Sanskrit, Prākrit, Apabhraṁśa, Hindi, Gujarati and Marathi dealing with the Jaina Tīrthas from forty authors, Samantabhadra to Kamala Kānhāsuta, whose period extends over more than 1500 years. Each excerpt is accompanied by an elucidatory note on the author, the context and contents of it. The passages are authentically presented, and the accompanying details are precise and to the point. These are followed by a Bibliographical Note on works of corelated contents from which some references are given here and there. The Sārasaṃkalana is a valuable Alphabetical Register of all the Place Names occurring in the extracts given earlier. Each entry is fully discussed recording all the information available here along with references to some other works for further scrutiny and study. This section has thus become a source of useful information which can be profitably used by earnest students of Indian geography.

Dr. V. P. JOHRAPURKAR has earned our compliments for the careful execution of this piece of work which would serve as an instrument of further researches in the field of Indian geography wherein many details are still to be supplied and fully studied. The General Editors are thankful to him for placing this work at the disposal of the Jīvarāja Jaina Granthamālā for publication.

The authorities of the Granthamālā readily accepted our request and published this work in the Jīvarāja Jaina-

Granthamālā. This Granthamālā has, within a short time, made a name on account of its important publications which have worthily served the cause of Indian learning. It augurs well for the progress of Jainological studies that such works are being published by this Granthamālā.

It is our pleasant duty to record our sincere thanks to the President of the Trust Committee, Shriman Gulabchand Hirachandaji, who is showing enlightened liberalism in shaping the policy of the Granthamālā. Further, our gratitudes are due to Shriman Walchand Devachandaji and to Shriman Manikchand Virachandaji; they are taking keen and active interest in the progress of the Granthamālā; and but for their co-operation and help it would have been difficult for the General Editors to pilot the various publications from a distance.

Kolhapur,
12th June 1965

A. N. Upadhye
H. L. Jain.

प्रस्तावना

प्रत्येक धर्म और संस्कृति के इतिहास में तीर्थस्थानों का विशेष महत्त्व होता है। जैन संस्कृति भी इस का अपवाद नही है। भारत के विभिन्न प्रदेशों में स्थित तीर्थस्थान एक ओर पुरातन जैन तीर्थंकर, आचार्य तथा समाज के नेताओं की स्मृति बनाये रखते हैं तथा दूसरी ओर वर्तमान जैन समाज के लिए समान श्रद्धा और भक्ति के केन्द्र होने के नाते सामाजिक एकता और सुदृढता का साधन सिद्ध होते हैं।

जैन तीर्थों के इतिहास के साधन विपुल हैं, ये मुख्यतः दो प्रकार के हैं— साहित्यिक उल्लेख तथा शिलालेख। अब तक इन साधनों का उपयोग श्वेताम्बर साहित्य के विद्वानों ने काफी मात्रा में किया है। किन्तु दिगम्बर साहित्य पर आधारित अध्ययन बहुत कम हुआ है — पं. नाथूरामजी प्रेमी के 'जैन साहित्य और इतिहास' में सम्मिलित तीन निबन्ध, पं. दरबारीलालजी द्वारा संपादित शासन-चतुस्त्रिंशिका तथा पत्रिकाओं में प्रकाशित कुछ लेख — इतनी ही सामग्री प्रकाशित हुई है। इसी कमी को अंशतः दूर करने के उद्देश से प्रस्तुत पुस्तक का संपादन किया गया है।

इस संग्रह में दिगम्बर संप्रदाय के ४० लेखकों के विविध साहित्यिक उल्लेख संकलित हैं। इन में से २० पूर्वप्रकाशित हैं और २० हस्तलिखितों से संकलित हैं। इन लेखकों के बारे में अधिक विवरण प्रत्येक उद्धरण के प्रारम्भ में दिया है। यहां उन के बारे में कुछ तुलनात्मक विचार व्यक्त करेंगे।

पहले आठ लेखक प्राचीन युग के—पांचवी से दसवीं सदी तक के हैं और वे सब प्रमाणभूत आचार्यों के रूप में प्रसिद्ध हैं। समन्तभद्र, यतिवृषभ, पूज्यपाद, रविषेण, जटासिंहनंदि, जिनसेन, गुणभद्र तथा हरिषेण के इन उल्लेखों से ६२ तीर्थों का पता चलता है। इन में १६ नगर तीर्थंकरों के जन्मस्थान हैं व पांच स्थान तीर्थंकरों के निर्वाण स्थान हैं, शेष स्थान किसी महापुरुष या घटना से संबद्ध हैं। तीर्थंकरसंबंधी स्थानों में से कैलास, श्रावस्ती, मिथिला और भद्दिला इन चार स्थानों की यात्रा-परम्परा टूट गई है, शेष स्थान अब भी विद्यमान हैं। अन्य स्थानों में शत्रुंजय, तुंगी, मेढ़गिरि, गजपंथ, [illegible] के

पांच पर्वत, उज्जयिनी, तेर, मणिमत् (तारंगा), वंशगिरि (कुंथलगिरि) ये तेरह स्थान इस समय ज्ञात हैं, शेष २८ तीर्थस्थानों की स्मृति विलुप्त हो गई है।

मध्ययुग के जो ३२ लेखक हैं उन में पद्मप्रभ, सिंहनंदि, अभयचंद्र, ज्ञानकीर्ति, लक्ष्मण, मेरुचंद्र, गंगादास, धनजी, मकरन्द, तोपकवि, राघव तथा कमल इन १२ लेखकों ने एक एक क्षेत्र का वर्णन या स्तवन किया है — पद्मप्रभ ने रामगिरि का, सिंहनंदि ने कुलपाक का, अभयचंद्र, मेरुचंद्र, गंगादास तथा कमल ने तुंगीगिरि का, ज्ञानकीर्ति ने सम्मेदशिखर का, लक्ष्मण ने श्रीपुर का, धनजी एवं राघव ने मुक्तागिरि का, मकरन्द ने रामटेक तथा तोपकवि ने हुम्मच का वर्णन-स्तवन किया है। ये सब तीर्थ अब भी प्रसिद्ध हैं। इन में तुंगीगिरि, रामगिरि तथा सम्मेद-शिखर व मुक्तागिरि (मेंढ्रगिरि) प्राचीन आचार्यों द्वारा भी उल्लिखित हैं, कुलपाक, श्रीपुर, हुम्मच व रामटेक मध्ययुगीन हैं।

एक से अधिक किन्तु दस से कम तीर्थों का उल्लेख या वर्णन करनेवाले ६ लेखक हैं। इन में पद्मनन्दि ने दो (रावण तथा जीरावल्ली), राजमल्ल ने दो (मथुरा तथा विपुलाचल), भ. जिनसेन ने चार (गिरनार, संमेदशिखर, रामटेक तथा कुलपाक), भ. देवेन्द्रकीर्ति ने छह (गिरनार, शत्रुंजय, तुंगी, ऋषभदेव, गजपंथ व तारंगा), जिनसागर ने तीन (पावा, हुम्मच, व विपुलाचल) तथा कवीन्द्रसेवक ने छह (कैलास, शत्रुंजय, मांगीतुंगी, गिरनार, मुक्तागिरि व गजपंथ) तीर्थों का उल्लेख किया है। इन में कैलास को छोड कर सभी तीर्थ अबभी प्रसिद्ध हैं। इन में रावण, जीरावल्ली, रामटेक, कुलपाक, ऋषभदेव, हुम्मच व पावागढ मध्ययुगीन हैं, शेष स्थान प्राचीन लेखकों द्वारा उल्लिखित हैं।

शेष १४ लेखकों में — जिन्होंने दस से अधिक तीर्थों का वर्णन या उल्लेख किया है — निर्वाणकाण्ड के कर्ता, उदयकीर्ति, श्रुतसागर, गुणकीर्ति, मेघराज, सोमसेन, चिमणापंडित व दिलसुख ये आठ लेखक एक वर्ग के हैं। इन्हों ने अधिक तर निर्वाणकाण्ड का ही अनुसरण किया है। इस वर्ग में उल्लिखित तीर्थों में पावागढ, पावागिरि, सिद्धवरकूट(?) रिसिंदगिरि, चूलगिरि, सुवर्णागिरि, रेवातट, नागद्रह, मंगलापुर, आशारम्य, हुलगिरि, तथा श्रीपुर ये तीर्थ मध्ययुगीन हैं, इन में भी इस समय आशारम्य व मंगलपुर ज्ञात नहीं हैं शेष किसी न किसी रूपमें प्रसिद्ध हैं। इस वर्ग के अन्य क्षेत्रों का संबंध प्राचीन उल्लेखों

से जोडा जा सकता है। इस वर्ग के कुछ लेखकों ने वाडवजिनेंद्र, तिलकपुर, श्रवणबेलगोल जैसे अन्य तीर्थों का भी समावेश अपने वर्णन में किया है।

शेष छह लेखकों में सुमतिसागर तथा जयसागर की रचनाएं परस्पर अधिक समानता रखती हैं। सुमतिसागर ने ४० और जयसागर ने ४६ तीर्थों का उल्लेख किया है। निर्वाणकाण्ड के प्रायः सभी तीर्थों के अतिरिक्त इन दोनों ने गुजरात व महाराष्ट्र के परिसर के बहुतसे तीर्थों के उल्लेख किये हैं।

शेष चार लेखकों ने प्रायः स्वतन्त्र रूप से लिखा है। इन में सब से पुरातन मदनकीर्ति हैं जिन्हों ने २६ तीर्थों का वर्णन किया है। इन में सम्मेद-शिखर, श्रीपुर, हुलगिरि, विपुलाचल आदि तीर्थ इस समय भी ज्ञात हैं, तथा नागह्रद, पश्चिम समुद्र के चन्द्रप्रभ, छायापार्श्व, पोदनपुर आदि तीर्थ विस्मृत हो चुके हैं। दूसरे लेखक विश्वभूषण की रचना में २९ तीर्थों का उल्लेख है जिन में अधिकतर महाराष्ट्र व कर्नाटक के हैं। तीसरे लेखक हर्ष ने सिर्फ पार्श्वनाथ की मूर्तियों से प्रसिद्ध २० तीर्थों के नाम दिये हैं, इन में अधिकतर गुजरात व महाराष्ट्र के हैं।

इस संग्रह की सबसे विस्तृत और महत्त्वपूर्ण रचना ज्ञानसागर की है। उन्हों ने ७८ तीर्थों का वर्णन किया है। इस में कर्णाटक, महाराष्ट्र, गुजरात, मध्यप्रदेश, राजस्थान, उत्तरप्रदेश व बिहार के प्रायः सभी तीर्थों का – जो १७ वीं सदी में प्रसिद्ध थे – परिचय मिल जाता है। लेखक ने स्थान स्थान पर बहुमूल्य ऐतिहासिक जानकारी दी है। इस दृष्टि से एलूर, जहांगीरपुर, अवचापुर, कारकल, आदि क्षेत्रों का वर्णन पठनीय है।

इन सब लेखकों द्वारा उल्लिखित तीर्थों का वर्णन अकारादि क्रम से इस पुस्तक के आखिरी भाग 'सारसंकलन' में दिया है। इन तीर्थों से संबंधित अन्य जानकारी – वर्तमान स्थान, मार्ग, शिलालेख, तथा अन्य महत्त्व आदि – भी इस सारसंकलन में दे दी गई है। विशेष अध्ययन के इच्छुकों के लिए अन्त में सभी ऐतिहासिक नामों की अकारादि सूची भी संकलित है।

सारसंकलन के अध्ययन से स्पष्ट होता है कि मध्ययुग में तीर्थंकरों के जन्म व निर्वाण के स्थानों की वन्दना दिगम्बर व श्वेताम्बर दोनों करते थे। शंखेश्वर, चारुप, अतारा, नलोडु, दभोई, बडाली आदि स्थान जो इस समय

श्वेताम्बर अधिकार में हैं इस संग्रह के लेखकों द्वारा उल्लिखित हैं अर्थात् मध्ययुग में दिगम्बर यात्री भी वहां जाते थे। इसी तरह मुक्तागिरि, तुलगिरि, बावनगज, आदि स्थान जो इस समय दिगम्बर अधिकार में हैं— श्वेताम्बर यात्रियों द्वाराभी वर्णित हैं। इस से स्पष्ट होता है कि दिगम्बर-श्वेताम्बरों की तीर्थसंबंधी कटुता मध्ययुग में बहुत कम थी, परस्पर सहानुभूति अधिक रही होगी।

इस संग्रह में वर्णित तीर्थों के अतिरिक्त भी कई तीर्थ इस समय प्रसिद्ध हैं, तथा पुरातन साहित्य में भी ऐसे अन्य उल्लेख मिलना संभव है। फिर भी हमें आशा है कि तीर्थ-इतिहास के क्षेत्र में एक प्रारम्भिक प्रयास के रूप में यह ग्रन्थ उपयोगी सिद्ध होगा। सारसंकलन में हम ने जिन लेखकों की कृतियों का उपयोग किया है उन का यथास्थान निर्देश कर दिया है, उन सब के हम बहुत आभारी हैं।

जावरा
१-१-१९६५

विद्याधर जोहरापुरकर

तीर्थवन्दनसंग्रह

१. समन्तभद्र

प्रस्तुत संग्रह का पहला उल्लेख स्वामी समन्तभद्र के स्वयम्भूस्तोत्र का है। बाईसवे तीर्थंकर नेमिनाथ की स्तुति करते हुए इस में कहा है— यह ऊर्जयंत नामक प्रसिद्ध पर्वत पृथ्वी के ककुद के समान है, इस के शिखरों पर विद्याधरों की स्त्रियां निवास करती हैं, इस के तट मेघों के आवरणों से घिरे रहते हैं; इस पर इन्द्र ने भगवान नेमिनाथ के लक्षण (चरण-चिन्ह) उत्कीर्ण किये हैं, इसलिए ऋषि इसे तीर्थ मान कर इस की प्रसन्न चित्त से यात्रा करते हैं। यथा—

ककुदं भुवः खचरयोषिदुषितशिखरैरलंकृतः।
मेघपटलपरिवीततटस्तव लक्षणानि लिखितानि वज्रिणा ॥ १२७ ॥
वहतीति तीर्थमृषिभिश्च सततमभिगम्यतेऽद्य च।
प्रीतिविततहृदयैः परितो भृशमूर्जयन्त इति विश्रुतोऽचलः ॥ १२८ ॥

समन्तभद्र का समय निश्चित नही है—विद्वानों ने पहली-दूसरी सदी से पांचवीं-छठी सदी तक विभिन्न अनुमान व्यक्त किये हैं। हमारे अनुमान से पांचवीं सदी समय का अधिक संभव है। स्वयंभूस्तोत्र, जिन-स्तुतिशतक, युक्त्यनुशासन, आप्तमीमांसा, तथा रत्नकरण्ड ये उन के प्रसिद्ध ग्रन्थ हैं तथा गन्धहस्ति महाभाष्य, षट्खंडागमटीका, व जीवसिद्धि ये उन के ग्रन्थ अनुपलब्ध हैं। उन के जीवन तथा कार्य के अधिक परिचय के लिए पं. जुगलकिशोर मुख्तार द्वारा उन के ग्रन्थों के लिए लिखी गई प्रस्तावनाएं उपयुक्त हैं।

---

२. यतिवृषभ

आचार्य यतिवृषभ की तिलोयपण्णत्ती जैन भूगोलशास्त्र की महत्त्वपूर्ण रचना है। इस के प्रथम अधिकार में क्षेत्रमंगल का स्वरूप बतलाते हुए कहा है–गुणों को प्राप्त (तीर्थंकर आदि) पुरुषों का निवास, दीक्षा, केवलज्ञान की उत्पत्ति आदि जहां हुई हो वह बहुत प्रकार का क्षेत्रमंगल है, इस के उदाहरण हैं—पावानगर, ऊर्जयन्त, चंपा आदि। यथा—

गुणपरिणदासणं परिणिक्कमणं केवलस्स णाणस्स।
उप्पत्ती इय पहुदी बहुभेदं खेत्तमंगलयं॥ २१॥
एदस्स उदाहरणं पावाणगरुज्जयंतचंपादी॥ २२॥

इसी अधिकार में प्रस्तुत शास्त्र के मूल उपदेश का वर्णन करते हुए कहा है–देव तथा विद्याधरों के मन को आकृष्ट करनेवाले पंचशैल-नगर में, जिस का नाम यथार्थ है (अर्थात जो पांच पर्वतों से घिरा है), विपुल पर्वत पर वीरजिन (भगवान महावीर) इस शास्त्रके अर्थकर्ता (इस विषय के मूल उपदेशक) हुए। पूर्व में चौकोर आकार का ऋषिगिरि है, दक्षिण में वैभारगिरि तथा नैऋत्य में विपुलगिरि ये त्रिकोण आकार के हैं, पश्चिम, वायव्य तथा उत्तर में धनुष के आकार का छिन्नगिरि है, ईशान दिशा में पांडुकगिरि है एवं ये पांचों पर्वत कुशाग्रनगर को घेरे हुए हैं। यथा—

सुरखेयरमणहरणे गुणणामे पंचसेलणयरम्मि।
विउलम्मि पव्वदवरे वीरजिणो अट्ठकत्तारो॥ ६५॥
चउरस्सो पुव्वाए रिसिसेलो दाहिणाए वेभारो।
णइरिदिदिसाए विउलो दोण्णि तिकोणट्ठिदायारा॥ ६६॥
चावसरिच्छो छिण्णो वरुणाणिलसोमदिसविभागेसु।
ईसाणाए पंडुवणामो सव्वे कुसग्गपरियरणा॥ ६७॥

आगे चतुर्थ अधिकार में अंतिम केवलज्ञानी श्रीधर कुंडलगिरि से मुक्त हुए ऐसा वर्णन है—

कुंडलगिरिम्मि चरिमो केवलणाणीसु सिरिधरो सिद्धो ॥ १४७९ ॥

चतुर्थ अधिकार में ही गाथा ५२६ से ५४९ तक चौवीस तीर्थंकरों के विषय में विवरण दिया है। विस्तारभय से यह पूर्ण उद्धृत नही किया है। इस में तीर्थंकरों के जन्मनगर इस प्रकार बतलाये हैं— अयोध्या अथवा साकेत—ऋषभ, अजित, अभिनन्दन, सुमति एवं अनन्तनाथ, श्रावस्ती—संभवनाथ; कौशाम्बी—पद्मप्रभ; वाराणसी–सुपार्श्व और पार्श्वनाथ; चन्द्रपुर—चन्द्रप्रभ, काकन्दी–पुष्पदन्त, भद्रिल–शीतलनाथ; सिंहपुर–श्रेयांस; चम्पा–वासुपूज्य; कांपिल्य–विमलनाथ; रत्नपुर–धर्मनाथ; हस्तिनापुर या नागपुर—शांति, कुंथु एवं अरनाथ; मिथिला–मल्लि एवं नमि; राजगृह–मुनिसुव्रत; शौरीपुर–नेमिनाथ तथा कुण्डलनगर–महावीर।

यतिवृषभ का समय पांचवीं सदी में अनुमानित है। तिलोयपण्णत्ती के अतिरिक्त कषायप्राभृत के चूर्णिसूत्र तथा षट्करणस्वरूप ये दो ग्रन्थ उन्हों ने लिखे थे। इन में पहला प्रकाशित हुआ है तथा दूसरा अनुपलब्ध है। यतिवृषभ के विषय में पं. नाथूराम प्रेमी ने जैन साहित्य और इतिहास में विस्तृत निबंध लिखा है। तिलोयपण्णत्ती के लिए डॉ. उपाध्ये एवं डॉ. जैन द्वारा लिखित प्रस्तावना भी उपयुक्त है।

---

३. पूज्यपाद

दिगम्बर जैन साहित्य में जो दस भक्तिपाठ प्रसिद्ध हैं उन में निर्वाणभक्ति भी एक है। क्रियाकलाप टीका के कर्ता प्रभाचन्द्राचार्य के कथनानुसार संस्कृत भक्तिपाठ पादपूज्य स्वामी के द्वारा लिखे गये हैं। यहां उल्लिखित पादपूज्य आचार्य पूज्यपाद देवनन्दि ही हो सकते हैं जिन के सर्वार्थसिद्धि, समाधितन्त्र, इष्टोपदेश, व जैनेन्द्रव्याकरण ये ग्रन्थ सुप्रसिद्ध हैं। इन का समय छठी सदी में सुनिश्चित है।

संस्कृत निर्वाणभक्ति में ३२ पद्य हैं। इस के दो भाग हैं, पहले २० पद्यों में भगवान महावीर के जीवन का संक्षिप्त वर्णन है तथा दूसरे

भाग के १२ पद्यों में अन्यान्य निर्वाणक्षेत्रों का उल्लेख है। प्रथम भाग में भगवान महावीर का जन्मस्थान विदेह प्रदेश का कुण्डपुर बतलाया है (श्लो. ४–५), उन्हें केवलज्ञान की प्राप्ति ऋजुकूला नदी के तीर पर जृम्भिकाग्राम में हुई थी (श्लो. ११–१२), उन का पहला उपदेश वैभारपर्वतपर दिया गया था (श्लो. १३), तथा पावानगर के उद्यान में वे मुक्त हुए थे (श्लो. १६–१७)। दूसरे भाग में बतलाये हुए क्षेत्र इस प्रकार हैं–श्लो. २२–कैलास पर्वत–वृषभदेव का मुक्तिस्थान, चम्पापुर–वासुपूज्य का मुक्तिस्थान; श्लो. २३ ऊर्जयन्त–अरिष्टनेमि का मुक्तिस्थान; श्लो. २४ पावापुर–वर्धमान जिन का मुक्तिस्थान; श्लो. २५ सम्मेदपर्वत–शेष बीस तीर्थंकरों का मुक्तिस्थान; श्लो. २८ शत्रुंजयपर्वत–पाण्डवों का मुक्तिस्थान, तुंगी–बलभद्र का मुक्तिस्थान, नदीतट–सुवर्णभद्र का मुक्तिस्थान; श्लो. २९ द्रोणीमत्, प्रवरकुण्डल, मेंढ्रक, वैभारपर्वत, वरसिद्धकूट, ऋष्यद्रि, विपुलाद्रि, बलाहक, विन्ध्य, पोदनपुर, वृषदीपक; श्लो. ३० सह्याचल, हिमवत्, सुप्रतिष्ठ, दण्डात्मक, गजपथ, पृथुसारयष्टि।

पहले भाग के संबद्ध पद्य तथा दूसरे भाग के सब पद्य आगे उद्धृत किये जाते हैं।

पूज्यपाद के विषय में पं. जुगलकिशोर मुख्तार द्वारा लिखित समाधितन्त्र की प्रस्तावना में तथा पं. नाथूराम प्रेमी द्वारा 'जैन साहित्य और इतिहास' के एक निबन्ध में विस्तृत विवेचन किया गया है।

निर्वाणभक्ति

सिद्धार्थनृपतितनयो भारतवास्ये विदेहकुण्डपुरे।
देव्यां प्रियकारिण्यां सुस्वप्नान् संप्रदर्श्य विभुः ॥ ४ ॥

चैत्रसितपक्षफाल्गुनिशशाङ्कयोगे दिने त्रयोदश्याम्।
जज्ञे स्वोच्चस्थेषु ग्रहेषु सौम्येषु शुभलग्ने ॥ ५ ॥

ऋजुकूलायास्तीरे शालद्रुमसंश्रिते शिलापट्टे।
अपराह्ने षष्ठेनास्थितस्य खलु जृम्भिकाग्रामे ॥ ११ ॥

वैशाखसितदशम्यां हस्तोत्तरमध्यमाश्रिते सोमे।
क्षपकश्रेण्यारूढस्योत्पन्नं केवलज्ञानम्॥ १२॥

अथ भगवान् संप्रापद् दिव्यं वैभारपर्वतं रम्यम्।
चातुर्वर्ण्यसुसंघस्तत्राभूद् गौतमप्रभृति॥ १३॥

पद्मवनदीर्घिकाकुलविविधद्रुमखण्डमण्डिते रम्ये।
पावानगरोद्याने व्युत्सर्गेण स्थितः स मुनिः॥ १६॥

कार्तिककृष्णस्यान्ते स्वातावृक्षे निहत्य कर्मरजः।
अवशेषं संप्रापद् व्यजरामरमक्षयं सौख्यम्॥ १७॥

यत्रार्हतां गणभृतां श्रुतपारगाणां निर्वाणभूमिरिह भारतवर्षजानाम्।
तामद्य शुद्धमनसा क्रियया वचोभिः संस्तोतुमुद्यतमतिः परिणौमि भक्त्या॥

कैलासशैलशिखरे परिनिर्वृतोऽसौ शैलेशिभावमुपपद्य वृषो महात्मा।
चम्पापुरे च वसुपूज्यसुतः सुधीमान् सिद्धिं परामुपगतो गतरागबन्धः॥

यत् प्रार्थ्यते शिवमयं विबुधेश्वराद्यैः पाखण्डिभिश्च परमार्थगवेषशीलैः।
नष्टाष्टकर्मसमये तदरिष्टनेमिः संप्राप्तवान् क्षितिधरे बृहदूर्जयन्ते॥ २२॥

पावापुरस्य बहिरुन्नतभूमिदेशे पद्मोत्पलाकुलवतां सरसां हि मध्ये।
श्रीवर्धमानजिनदेव इति प्रतीतो निर्वाणमाप भगवान् प्रविधूतपाप्मा॥२४॥

शेषास्तु ते जिनवरा जितमोहमल्ला ज्ञानार्कभूरिकिरणैरवभास्य लोकान्।
स्थानं परं निरवधारितसौख्यनिष्ठं सम्मेदपर्वततले समवापुरीशाः॥ २५॥

आद्यश्चतुर्दशदिनैर्विनिवृत्तयोगः षष्ठेन निष्ठितकृतिर्जिनवर्धमानः।
शेषा विधूतघनकर्मनिबद्धपाशा मासेन ते यतिवरास्त्वभवन् वियोगाः॥

माल्यानि वाक्स्तुतिमयैः कुसुमैः सुदृब्धान्यादाय मानसकरैरभितः किरन्तः।
पर्येम आदृतियुता भगवन्निषद्याः संप्रार्थिता वयमिमे परमां गतिं ताः॥२७॥

शत्रुंजये नगवरे दमितारिपक्षाः पण्डोः सुताः परमनिर्वृतिमभ्युपेताः।
तुङ्ग्यां तु संगरहितो बलभद्रनामा नद्यास्तटे जितरिपुश्च सुवर्णभद्रः॥२८॥

द्रोणीमति प्रबलकुण्डलमेढ्रके च वैभारपर्वततले वरसिद्धकूटे।
ऋष्यद्रिके च विपुलाद्रिबलाहके च विन्ध्ये च पोदनपुरे वृषदीपके च॥२९

सह्याचले च हिमवत्यपि सुप्रतिष्ठे दण्डात्मके गजपथे पृथुसारयष्टौ।
ये साधवो हतमलाः सुगतिं प्रयाताः स्थानानि तानि जगति प्रथितान्यभूवन्

इक्षोर्विकाररसपृक्तगुणेनलोके पिष्टोऽधिकं मधुरतामुपयाति यद्वत् ।
तद्वच्च पुण्यपुरुषैरुषितानि नित्यं स्थानानि तानि जगतामिह पावनानि ॥
इत्यर्हतां शमवतां च महामुनीनां प्रोक्ता मयात्र परिनिर्वृतिभूमिदेशाः ।
ते मे जिना जितभया मुनयश्च शान्ता
दिश्यासुराशु सुगतिं निरवद्यसौख्याम् ॥ ३२ ॥

श्लो० २९ टीका (प्रभाचंद्र)— प्रवलकुंडलमेंढ्के च प्रवलकुंडलेः प्रवलमेंढ्के च । ऋष्यद्रिके श्रमणगिरौ ।

---

४. रविषेण

दिगम्बर जैन कथासाहित्य के प्राचीनतम लेखकों में रविषेण की गणना होती है । वे लक्ष्मणसेन के शिष्य थे तथा उन का पद्मचरित (प्रसिद्ध नाम पद्मपुराण) वीरसंवत् १२०४=सन ६७७ में पूरा हुआ था । वैसे पद्मचरित की कथावस्तु बहुत विशाल है—उस में कितने ही नगरों, नदियों, पर्वतों तथा अरण्यों के वर्णन एवं उल्लेख हैं । तथापि इन में जो महत्त्वपूर्ण तीर्थसंबंधी उल्लेख हैं उन्हें आगे उद्धृत किया जाता है । इन का सारांश इस प्रकार है—

सर्ग ४ श्लो. १३० कैलाश पर्वत—वृषभदेव का मुक्तिस्थान; सर्ग ५ श्लो. २४६ सम्मेद पर्वत—अजितनाथ का मुक्तिस्थान; सर्ग २१ श्लो. ४३—४५ सम्मेद पर्वत—मुनिसुव्रत का मुक्तिस्थान; सर्ग ४० श्लो. २७—४५ वंशगिरि—यहां रामचन्द्र ने हजारों जिनमंदिर बनवाये थे जो विशाल, ऊँचे, प्रमाणबद्ध, गवाक्षों तथा अट्टालिकाओं से शोभित, महाद्वार, तोरण तथा प्राकारों से युक्त, घण्टा और शुभ्र पताकाओं से विभूषित और नानाविध वाद्यों से मुखरित थे । इस निर्माणकार्य के कारण इस पर्वत को रामगिरि यह नाम प्राप्त हुआ था ।; सर्ग ८० श्लो. १२६—१४० मेघरव तीर्थ—विन्ध्य पर्वत के महावन में इन्द्रजित तथा मेघनाद का मुक्तिस्थान, तूणीगति महापर्वत—जम्बुमाली के स्वर्गवास का स्थान, पिठरक्षत तीर्थ—नर्मदा के तीर पर कुम्भकर्ण का मुक्तिस्थान;

सर्ग ९८ श्लो. १४१-१४८-इस में रामचन्द्र द्वारा सीता को तीर्थंकरों के जन्मस्थान बताये गये हैं जिन की वे वन्दना करना चाहते थे–अयोध्या में ऋषभादि जिनेन्द्र, काम्पिल्य में विमलनाथ, रत्नपुर में धर्मनाथ, श्रावस्ती में संभवनाथ, चम्पा में वासुपूज्य, काकन्दी में पुष्पदन्त, कौशाम्बी में पद्मप्रभ, चन्द्रपुरी में चन्द्रप्रभ, भद्रिका में शीतलनाथ, मिथिला में मल्लिनाथ, वाराणसी में सुपार्श्वनाथ, सिंहपुर में श्रेयांस, हास्तिनपुरमें शान्तिनाथ, कुन्थुनाथ तथा अरनाथ एवं कुशाग्रनगर में (राजगृह में) मुनिसुव्रत के जन्मकल्याणतीर्थ होने का इस में वर्णन है।; सर्ग ११२ श्लो. ४४-४५ निर्वाणगिरि–श्रीशैल (हनूमान्) का मुक्तिस्थान। सर्ग २० में तीर्थंकर, चक्रवर्ती, नारायण और प्रतिनारायणों के बारे में जन्मस्थानादि का विवरण दिया है। विस्तारभय से यह उद्धृत नही किया है। इस में तीर्थंकरों के उपर्युक्त जन्मस्थानों के अतिरिक्त नमिनाथ का मिथिला में, नेमिनाथ का शौरिपुर में, पार्श्वनाथ का वाराणसी में तथा महावीर का कुण्डपुर में जन्म हुआ था ऐसा वर्णन है।

यहां यह सूचित करना जरूरी है कि पद्मचरित की रचना विमलसूरि के प्राकृत पउमचरिय के आधार पर हुई है जिस की रचना पहली—दूसरी सदी में हुई थी (पं. प्रेमीजी–जैन साहित्य और इतिहास पृ. ८७-१०८)।

पद्मपुराण

सर्ग ४

अथासौ लोकमुत्तार्य प्रभूतं भवसागरात्।
कैलासशिखरे प्राप निर्वृतिं नाभिनन्दनः॥ १३०॥

सर्ग ५

प्रवृत्याजितनाथोऽपि भव्यानां मुक्तिगामिनाम्।
पन्थानं प्राप सम्मेदे निजां प्रकृतिमात्मनः॥ २४६॥

सर्ग २१

मुनिसुव्रतनाथोऽपि धर्मतीर्थप्रवर्तनम्।
कृत्वा सुरासुरैर्नम्रैः स्तूयमानः प्रमोदिभिः॥ ४२॥

गणनाथैर्महासत्त्वैगणपालनकारिभिः ।
अन्यैश्च साधुभिर्युक्तो विहृत्य वसुधातलम् ॥ ४४ ॥
सम्मेदगिरिमूर्धानं समारुह्य चतुर्विधम् ।
विधूय कर्म संप्राप लोकचूडामणिस्थितम् ॥ ४५ ॥

सर्ग ४०

तत्र वंशगिरौ राजन् रामेण जगदिन्दुना ।
निर्मापितानि चैत्यानि जिनेशानां सहस्रशः ॥ २७ ॥
महावष्टम्भसुस्तम्भा युक्तविस्तारतुंगताः ।
गवाक्षहर्म्यवलभीप्रभृत्याकारशोभिताः ॥ २८ ॥
सतोरणमहाद्वाराः सशालाः परिखान्विताः ।
सितचारुपताकाढ्या बृहद्घण्टारवाञ्चिताः ॥ २९ ॥
मृदङ्गवंशमुरजसंगीतोत्तमनिस्वनाः ।
झर्झरैरानकैः शङ्खभेरीभिश्च महारवाः ॥ ३० ॥
सततारब्धनिःशेषरम्यवस्तुमहोत्सवाः ।
विरेजुस्तत्र रामीया जिनप्रासादपङ्क्तयः ॥३१॥

रामेण यस्मात् परमाणि तस्मिन्
जैनानि वेश्मानि विधापितानि ।
निर्नष्टवंशाद्रिवचाः स तस्माद्
रविप्रभो रामगिरिः प्रसिद्धः ॥ ४५ ॥

सर्ग ८०

असाविन्द्रजितो योगी भगवान् सर्वपापहा ।
विद्यालब्धिसुसंपन्नो विजहार महीतलम् ॥ १२६ ॥
वैराग्यानिलयुक्तेन सम्यक्त्वारणिजन्मना ।
कर्मकक्षं महाघोरमदहद् ध्यानवह्निना ॥ १२७ ॥
मेघवाहानगारोऽपि विषयेन्धनपावकः ।
केवलज्ञानतः प्राप्तः स्वभावं जीवगोचरम् ॥ १२८ ॥
तयोरनन्तरं सम्यग्दर्शनज्ञानचेष्टितः ।
शुक्ललेश्याविशुद्धात्मा कलशश्रवणो मुनिः ॥ १२९ ॥
पश्यन् लोकमलोकं च केवलेन तथाविधम् ।
विरजस्कः परिप्राप्तः परमं पदमच्युतम् ॥ १३० ॥

सुरासुरजनाधीशैरुद्गीतोत्तमकीर्तयः ।
शुद्धशीलधरा दीप्ताः प्रणताश्च महर्षयः ॥ १३१ ॥

गोष्पदीकृतनिःशेषगहनज्ञेयतेजसः ।
संसारक्लेशदुर्मोचजालबन्धननिर्गताः ॥ १३२ ॥

अपुनःपतनस्थानसंप्राप्तिस्वार्थसंगताः ।
उपमानविनिर्मुक्तनिष्प्रत्यूहसुखात्मकाः ॥ १३३ ॥

एतेऽन्ये च महात्मानः सिद्धा निर्धूतशात्रवः ।
दिशन्तु बोधिमारोग्यं श्रोतॄणां जिनशासने ॥ १३४ ॥

यशसा परिवीतान्यद्यत्वेऽपि परमात्मनाम् ।
स्थानानि तानि दृश्यन्ते दृश्यन्ते साधवो न ते ॥ १३५ ॥

विन्ध्यारण्यमहास्थल्यां सार्धमिन्द्रजिता यतः ।
मेघनादः स्थितस्तेन तीर्थं मेघरवं स्मृतम् ॥ १३६ ॥

तूणीगतिमहाशैले नानाद्रुमलताकुले ।
नानापक्षिगणाकीर्णे नानाश्वापदसेविते ॥ १३७ ॥

परिप्राप्तोऽहमिन्द्रत्वं जम्बुमाली महाबलः ।
अहिंसादिगुणाढ्यस्य किमु धर्मस्य दुष्करम् ॥ १३८ ॥

ऐरावतेऽवतीर्यासौ महाव्रतविभूषणः ।
कैवल्यतेजसा युक्तः सिद्धस्थानं गमिष्यति ॥ १३९ ॥

अरजा निस्तमो योगी कुम्भकर्णो महामुनिः ।
निर्वृतो नर्मदातीरे तत् तीर्थं पिठरक्षतम् ॥ १४० ॥

सर्ग ९८

ततो भर्ता मया सार्धमुद्युक्तश्चैत्यवन्दने ।
जिनेन्द्रातिशयस्थानेष्वत्यन्तविभवान्वितः ॥ १४१ ॥

अगदीत् प्रथमं सीते गत्वाष्टापदपर्वतम् ।
ऋषभं भुवनानन्दं प्रणंस्यावः कृतार्चनौ ॥ १४२ ॥

अस्यां ततो विनीतायां जन्मभूमिप्रतिष्ठिताः ।
प्रतिमा ऋषभादीनां नमस्यावः सुसंपदा ॥ १४३ ॥

काम्पिल्ये विमलं नन्तुं यास्यावो भावतस्तदा ।
धर्मं रत्नपुरे चैव धर्मसद्भावदेशिनम् ॥ १४४ ॥

श्रावस्त्यां शम्भवं शुभ्रं चम्पायां वासुपूज्यकम् ।
पुष्पदन्तं च काकन्द्यां कौशाम्ब्यां पद्मतेजसम् ॥ १४५ ॥

चन्द्राभं चन्द्रपुर्यां च शीतलं भद्रिकावनौ ।
मिथिलायां ततो मल्लिं नमस्कृत्य जिनेश्वरम् ॥ १४६ ॥
वाराणस्यां सुपार्श्वं च श्रेयांसं सिंहनिःस्वने ।
शान्तिं कुन्थुमरं चैव पुरे हास्तिननामनि ॥ १४७ ॥
कुशाग्रनगरे देवि सर्वज्ञं मुनिसुव्रतम् ।
धर्मचक्रमिदं यस्य ज्वलत्यद्यापि सूज्ज्वलम् ॥ १४८ ॥

सर्ग ११३

धरणीधरैः प्रहृष्टैरुपगीतो वन्दितोऽप्सरोभिश्च ।
अमलं समयविधानं सर्वज्ञोक्तं समाचर्य ॥ ४४ ॥
निर्दग्धमोहनिचयो जैनेन्द्रं प्राप्य पुष्कलं ज्ञानविधिम् ।
निर्वाणगिरावसिधत् श्रीशैलः श्रमणसत्तमः पुरुपरविः ॥ ४५ ॥

---

५. जटासिंहनन्दि

जटिल, जटाचार्य अथवा जटासिंहनन्दि का वराङ्गचरित जैनकथा-साहित्य के प्राचीनतम ग्रन्थों में से एक है। इस की रचना सातवीं सदी में हुई थी। इस के सर्ग २७ में तीर्थंकरों के जन्मनगरों और निर्वाण-स्थानों के नाम प्राप्त होते हैं जो रविषेण के पद्मचरित (सर्ग २०) के अनुसार ही हैं। सर्ग ३१ में मणिमान् पर्वतपर वरदत्त (नेमिनाथ के गणधर) की निर्वाणभूमि का उल्लेख है। इसी पर्वतपर वराङ्ग का स्वर्ग-वास हुआ था। सर्ग २१ के उल्लेखानुसार मणिमान् पर्वत सरस्वती नदी और आनर्तपुर के समीप था। वराङ्गचरित के इन उल्लेखों के उद्धरण आगे दिये जाते हैं। माणिकचन्द्र ग्रन्थमाला में प्रकाशित इस ग्रन्थ की प्रस्तावना में डॉ. उपाध्ये ने जटासिंहनन्दि के बारे में विस्तृत जानकारी दी है।

वराङ्गचरित

सर्ग २१

सरस्वती नाम नदी च विश्रुता मणिप्रभावान्मणिमान् महागिरिः ।
तयोर्नदीपर्वतयोर्यदन्तरे बभूव चानर्तपुरं पुरातनम् ॥ २८ ॥

सर्ग २७

आद्यो जिनेन्द्रस्त्वजितो जिनश्च अनन्तजिच्चाप्यभिनन्दनश्च ।
सुरेन्द्रवन्द्यः सुमतिर्महात्मा साकेतपुर्यां किल पञ्च जाताः ॥ ८१ ॥
कौशाम्बकश्चैव हि पद्मभासः श्रावस्तिकः स्याज्जिनसंभवश्च ॥
चन्द्रप्रभश्चन्द्रपुरे प्रसूतः श्रेयान् जिनेन्द्रः खलु सिंहपुर्याम् ॥ ८२ ॥
वाराणसौ तौ च सुपार्श्वपार्श्वौ काकन्दिकश्चापि हि पुष्पदन्तः ।
श्रीशीतलः खल्वथ भद्रपुर्यां चंपापुरे चैव हि वासुपूज्यः ॥ ८३ ॥
काम्पिल्यजातो विमलो मुनीन्द्रो धर्मस्तस्था रत्नपुरे प्रसूतः ।
श्रीसुव्रतो राजगृहे बभूव नमिश्च मल्लिर्मिथिलाप्रसूतौ ॥ ८४ ॥
अरिष्टनेमिः किल शौर्यपुर्यां वीरस्तथा कुण्डपुरे बभूव ।
अरश्च कुन्थुश्च तथैव शान्तिस्त्रयोऽपि ते नागपुरे प्रसूताः॥ ८५॥
कैलासशैले वृषभो महात्मा चंपापुरे चैव हि वासुपूज्यः ।
दशार्हनाथः पुनरूर्जयन्ते पावापुरे श्रीजिनवर्धमानः ॥ ९१ ॥
शेषा जिनेन्द्रास्तपसः प्रभावाद् विधूय कर्माणि पुरातनानि ।
धीराः परां निर्वृतिमभ्युपेताः संमेदशैलोपवनान्तरेषु ॥ ९२ ॥

सर्ग ३१

पुराणि राष्ट्राणि मटम्बखेटान् द्रोणीमुखान् खर्वडपत्तनानि ।
विहृत्य धीमानवसानकाले शनैः प्रपेदे मणिमत् तदेव ॥ ५५ ॥
तैः संयतैः सागरवृद्धिमुख्यैर्यथोक्तचारित्रतपःप्रभावैः ।
संन्यासतस्त्यक्तुमनाः शरीरं वराङ्गसाधुर्गिरिमारुरोह ॥ ५६ ॥
आरुह्य तं पर्वतराजमित्थं तपस्विभिः सार्धमुपात्तयोगैः ।
निर्वाणभूमौ वरदत्तनाम्नः प्रदक्षिणीकृत्य नमश्चकार ॥ ५७ ॥
परीषहारीनपरिश्रमेण जित्वा पुनर्वान्तकषायदोषः ।
विमुच्य देहं मुनिशुद्धलेश्य आराधनान्तं भगवान् जगाम ॥ १०८ ॥
यथैव वीरः प्रविहाय राज्यं तपश्च सत्संयममाचचार ।
तथैव निर्वाणफलावसानां लोकप्रतिष्ठां सुरलोकमूर्ध्नि ॥ १०९ ॥

---

६. जिनसेन

पुन्नाट संघ के आचार्य जिनसेन ने शक ७०५ = सन ७८३ में हरिवंशपुराण की रचता पूर्ण की। यह ग्रन्थ भी पद्मचरित के समान ही विशाल कथावस्तु पर आधारित है। इसके तीर्थसम्बन्धी प्रमुख उल्लेखों को आगे उद्धृत किया है। इन का सारांश इस प्रकार है– सर्ग ३ श्लो. ५१–५९ राजगृह–महावीर की समवसरणभूमि, इस के पूर्व में ऋषिगिरि दक्षिण में वैभारगिरि, नैऋत्य में विपुलगिरि, वायव्य में बलाहकगिरि तथा ईशान्य में पाण्डुकगिरि है, यहां वासुपूज्य को छोड कर शेष सभी तीर्थंकरों के समवसरण आये थे, अनेक भव्य संघ यात्रा करते हैं, यह पंचशैलपुर ही मुनिसुव्रत तीर्थंकर का जन्मस्थान है।

सर्ग १२ श्लो. ८०–८१ कैलासपर्वत–ऋषभदेव की मुक्ति। सर्ग १६ श्लो. ७५ सम्मेदपर्वत–मुनिसुव्रत का निर्वाण। सर्ग १८ श्लो. ११२–११९–राजगृह–श्रेष्ठी धनदत्त, उस के गुरु सुमन्दर तथा भद्रिलपुर के राजा मेघरथ दीर्घकाल तपस्या करने के बाद यहां मुक्त हुए थे।

सर्ग १९ श्लो.११४–११५ तथा सर्ग २२ श्लो.१–५ चम्पापुर-वसुदेव ने यहां के वासुपूज्यजिनमन्दिर का वन्दन किया था, यहां बडा मानस्तम्भ था, अष्टान्हिका उत्सव में लोग नगर के बाहर वासुपूज्यमूर्ति की पूजा करते थे। सर्ग ४६ श्लो. १७–२० रामगिरि–पाण्डवों ने इस का वन्दन किया था, यहां राम–लक्ष्मण ने सैंकडो जिनमन्दिर बनवाये थे। सर्ग ५० श्लो. ५७–६० देवावतारतीर्थ–पूर्वमालव में है, यहां लोहजंघने अरण्य में तिलकानन्द और नन्दक नाम के मासोपवासी मुनियों को आहार दिया था तब उस का देवों ने अभिनन्दन किया था। लोहजंघ उस समय जरासन्ध के साथ सन्धि करने के लिए जा रहा था।

सर्ग ५३ श्लो. ३२–३४ कोटिशिला– अनेक कोटि मुनियों का मुक्तिस्थान, इसे कृष्ण ने चार अंगुल ऊंचा उठाया था। सर्ग ६३–तुंगीगिरि–यहां बलभद्र ने कृष्ण का दाहसंस्कार किया तथा बाद में उन का स्वर्गवास भी वहीं हुआ। सर्ग ६५ श्लो. १–३३ ऊर्जयन्त–नेमि-

नाथ, दशार्ह, शम्ब, प्रद्युम्न आदि का निर्वाण; शत्रुंजय-तीन पाण्डवों का निर्वाण। सर्ग ६६-श्लो. १५-१७ पावापुर-महावीर का निर्वाण। सर्ग ६६ श्लो. ४४ ऊर्जयन्त-यहां की देवी सिंहवाहिनी (अम्बिका) विघ्न दूर करती है। इन उल्लेखों के अतिरिक्त आचार्य ने सर्ग ६० में तीर्थंकरों के जन्मस्थान बतलाये हैं वे पद्मपुराण पर्व २० के समान ही हैं।

हरिवंशपुराण

सर्ग ३

युक्तः प्राप जिनो जैन्या जगद्विस्मयनीयया।
लक्ष्म्या लक्ष्मीगृहं राजद्गृहं राजगृहं पुरम् ॥ ५१ ॥
पञ्चशैलपुरं पूतं मुनिसुव्रतजन्मना।
यत्परध्वजिनीदुर्गं पञ्चशैलपरिष्कृतम् ॥ ५२ ॥
ऋषिपूर्वो गिरिस्तत्र चतुरस्रः सनिर्झरः।
दिग्गजेन्द्र इवेन्द्रस्य ककुभं भूषयत्यलम् ॥ ५३ ॥
वैभारो दक्षिणामाशां त्रिकोणाकृतिराश्रितः।
दक्षिणापरदिग्मध्यं विपुलश्च तदाकृतिः ॥ ५४ ॥
सज्यचापाकृतिस्तिस्रो दिशो व्याप्य वलाहकः।
शोभते पाण्डुको वृत्तः पूर्वोत्तरदिगन्तरे ॥ ५५ ॥
फलपुष्पभरानम्रलतापादपशोभिताः।
पतन्निर्झरसंघातहारिणो गिरयस्तु ते ॥ ५६ ॥
वासुपूज्यजिनाधीशादितरेषां जिनेशिनाम्।
सर्वेषां समवस्थानैः पावनोरुवनान्तराः ॥ ५७ ॥
तीर्थयात्रागतानेकभव्यसंघनिषेवितैः।
नानातिशयसंबद्धैः सिद्धक्षेत्रैः पवित्रिताः ॥ ५८ ॥
तत्र तस्थौ जिनः शैले विपुले विपुलेशितः।
शतक्रतुकृताशेषसमवस्थितिसंस्थितौ ॥ ५९ ॥

सर्ग १२

इत्थं कृत्वा समर्थं भवजलधिजलोत्तारणे भावतीर्थं
कल्पान्तस्थायि भूयस्त्रिभुवनहितकृत् क्षेत्रतीर्थं स कर्तुम्।
स्वाभाव्यादारुरोह श्रमणगणसुरव्रातसंपूज्यपादः
कैलासाख्यं महीध्रं निषधमिव वृषादित्य इद्धप्रभाढ्यः ॥ ८० ॥

तस्मिन्नद्रौ जिनेन्द्रः स्फटिकमणिशिलाजालरम्ये निषण्णो
योगानां संनिरोधं सह दशभिरथो योगिनां यैः सहस्रैः ।
कृत्वा कृत्वान्तमन्ते चतुरपरमहाकर्मभेदस्य शर्म-
स्थानं स्थानं स सैद्धं समगमदमलस्रग्धराभ्यर्च्यमानः ॥ ८१ ॥

सर्ग १६

अन्ते स संमदविधायिवनान्तकान्तं सम्मेदशैलमधिरुह्य निरस्तबन्धः ।
बन्धान्तकृन्मुनिसहस्रयुतो जगाम मोक्षं महामुनिपतिर्मुनिसुव्रतेशः ॥७५॥

सर्ग १८

सद्भद्रिलपुरे राजा नाम्ना मेघरथोऽभवत् ।
भार्या तस्य सुभद्राख्या तयोर्दृढरथः सुतः ॥ ११२ ॥
इभ्यो राजसमस्तस्य भार्या नन्दयशाः सुते ।
सुदर्शना च सुज्येष्ठा धनदत्तस्य सूनवः ॥ ११३ ॥
धनश्च जिनदेवौ च पालान्तास्ते त्रयो मताः ।
अर्हद्दासः प्रसिद्धश्च जिनदासस्तथा परः ॥ ११४ ॥
अर्हद्दत्त इति ख्यातो जिनदत्तः परः स्मृतः ।
प्रियमित्रः प्रतीतोऽन्यस्तथा धर्मरुचिर्ध्वनिः ॥ ११५ ॥
सुमन्दरगुरोः पार्श्वे प्रवव्राज नरेश्वरः ।
धनदत्तोऽपि पुत्रैस्तैर्नवभिः सह दीक्षितः ॥ ११६ ॥
सुदर्शनार्यिकापार्श्वे सुभद्रा च सुदर्शना ।
सुज्येष्ठा च तपो ज्येष्ठं सहैव प्रतिपेदिरे ॥ ११७ ॥
धनदत्तो गुरुश्चैव वाराणस्यां नृपस्तथा ।
केवलज्ञानमुत्पाद्य विहृता वसुधां क्रमात् ॥ ११८ ॥
सप्तभिः पञ्चभिः पूज्या वर्षैर्द्वादशभिश्च ते ।
अन्ते सिद्धशिलारूढाः सिद्धा राजगृहे पुरे ॥ ११९ ॥

सर्ग १९

बाह्योद्यानेऽथ चम्पायाः पतितोऽम्बुजसंगमे ।
सरस्यम्बुरुहच्छन्ने तदुत्तीर्य तटीमितः ॥ ११४ ॥
मानस्तम्भादिसंलक्ष्यं वासुपूज्यजिनालयम् ।
परीत्य तत्र वन्दित्वा दीपिकोज्ज्वलिते ऽवसत् ॥ ११५ ॥

सर्ग २२

चम्पायां रममाणस्य सह गन्धर्वसेनया।
वसुदेवस्य संप्राप्तः फाल्गुनाष्टदिनोत्सवः॥ १॥
देवा नन्दीश्वरं द्वीपं खेचरा मन्दरादिकम्।
यान्ति वन्दारवः स्थानमानन्दं दधतस्तदा॥ २॥
जन्मनिष्क्रमणज्ञाननिर्वाणप्राप्तितोऽर्हतः।
वासुपूजस्य पूज्यां तां चम्पां प्रापुः स्फुरद्गृहाम्॥ ३॥
आगच्छन्ति तदा कर्तुं जिनेन्द्रमहिमोत्सवम्।
सर्वतः पुत्रदाराद्यैर्भूचराश्च नभश्चराः॥ ४॥
चम्पावासी जनः सर्वो निश्चक्राम सराजकः।
प्रतिमां वासुपूजस्य पूज्यां पूजयितुं वहिः॥ ५॥

सर्ग ४६

विश्रम्य तत्र ते सौम्या दिनानि कतिचित् सुखम्।
याताः क्रमेण पुंनागा विषयं कोशलाभिधम्॥ १७॥
स्थित्वा तत्रापि सौख्येन मासान् कतिपयानपि।
प्राप्ता रामगिरिं प्राग् यो रामलक्ष्मणसेवितः॥ १८॥
चैत्यालया जिनेन्द्राणां यत्र चन्द्रार्कभासुराः।
कारिता रामदेवेन संभान्ति शतशो गिरौ॥ १९॥
नानादेशागतैर्भव्यैर्वन्द्यन्ते या दिने दिने।
वन्दितास्ता जिनेन्द्राणां प्रतिमाः पाण्डुनन्दनैः॥ २०॥

सर्ग ५०

(लोहजंघः) स दक्षः शौर्यसंपन्नः कुमारो नीतिलोचनः।
जगाम निजसैन्येन जरासन्धेन संधये॥ ५७॥
पूर्वमालवमासाद्य कृतसैन्यनिवेशनः।
प्राप्तौ कान्तारभिक्षार्थं कान्तारे सार्थयोगिनौ॥ ५८॥
मासोपवासिनौ दृष्ट्वा तिलकानन्दनन्दकौ।
प्रतिगृह्यान्नपानाद्यैः पञ्चाश्चर्याणि लब्धवान्॥ ५९॥
तीर्थं देवावताराख्यं ततः प्रभृति भूतले।
भूतं भूतसहस्राणां पापोपशमकारणम्॥ ६०॥

सर्ग ५३

वर्षैरष्टभिरिष्टार्थैः सेवमानो नु वासरम्।
जितजेयो ययौ कृष्णः स कोटिकशिलां प्रति॥ ३२॥

यतस्तस्यामुदारायामनेका ऋषिकोटयः ।
सिद्धास्ततः प्रसिद्धात्र लोके कोटिशिला शिला ॥ ३३ ॥
शिलायां तत्र कृत्वादौ पवित्रायां बलिक्रियाम् ।
दोर्भ्यामुत्क्षिपति स्मासौ विष्णुस्तां चतुरङ्गुलम् ॥ ३४ ॥

सर्ग ६३

पाण्डवैः सह जरासुतान्वितैः तुङ्गयभिख्यगिरिमस्तके ततः ।
संविधाय हरिदेहसंस्क्रियां जारसेयसुवितीर्णराज्यकः ॥ ७२ ॥
शृङ्गमेवमचलस्य तस्य तैः संगतैः सवितते ततः श्रितः ।
संगहानकृतनिश्चयो बलो भङ्गुरं समधिगम्य जीवितम् ॥ ७३ ॥

सर्ग ६५

अथ सर्वामराकीर्णस्तीर्थकृत् कृतदेशनः ।
उत्तरापथतो देशं सुराष्ट्रमभितो ययौ ॥ १ ॥
तत्रोर्जयन्तमन्तेऽसावन्तकल्याणभूतिभाक् ।
आरुरोह स्वभावेन नृसुरासुरसेवितः ॥ ४ ॥
अघातिकर्मणामन्तं ततो योगनिरोधकृत् ।
कृत्वानेकशतैः सिद्धिं जिनेन्द्रो मुनिभिर्ययौ ॥ १० ॥
ऊर्जयन्तगिरौ वज्री वज्रेणालिख्य पावनम् ।
लोके सिद्धिशिलां चक्रे जिनलक्षणयुक्तिभिः ॥ १४ ॥
दशार्हादयो मुनयः षट्सहोदरसंयुताः ।
सिद्धिं प्राप्तास्तथान्येऽपि शम्बप्रद्युम्नपूर्वकाः ॥ १६ ॥
ज्ञात्वा भगवतः सिद्धिं पञ्चपाण्डवसाधवः ।
शत्रुञ्जयगिरौ धीराः प्रतिमायोगिनः स्थिताः ॥ १८ ॥
शुक्लध्यानसमाविष्टा भीमार्जुनयुधिष्ठिराः ।
कृत्वाष्टविधकर्मान्तं मोक्षं जग्मुस्त्रयोऽक्षयम् ॥ २२ ॥
तुङ्गिकाशिखरारूढो बलदेवोऽपि दुष्करम् ।
तपो नानाविधं चक्रे भवचक्रक्षयोद्यतः ॥ २६ ॥
एकं वर्षशतं कृत्वा तपो हलधरो मुनिः ।
समाराध्य परिप्राप्तो ब्रह्मलोके सुरेशताम् ॥ ३३ ॥

सर्ग ६६

जिनेन्द्रवीरोऽपि विबोध्य संततं समन्ततो भव्यसमूहसंततिम् ।
प्रपद्य पावानगरीं गरीयसीं मनोहरोद्यानवने तदीयके ॥ १५ ॥

अघातिकर्माणि निरुद्धयोगको विधूय घातीन् घनवद् विबन्धनः ।
विबन्धनस्थानमवाप शंकरो निरन्तरायोरुसुखानुबन्धनम् ॥ १७ ॥

गृहीतचक्रा प्रतिचक्रदेवता तथोर्जयन्तालयसिंहवाहिनी ।
शिवाय यस्मिन्निह संनिधीयते क्व तत्र विघ्नाः प्रभवन्ति शासने ॥४४॥

---

७. गुणभद्र

आचार्य जिनसेन के शिष्य आ. गुणभद्रने नौवीं सदी के उत्तरार्ध में उत्तरपुराण की रचना की। उन के गुरु द्वारा प्रारम्भ किये गये महापुराण का यह उत्तरभाग है तथा इस में वृषभदेव और भरत को छोड शेष सभी पुण्यपुरुषों की कथाएं संक्षेप में दी हुई हैं। तीर्थक्षेत्रों की दृष्टि से इस पुराण के जो अंश आगे उद्धृत किये हैं उन का सार इस प्रकार है— पर्व ४८ श्लो. १३४-१४१ दूसरे चक्रवर्ती सगर तथा उन के पुत्रों का सम्मेदशिखर से निर्वाण हुआ, सगर का प्रपौत्र भगीरथ कैलास पर्वत के समीप गंगा के किनारे तपस्या कर रहा था तब देवों ने उस के चरणों का प्रक्षालन कर पूजा की, तभी से गंगा को तीर्थ का महत्त्व प्राप्त हुआ, भगीरथ का निर्वाण वहीं गंगा के किनारे हुआ। पर्वत ५८ श्लो. ५०-५३ वासुपूज्य तीर्थंकर अग्रमन्दर पर्वत से मुक्त हुए जो चम्पा के समीप राजतमौलिका नदी के किनारे था। पर्व ६२ श्लो. २८०–२८२ रथनूपुर के राजा (अमिततेज) ने विद्याधर (अशनिघोष) का युद्ध में पराजय किया तब अशनिघोष प्राणभय से भागते हुए गजध्वज पर्वत के समीप विजय जिन के समवसरण में पहुंचा, समवरण देख कर दोनों वैरमुक्त हुए। पर्व ६८ श्लो. ६४३–४५ लक्ष्मण ने पीटगिरि पर स्थित कोटिशिला को उठाया, वहीं उस का राज्याभिषेक हुआ। पर्व ६८ श्लो. ७१६–७२० रामचंद्र, हनुमान आदि का सम्मेदशिखर से निर्वाण हुआ। पर्व ७२ श्लो. १८९–१९१ जाम्बवती का पुत्र (शम्बुकुमार), अनिरुद्ध तथा प्रद्युम्न ऊर्जयन्त पर्वत के पहले तीन शिखरों से मुक्त हुए। पर्व ७२ श्लो. २६६–२७० शत्रुंजय पर्वत से तीन पाण्डव मुक्त हुए। पर्व ७२ श्लो. २७१–७४ नेमिनाथ ऊर्जयन्त पर्वत से मुक्त हुए। पर्व ७५ श्लो.

६८५–८७ जीवंधर का निर्वाण विपुल पर्वतसे हुआ। पर्व ७६ श्लो. ५०८–१२ महावीर का निर्वाण पावापुर से हुआ। पर्व ७६ श्लो. ५१५–१७ गौतम गणधर का निर्वाण विपुलपर्वत से हुआ। इन के अतिरिक्त सम्मेदशिखर से वीस तीर्थंकरों के निर्वाण के उल्लेख–जो हमने विस्तार भय से उद्धृत नही किये हैं–इस प्रकार हैं–अजित पर्व ४८ श्लो. ५१–५३, संभव प. ४९ श्लो. ५५–५८, अभिनंदन प. ५० श्लो. ६५–६८, सुमति प. ५१ श्लो. ८४–८५, पद्मप्रभ प. ५२ श्लो. ६६–६९, सुपार्श्व प. ५३ श्लो. ५२–५५, चन्द्रप्रभ प. ५४ श्लो. २६९–७१, पुष्पदन्त प. ५५ श्लो. ५८–५९, शीतल प. ५६ श्लो. ५७-५९, श्रेयांस प. ५७ श्लो. ६०-६२, विमल प. ५९ श्लो. ५४-५६, अनंत प. ६० श्लो. ४३-४५, धर्म प. ६१ श्लो. ५०-५२, शांति प. ६३ श्लो. ६३ श्लो. ४९६-९९, कुंथु प. ६४ श्लो. ५१-५३ अर प. ६५ श्लो. ४५-४६, मल्लि प. ६६ श्लो. ६१-६२ मुनिसुव्रत प. ६७ श्लो. ५५-५६, नमि पर्व ६९ श्लो. ६७-६८, पार्श्व प. ७३ श्लो. १५६-५८। तीर्थंकरों के जन्मस्थानों के उल्लेख भी विस्तारभय से उद्धृत नही किये हैं वे इस प्रकार हैं—अयोध्या प. ४८ श्लो. १९, प. ५० श्लो. १६, प. ५१ श्लो. १९ व प. ६० श्लो. १३, श्रावस्ती प. ४९ श्लो. १४, कौशाम्बी प. ५२ श्लो. १८, वाराणसी प. ५३ श्लो. १८ व प. ७३ श्लो. ७४, चन्द्रपुर प. ५४ श्लो. १६३, काकन्दी प. ५५ श्लो. २३, भद्रपुर प. ५६ श्लो. २३, सिंहपुर प. ५७ श्लो. १७, चम्पा प. ५८ श्लो. १७, काम्पिल्य प. ५९ श्लो. १४, रत्नपुर प. ६१ श्लो. १३, हस्तिनापुर प. ६४ श्लो. १२, प. ६५ श्लो. १४, पर्व ६३ श्लो. ३४३, मिथिला प. ६६ श्लो. २०, प. ६९ श्लो. १८, राजगृह प. ६७ श्लो. २०, द्वारावती प. ७१ श्लो. १८, कुण्डपुर प. ७४ श्लो. २५१।

उत्तरपुराण पर्व ४८

प्रकटीकृततन्मायो मणिकेतुश्च तान् मुनीन्।
[illegible] ॥ १३४ ॥

कोऽपराधस्तवेदं नस्त्वया प्रियमनुष्ठितम् ।
हितं चेति प्रसन्नोक्त्या ते तदा तमसान्त्वयन् ॥ १३५ ॥
सोऽपि संतुष्य सिद्धार्थो देवो दिवमुपागमत् ।
परार्थसाधनं प्रायो ज्यायसां परितुष्टये ॥ १३६ ॥
सर्वे ते सुचिरं कृत्वा सत्तपो विधिवद् बुधाः ।
शुक्लध्यानेन सम्मेदे संप्रापन् परमं पदम् ॥ १३७ ॥
निर्वाणगमनं तेषां श्रुत्वा निर्विण्णमानसः ।
वरदत्ताय दत्त्वात्मराज्यलक्ष्मीं भगीरथः ॥ १३८ ॥
कैलाशपर्वते दीक्षां शिवगुप्तमहामुनेः ।
आदाय प्रतिमायोगधार्यभूत् स्वर्धुनीतटे ॥ १३९ ॥
सुरेन्द्रेणास्य दुग्धाब्धिपयोभिरभिषेचनात् ।
क्रमयोस्तत् प्रवाहस्य गङ्गायाः संगमे सति ॥ १४० ॥
तदाप्रभृति तीर्थत्वं गङ्गाप्यस्मिन्नुपागता ।
कृत्वोत्कृष्टं तपो गङ्गातटेऽसौ निर्वृतिं गतः ॥ १४१ ॥

पर्व ५८

स तैः सह विहृत्याखिलार्यक्षेत्राणि तर्पयन् ।
धर्मवृष्ट्या क्रमात् प्राप्य चम्पामब्दसहस्रकम् ॥ ५० ॥
स्थित्वात्र निष्क्रियो मासं नद्या राजतमौलिका- ।
संज्ञायाश्चित्तहारिण्याः पर्यन्तावनिवर्तिनि ॥ ५१ ॥
अग्रमन्दरशैलस्य सानुस्थानविभूषणे ।
वने मनोहरोद्याने पल्यंकासनमाश्रितः ॥ ५२ ॥
मासे भाद्रपदे ज्योत्स्ने चतुर्दश्यापराह्णके ।
विशाखायां ययौ मुक्तिं चतुर्नवतिसंयतैः ॥ ५३ ॥

पर्व ६२

तदा साधितविद्यः सन् रथनूपुरनायकः ।
एत्यादिशन्महाज्वालविद्यां तां सोढुमक्षमः ॥ २८० ॥
मासार्धकृतसंग्रामो विजयाख्यजिनेशिनः ।
नाभेयसीमनामाद्रिगजध्वजसमीपगाम् ॥ २८१ ॥
सभां भीत्वा खगेशोऽगात् कोपात् तेऽप्यनुयायिनः ।
मानस्तम्भं निरीक्ष्यासन् प्रसीदच्चित्तवृत्तयः ॥ २८२ ॥

पर्व ६८

ततोऽखिले पुरोऽगच्छत् स्फुरत्पीतगिरौ स्थितम् ।
तत्रैवाभिनवं प्राप्य सर्वतीर्थाम्बुसम्भृतैः ॥ ६४३ ॥

अष्टोत्तरसहस्रोरुसुवर्णकलशैर्मुदा ।
देवविद्याधराधीशैः स्वहस्तेन समुद्धृतैः ॥ ६४४ ॥

कोटिकाख्यशिलां तस्मिन्नुदक्षैप्त पथवानुजः ।
तन्माहात्म्यप्रहृष्टः सन् सिंहनादं व्यधाद् बलः ॥ ६४५ ॥

व्यतीतवति तद्ध्यानविशेषाद् हतघातिनः ॥
यतस्य केवलज्ञानमुदपाद्यर्कबिम्बवत् ॥ ७१६ ॥

समुद्गतैकच्छत्रादिप्रातिहार्यविभूषितः ।
अविच्छद् भव्यसस्यानां वृष्टिं धर्ममयीमसौ ॥ ७१७ ॥

एवं केवलबोधेन नीत्वा षड्शतवत्सरान् ।
फाल्गुने मासि पूर्वाह्णे शुक्लपक्षे चतुर्दशी- ॥ ७१८ ॥

दिने सम्मेदगिर्यग्रे तृतीयं शुक्लमाश्रितः ।
योगत्रितयमारुध्य समुच्छिन्नक्रियाश्रयः ॥ ७१९ ॥

निःशेषाघातिकर्मा सोऽष्टगुणर्द्धादिभिः ।
शरीरत्रितयापायादवापत् पदमुत्तमम् ॥ ७२० ॥

पर्व ७२

द्वैपायननिदानावसाने जाम्बवतीसुतः ।
अनिरुद्धश्च कामस्य सुतः संप्राप्य संयमम् ॥ १८९ ॥

प्रद्युम्नमुनिना सार्धमूर्जयन्ताचलाग्रिमम् ।
कूटत्रयं समारुह्य प्रतिमायोगधारिणः ॥ १९० ॥

शुक्लध्यानं समापूर्य त्रयस्ते घातिघातिनः ।
कैवल्यनवकं प्राप्य प्रापन्मुक्तिमथाव्ययाः ॥ १९१ ॥

निष्कर्ममलैर्मुक्त्वा मुक्तिलेप्यन्त्यसंशयम् ।
पञ्चापि पाण्डवा नेमिस्वामिना सहितर्द्धयः ॥ २६६ ॥

विहृत्य भाक्तिकाः काश्चित् जनाः संप्राप्य भूधरम् ।
शत्रुञ्जयं समादाय योगमातपनाश्रिताः ॥ २६७ ॥

तत्र कौरवनाथस्य भागिनेयो निरीक्ष्य तान् ।
क्रूरः कुर्यवरः स्मृत्वा स्वमातुलवधं क्रुधा ॥ २६८ ॥

आयसान्यग्नितप्तानि मुकुटादीनि पापभाक् ॥
तेषां विभूषणानीति शरीरेषु निधाय सः ॥ २६९ ॥
उपसर्गं व्यधात् तेषु कौन्तेयाः श्रेणिमाश्रिताः ।
शुक्लध्यानाग्निनिर्दग्धकर्मेन्धाः सिद्धिमाप्नुवन् ॥ २७० ॥
नकुलः सहदेवश्च पञ्चमानुत्तरं ययुः ॥
(नेमिः) भट्टारकोऽपि संप्रापदूर्जयन्तं धराधरम् ॥ २७१ ॥
आषाढमासे ज्योत्स्नायाः पक्षे चित्रासमागमे ।
शीतांशोः सप्तमीपूर्वरात्रे निर्वाणमाप्तवान् ॥ २७४ ॥

पर्व ७५

भवता परिपृष्टोऽयं जीवंधरमुनीश्वरः ।
महीयान् सुतपा राजन् संप्रति श्रुतकेवली ॥ ६८५ ॥
घातिकर्माणि विध्वस्य जनित्वा गृहकेवली ।
सार्धं विहृत्य तीर्थेशा तस्मिन्मुक्तिमधिष्ठिते ॥ ६८६ ॥
विपुलाद्रौ हताशेषकर्मा शर्माग्र्यमेष्यति ।
इष्टाष्टगुणसंपूर्णो निष्ठितात्मा निरञ्जनः ॥ ६८७ ॥

पर्व ७६

इत्यन्त्यतीर्थनाथोऽपि विहृत्य विषयान् बहून् ॥ ५०८ ॥
क्रमात् पावापुरं प्राप्य मनोहरवनान्तरे ।
बहूनां सरसां मध्ये महामणिशिलातले ॥ ५०९ ॥
स्थित्वा दिनद्वयं वीतविहारो वृद्धनिर्जरः ।
कृष्णकार्तिकपक्षस्य चतुर्दश्यां निशात्यये ॥ ५१० ॥
स्वातियोगे तृतीयेद्धशुक्लध्यानपरायणः ।
कृतत्रियोगसंरोधः समुच्छिन्नक्रियं श्रितः ॥ ५११ ॥
हताघातिचतुष्कः सन्नशरीरो गुणात्मकः ।
गन्ता मुनिसहस्रेण निर्वाणं सर्ववाञ्छितम् ॥ ५१२ ॥
वीरनिर्वृतिसंप्राप्तदिन एवास्तघातिकः ॥ ५१५ ॥
भविष्याम्यहमप्यद्य केवलज्ञानलोचनः ।
भव्यानां धर्मदेशेन विहृत्य विषयांस्ततः ॥ ५१६ ॥
गत्वा विपुलशब्दादिगिरौ प्राप्स्यामि निर्वृतिम् ॥

८. हरिषेण

पुन्नाट संघ के आचार्य भरतसेन के शिष्य आचार्य हरिषेण ने सं. ९८९ = सन ९३२ में वर्धमानपुर में बृहत्कथाकोश की रचना की। इस ग्रन्थ में १५७ कथाएं हैं। अधिकांश कथाएं धर्माराधना के उदाहरणों के रूप में हैं अतः उन का ऐतिहासिक मूल्य नही के बराबर है। तथापि जिन कथाओं में विशिष्टस्थानों के तीर्थरूप में प्रसिद्ध होने का वर्णन है अथवा विशिष्टस्थानों में विशिष्ट मुनियों के निर्वाण का वर्णन है उन के उपयुक्त अंश आगे उद्धृत किये जाते हैं। इन का सारांश इस प्रकार है— **कथा १६**—पूर्व देश में वरेन्द्र प्रदेश में देवकोट नगर के समीप कोटितीर्थ है, यहां सोमशर्मा मुनि का उपसर्ग दूर करने के लिए देवों ने कोटि रत्नों की वर्षा की थी। **कथा २९**—रेवा नदी के मध्य में पर्वत पर अमरेश्वरतीर्थ है, यहां एक अमर अर्थात देव ने अपने पूर्वजन्म के गुरु की पूजा की थी, यह देव पहले श्रीकृष्ण की सभा में जीवंधर नामक वैद्य था, बाद में वानर हुआ था तथा उस जन्ममें मुनिसे धर्मोपदेश पाने से देवगति में उत्पन्न हुआ था। **कथा ४६**—दिव्यपुरी के समीप गोवर्ज पर्वत से धनद मुनि का निर्वाण हुआ। **कथा ५६**—नील व महानील नामक विद्याधरों ने तेर नगर के समीप पार्श्वनाथ की मूर्ति से युक्त हजार स्तम्भोंवाली गुहा बनवाई थी, वह जल में डूब गई, तब कर्कण्ड महाराज ने उस गुहा को बन्द कर तीन नई गुहाएं वहां बनवाईं। **कथा ८०**—वराट प्रदेश के वैराकर के पश्चिम में विन्यानदी के किनारे विन्यातटपुर में वारत्र मुनि का निर्वाण हुआ, इन का मूल नाम शिवशर्मा था, वे श्रेणिक राजा के समकालीन थे। **कथा १०५**—खड्गवंश पर्वत से मेदज्जकेवली मुक्त हुए। **कथा ११८**-तुंगिका गिरि पर बलदेव का स्वर्गवास हुआ। **कथा १२६**—उज्जयिनी के समीप सुकुमाल मुनि का स्वर्गवास हुआ, वहां उन की पत्नियों ने शोक किया वह स्थान कलकलेश्वर नाम से प्रसिद्ध है और कापालिकों के अधिकार में है। **कथा १२९**—गन्धमादन मुनि पाण्डुकपर्वतपर मुक्त हुए। **कथा १३६**—कार्तिकस्वामी जब किष्किन्धपर्वतपर तप करते थे तब वहां का पानी रोग दूर करता था अतः वह तीर्थ प्रसिद्ध है। कार्तिक-

स्वामी का स्वर्गवास रोहेटकपुर में क्रौञ्च राजा के उपसर्ग के कारण हुआ था। कथा १३७—काकन्दी के राजा अभयघोष मुनि हो कर तपस्या करते हुए उज्जयिनी के समीप आये, वहां चण्डवेगद्वारा उपसर्ग होनेपर उन्हें केवल ज्ञान और मुक्ति की प्राप्ति हुई। कथा १३८—तामलिन्द्री नगर के समीप विद्युच्चर मुनि का निर्वाण हुआ। कथा १३९—लाट प्रदेशमें चन्द्रपुरी के समीप तोणिमत्पर्वतपर गुरुदत्त मुनि घोर उपसर्ग सहन कर केवलज्ञानी हुए। कलिंग प्रदेश में दन्तिपुर के समीप गजपर्वत पर गजकुमार मुनि मुक्त हुए। कथा १४१—यमुना के तीरपर शूरपुर के समीप धान्य मुनि मुक्त हुए। कथा १४३—वनवास प्रदेश में दिव्य-क्रौञ्चपुर के समीप चाणक्य मुनि मुक्त हुए। कथा १५२—मौण्डिल्य-गिरिपर सुकोशल और कीर्तिधर का निर्वाण हुआ। कथा १५३—शौरीपुर के निकट यमुनाके तीरपर अलसत्कुमार मुनि मुक्त हुए, इन का मूल नाम सुदृष्टि था।

हरिषेण और उन के कथाकोश के बारेमें विस्तृत विवरण डॉ. उपाध्ये ने कथाकोश की प्रस्तावना में दिया है। इस से ज्ञात होता है कि यह कथाकोश शिवार्यरचित भगवती आराधना के कतिपय गाथाओं के उदाहरणों के रूप में लिखा गया है। आराधना के जिन गाथाओं में उपर्युक्त क्षेत्रों का स्पष्ट निर्देश है उन्हें आगे उद्धृत किया जाता है। आराधना का समय यद्यपि निश्चित नही है तथापि वह सातवीं सदी के पहले का ग्रन्थ है इस में सन्देह नही।

(कथा १२६ गाथा १५३९)

भल्लुंकीए तिरत्तं खज्जंतो घोरवेदणट्टो वि।
आराधणं पवण्णो झाणेणावंतिसुकुमालो॥

(कथा १३६ गाथा १५४९)

रोहेडयम्मि सत्तीए हओ कोंचेण अग्गिदइदो वि।
तं वेदणमधियासिय पडिवण्णो उत्तमं अट्ठं॥

(कथा १३९ गाथा १५५२)

हत्थिणपुरगुरुदत्तो संवलिथाली व दोणिमंतम्मि।
डज्झंतो अधियासिय पडिवण्णो उत्तमं अट्ठं॥

(कथा १५२ गाथा १५४०)

मोग्गिलगिरिम्मि य सुकोसलो वि सिद्धत्थदइयभयवंतो
वग्घीए वि खज्जंतो पडिवण्णो उत्तमं अट्ठं ॥

बृहत्कथाकोश

कथा १६

पूर्वदेशे वरेन्द्रस्य विषये धनभूषिते ।
देवकोटपुरं रम्यं बभूव भुवि विश्रुतम् ॥ १ ॥
देवकोट्टपुरस्याराद् यत्प्रदेशे प्रपातिता ।
रत्नवृष्टिस्ततो देव्या कोटितीर्थं बभूव तत् ॥ ४५ ॥

कथा २९

रेवामध्यगते तुङ्गे नानातरुविराजिते ।
पर्वते भीषणे वैद्यो यूथनाथोऽभवद् हरिः ॥ १९ ॥
कृतामरेश्वरेणेयं पूजा साधुशरीरके ।
तेनामरेश्वरं तीर्थं बभूव भुवि विश्रुतम् ॥ ४८ ॥

कथा ४६

ततोऽनेकसमाः कृत्वा नानाविधतपांसि तु ।
धनदः स मुनिर्विद्वानध्यासितपरीषहः ॥ १८६ ॥
दिव्यनामपुरीपार्श्वस्थितगोवर्जपर्वते ।
जगाम निर्वृतिं वीरो गिरीन्द्रस्थिरमानसः ॥ १८७ ॥

कथा ५६

स्यातां नीलमहानीलौ विजयार्धनगोत्तमे ।
भ्रातरौ स्नेहसंपन्नौ रूपयौवनशालिनौ ॥ ३८९ ॥
विद्याछेदं विधायाशु दायादैः पुरुविक्रमैः ।
ततो निर्घाटितौ सन्तौ तेराख्यं पुरमागतौ ॥ ३९० ॥
लयनं पार्श्वदेवस्य सहस्रस्तम्भनिर्मितम् ।
ताभ्यामिदं गिरावत्र भूप कारापितं परम् ॥ ३९३ ॥
इदं लयनमुत्तुङ्गं विनष्टं जलधारया ।
रक्षितुं न समर्थोऽहं मौनमादाय संस्थितः ॥ ४०६ ॥
अथोलयनमाच्छाद्य शिलाभिः शोभने दिने ।
राजा सर्वशिलाकुट्टान् शीघ्रमाहूतवानसौ ॥ ४१३ ॥
ततः स्वस्य महादेव्याः क्षुल्लकस्य च शोभनम् ।
लयनानां त्रयं शीघ्रं कारितं तैर्महीभुजा ॥ ४१४ ॥

लयनानां त्रयस्यापि तूर्यमङ्गलनिःस्वनैः।
चकार महतीं पूजां कर्कण्डो भक्तितत्परः ॥ ४१५ ॥

कथा ८०

वारत्रोऽपि विधायाशु प्रायश्चित्तं विशुद्धधीः।
गुरोर्दमवरस्यान्ते दधौ दैगम्बरं व्रतम् ॥ ६८ ॥
वराटविषये रम्ये दिशाभागे च पश्चिमे।
वैराकरस्य सारस्य जनानन्दविधायिनः ॥ ७० ॥
विन्यानदीसमीपस्थं सालूरापणराजितम्।
विहरन् स मुनिः क्वापि प्राप विन्यातटं पुरम् ॥ ७१ ॥
नानातपः प्रकुर्वाणो राद्धान्तकृतभावनः।
तत्र कर्मक्षयं कृत्वा निर्वाणं गतवानसौ ॥ ७२ ॥

कथा १०५

मेदज्ञकेवली कृत्वा विहारं केवलस्य सः।
पर्वते खड्गवंशाख्ये निर्वाणमगमत् पुनः ॥ ३३४ ॥

कथा ११८

दीक्षामादाय जैनेन्द्रीं तुङ्गिकाख्यगिरौ बलः।
सल्लेखनां विधायाशु ब्रह्मलोकं जगाम सः ॥ ५५ ॥

कथा १२६

अवन्तीसुकुमालोऽयं यत्र कालगतो मुनिः।
कापालिकैः प्रदेशोऽसौ रक्ष्यतेऽद्यापि पुण्यभाक् ॥ २५७ ॥
तद्भार्याभिस्तरां तत्र कृते कलकले सति।
बभूव लोकविख्याते देवः कलकलेश्वरः ॥ २६० ॥

कथा १२७

गन्धमादनयोगीशः कृत्वा नानाविधं तपः।
जगाम ध्वस्तकर्मारिः सिद्धिं पाण्डुकपर्वते ॥ २८४ ॥

कथा १३६

नानातपः प्रकुर्वाणो विहरन् वसुधातले।
स्वामिकार्त्तिकयोगीशः प्राप्य किष्किन्धपर्वतम् ॥ १९ ॥
तत्साधुमलपानीयं जातं सर्वौषधं परम्।
स्नात्वा तन्मुनिसन्नीरे लोको व्याधिविवर्जितः ॥ २१ ॥
ततः प्रभृति तत्तीर्थं दक्षिणापथसंभवम्।
पूतं बभूव भव्यानां महाव्याधिविनाशनम् ॥ २२ ॥

कदाचित् स मुनिर्धीरो युगान्तनिहितेक्षणः ।
रोहेटकपुरं दिव्यं विवेशाशनवाञ्छया ॥ २३ ॥
प्रासादशिखरस्थेन क्रौञ्चाख्येन महीभुजा ।
निर्गच्छन् स्वगृहात् कोपान्मुनिः शक्त्या समाहतः ॥ २५ ॥

कथा १३७

काकन्दीतः स संप्राप्य श्रीमदुज्जयिनीं पुरीम् ।
वीरासनेन संतस्थेऽभयघोषमहामुनिः ॥ १० ॥
सहित्वाभयघोषोऽपि चण्डवेगोपसर्गकम् ।
केवलज्ञानमुत्पाद्य प्रययौ मोक्षमक्षयम् ॥ १२ ॥

कथा १३८

तामलिप्तीपुरस्यास्य समीपे परिधेरयम् ।
तस्थौ पश्चिमदिग्भागे नक्तं प्रतिमया मुनिः ॥ ७१ ॥
नानादंशोपसर्गं तं सहित्वा मेरुनिश्चलः ।
विद्युच्चरः समाधानान्निर्वाणमगमद् द्रुतम् ॥ ७३ ॥

कथा १२९

लाटदेशाभिधे देशे चारुलोकधनान्विते ।
पूर्वोत्तरदिशाभागे तोणिमद्भूधरस्य च ॥ ४५ ॥
आसीच्चन्द्रपुरी रम्या सितप्रासादसंकुला ।
बहुलोकसमाकीर्णा धनधान्यसमन्विता ॥ ४६ ॥
श्रुत्वा लोकवचो राजा गुरुदत्ताभिधो रुषा ।
स्वसैन्यसमुदायेन तोणिमत्पर्वतं ययौ ॥ ६२ ॥
गुरुदत्तः स पुत्राय श्रीदत्ताय श्रियं पराम् ।
दत्त्वामितमुनेः पार्श्वे तपो जैनमशिश्रियत् ॥ ९१ ॥
अध्यास्य वेदनां घोरां गुरुदत्तो महामुनिः ।
संप्राप केवलज्ञानं लोकालोकावलोकनम् ॥ १०६ ॥

[गजकुमारः]

अन्यदा विहरन् क्वापि कलिङ्गविषयोद्भवम् ।
पुरं दन्तिपुराभिख्यमाजगाम महामुनिः ॥ १५६ ॥
तत्पश्चिमदिशो भागे स मुनिर्गजपर्वते ।
जग्राहातापनायोगं शुचौ कर्मविहानये ॥ १५७ ॥

उपसर्गं सहित्वामुं कृत्वा कालं समाधिना ।
अन्तकृत्केवली भूत्वा निर्वाणं गतवानसौ ॥ १७० ॥

कथा १४१

प्रायश्चित्तादिकं कृत्वा प्रतिक्रमणमेव च ।
विहरन् स मुनिः प्राप तदानीं शूरपत्तनम् ॥ ४३ ॥
तत्पुरोत्तरदिग्भागे यमुनापूर्वरोधसि ।
तस्थौ प्रतिमया धीरः स मुनिः कर्महानये ॥ ४४ ॥
उपसर्गं सहित्वास्य धीरो धान्यमुनिस्तदा ।
मोक्षं जगाम शुद्धात्मा निहताशेषकर्मकः ॥ ४९ ॥
मुनेर्धान्यकुमारस्य सिद्धिक्षेत्रं तदद्भुतम् ।
विद्यते पूज्यतेऽद्यापि भव्यलोकैरनारतम् ॥ ५० ॥

कथा १४३

उपसर्गं सहित्वेमं सुबन्धुविहितं तदा ।
समाधिमरणं प्राप्य चाणक्यः सिद्धिमीयिवान् ॥ ८४ ॥
ततः पश्चिमदिग्भागे दिव्यक्रौञ्चपुरस्य सा ।
निषद्यका मुनेरस्य वन्द्यतेऽद्यापि साधुभिः ॥ ८५ ॥

कथा १५२

चतुर्मासोपवासस्थौ मौण्डिल्यधरणीतले ।
तस्थतुस्तौ महासाधू तरुमूले घनागमे ॥ ४ ॥
आहारार्थमितस्यास्य नगरं प्रति धीमतः ।
सुकोशलमुनेस्तत्र तथा कीर्तिधरस्य च ॥ ६ ॥
सहदेवीचरी व्याघ्री कोपारुणनिरीक्षणा ।
चखाद पिशितं पापा निर्दयं सकलं क्षुधा ॥ ७ ॥
उपसर्गं सहित्वामुं तद् व्याघ्रीविहित द्रुतम् ।
निर्वाणं जग्मतुर्धीरौ तद्गिरौ तौ तपोधनौ ॥ ८ ॥

कथा १५३

नानातपः प्रकुर्वाणो मन्दरस्थिरमानसः ।
वरोत्तरदिशाभागं प्राप शौरीपुरस्य सः ॥ १८ ॥
अथालसत्कुमारोऽपि स्थित्वा पश्चिमरोधसि ।
यमुनायाः समाधानान्निर्वाणं गतवानसौ ॥ १९ ॥

---

९. पद्मप्रभ

इन का यमकाष्टक पार्श्वनाथस्तोत्र कई स्तोत्रसंग्रहों में प्रकाशित हुआ है। इस के प्रत्येक पद्य में रामगिरि के पार्श्वनाथ को वन्दन किया है। अन्तिम पद्य के अनुसार इसके रचयिता पद्मप्रभदेव हैं। इस पद्य में तर्क आदि शास्त्रों में प्रवीण पद्मनन्दि का भी उल्लेख है जो सम्भवतः पद्मप्रभ के गुरु हैं। यदि नियमसारटीका के कर्ता पद्मप्रभ की ही यह रचना हो तो उस का समय बारहवीं सदीमें सुनिश्चित है (जैन साहित्य और इतिहास पृ. ४०६) इस स्तोत्र के पहले और अन्तिम पद्य इस प्रकार हैं—

लक्ष्मीर्महस्तुल्यसती सती सती प्रवृद्धकालो विरतो रतोऽरतो।
जरारुजापन्महता हताऽहता पार्श्वं पणे रामगिरौ गिरौ गिरौ ॥ १ ॥

तर्के व्याकरणे च नाटकचये काव्याकुले कौशले
विख्यातो भुवि पद्मनन्दिमुनिपस्तत्त्वस्य कोषं निधिः।
गम्भीरं यमकाष्टकं पठति यः संस्तूय सा (?) लभ्यते
श्रीपद्मप्रभदेवनिर्मितमिदं स्तोत्रं जगन्मंगलम् ॥ ९ ॥

---

१०. मदनकीर्ति

मदनकीर्ति की शासनचतुस्त्रिंशिका नामक रचना कोई पन्द्रह वर्ष पहले अनेकान्त वर्ष ९ में और बाद में पं. दरबारीलालजीद्वारा संपादित पुस्तकरूप में प्रकाशित हुई थी। इस में दिगम्बर जैन शासन के प्रभाव का गुणगान करते हुए २६ तीर्थों का उल्लेख किया है। इस के रचयिता मदनकीर्ति पं. प्रेमीजी के कथनानुसार तेहरवीं सदी के—पं. आशाधर के समकालीन—थे (जैन साहित्य और इतिहास पृ. ३४६)। दो वर्ष पहले हम ने वेरावल से प्राप्त एक शिलालेख का संपादन किया जिस में शासन-चतुस्त्रिंशिका का १६ वां पद्य उद्धृत है। इस लेख का समय सन ११८३ से १२०२ के बीच का है। अतः मदनकीर्ति का समय पहले कल्पित समय से कुछ दशक पहले—स्थूलतः ११८० से १२४० तक प्रतीत होता है (अनेकान्त वर्ष १६ पृ. ७२)। शासनचतुस्त्रिंशिका के तीर्थों-

ल्लेखसंबंधी पद्य आगे उद्धृत किये हैं, इन का सारांश इस प्रकार है– पद्य १ कैलाश पर्वत पर सुवर्ण वर्णके जिनबिम्ब दीपज्योति के समान सुशोभित तथा देवों द्वारा वन्दित हैं; २ पोदनपुर में बाहुबलीदेव हैं जिन के चरणनखों में पूजकों को अपने उतने पूर्वजन्म दिखाई देते हैं जितने उपवास वे करें; ३ श्रीपुर में पार्श्वनाथ भूमि से अधर विराजमान हैं जब कि अन्यत्र एक पत्ता भी अधर नही रह सकता अतः यह बडी अद्भुत बात है; ४ हुलगिरि में शंखजिन हैं, एक व्यापारी शंखों की गोणी लेकर जा रहा था उस में से एक शंख में जो प्रकट हुए वेही शंखजिन हैं; ५ धारा में नवखण्ड पार्श्वनाथ हैं, नौ निधियों ने मिल कर इस मूर्ति को एक कूप में स्थापित किया था, धरणेन्द्र की फणा से ये सुशोभित हैं; ६ बृहत्पुर में बावन हाथ ऊँचे बृहद्देव हैं जिन्हें एक पाषाण से अर्ककीर्ति राजाने बनवाया था, इसे स्थान को आदिनिषिधिका कहा जाता है; ७ जैनपुर में दक्षिणगोम्मट देव हैं जिन्हें पांचसौ शिल्पियों ने निर्मित किया था; ८ पूर्वदिशा में पार्श्वनाथ हैं जिन्हें सत्पुरुष ही देख सकते हैं, दुष्ट नही देख सकते; ९ विश्वसेन राजा के लिए वेत्रवती के द्रह से शान्तिनाथ प्रकट हुए जो क्षुद्र उपद्रवों को दूर करते हैं; १० उत्तर दिशा में जटाधारी दिगम्बर देव हैं जिन्हें यौग परमेश्वर कहते हैं, सांख्य कपिल कहते हैं, योगी निज कहते हैं, बौद्ध बुद्ध कहते हैं एवं ब्राह्मण विष्णु कहते हैं; ११ सम्मेदपर्वतपर सीढियों से चढकर वीस तीर्थंकरों की वन्दना करते हैं जिन की मूर्तियां सौधर्म इन्द्र ने स्थापित की हैं, इन्हें भव्य ही देख सकते हैं; १२ पुष्पपुर में पुष्पदन्त प्रभु हैं जो पहले पाताल में पूजित होते थे तथा फिर पृथ्वी से ऊपर आये थे; १३ नागहृद में जिनेन्द्र हैं जिन की अदृश्य मूर्ति है, कुष्टरोग को दूर करते है, इन्हें ब्राह्मण ब्रह्मा कहते है, वैष्णव विष्णु कहते हैं, शैव शिव एवं बौद्ध बुद्ध कहते हैं; १४ सम्मेदपर्वत पर अमृतवापिका है जिस में मंत्र पढकर अष्टद्रव्य-पूजा डाली जाती है; १६ पश्चिम समुद्र के तीर पर चन्द्रप्रभ प्रभु हैं जिनके स्नानजल से कुष्ट दूर होता है; १७ छाया पार्श्वप्रभु जो सिद्धशिलातल पर विराजमान हैं तथा नागफण से शोभित हैं; १८ समुद्र में पांचसौ धनुष ऊंचे आदिजिनेश्वर हैं जिनकी छाया में समुद्र का जल भी मीठा होता है; १९ पावापुर में

वीरजिन है जिन्हें तिर्यंच भी प्रणाम करते हैं; २० सौराष्ट्र में श्रेष्ठ पर्वत पर इन्द्र ने वस्त्राभरणरहित आयुधरहित नेमिनाथ की मूर्ति स्थापित की है जो मानों मुक्तिका मार्ग बतला रही है; २१ चम्पा में वासुपूज्य हैं जिन की देव भी दुंदुभि बजाकर पूजा करते हैं, २७ नर्मदा के जल में शान्ति-जिनेश्वर हैं जिन की जलदेवताएं पूजा करती हैं; २८ अवरोधनगर में मुनिसुव्रत जिन हैं जो आश्रम में समुद्र से आई हुई दिव्य शिलापर स्थिर रहे जब कि ब्राह्मण द्वारा स्थापित अन्य देव नही रह सके, ३० विपुल पर्वतपर अर्हत् का श्रेष्ठ का बिम्ब है जो बारह योजनतक दिखाई देता है; ३२ विन्ध्य पर्वतपर देवों द्वारा पूजित कई जिनमन्दिर हैं; ३३ मेदपाट प्रदेश में नागफणी ग्राम में खेत में एकशिला मिली, उस से एक वृद्ध-महर्जिका ने स्वप्न में मिले आदेशानुसार मल्लिजिनेश्वर की मूर्ति निर्मित की है; ३४ मालव देश में मंगलपुर में अभिनन्दन जिन हैं, म्लेन्छों द्वारा तोडा गया उन का सिर पुनः जोडने पर पूर्ववत् अभंग हो गया यह अद्भुत बात है।

शासनचतुस्त्रिंशिका

यद्दीपस्य शिखेव भाति भविनां नित्यं पुनः पर्वसु।
भूभृन्मूर्धनि वासिनामुपचितप्रीतिप्रसन्नात्मनाम्॥
कैलाशे जिनबिम्बमुत्तमघमतत्सौवर्णवर्णं सुराः।
वन्द्यन्तेऽद्य दिगम्बरं तदमलं दिग्वाससां शासनम्॥ १॥
पादाङ्गुष्ठनखप्रभासु भविनामाभान्ति पश्चाद् भवाः।
यस्यात्मीयभवा जिनस्य पुरतः स्वस्योपवासप्रमाः॥
अद्यापि प्रतिभाति पोदनपुरे यो वन्द्यवन्द्यः स वै।
देवो बाहुबली करोतु बलवद् दिग्वाससां शासनम्॥ २॥
पत्रं यत्र विहायसि प्रविपुले स्थातुं क्षणं न क्षमम्।
तत्रास्ते गुणरत्नरोहणगिरिर्यो देवदेवो महान्॥
चित्रं नात्र करोति कस्य मनसो दृष्टः पुरे श्रीपुरे।
स श्रीपार्श्वजिनेश्वरो विजयते दिग्वाससां शासनम्॥ ३॥

वासं सार्थपतेः पुरा कृतवतः शङ्खान् गृहीत्वा वहून् ।
सद्धर्मोद्यतचेतसो हुळगिरौ कस्यापि धन्यात्मनः ॥
प्रातर्मार्गमुपेयुषो न चलिता शङ्खस्य गोणी पदम् ।
यावच्छङ्खजिनो निरावृतिरभाद् दिग्वाससां शासनम् ॥ ४ ॥
सानन्दं निधयो नवापि नवधा यं स्थापयाञ्चक्रिरे ।
वाप्यां पुण्यवतः स कस्यचिदहो स्वं स्वादिदेश प्रभुः ॥
धारायां धरणोरगाधिपशितच्छत्रश्रिया राजते ।
श्रीपार्श्वो नवखण्डमण्डिततनुर्दिग्वाससां शासनम् ॥ ५ ॥
द्वापञ्चाशदनूनपाणिपरमोन्मानं करैः पञ्चभिः ।
यं चक्रे जिनमर्ककीर्तिनृपतिर्ग्रावाणमेकं महत् ॥
तन्नाम्ना स बृहत्पुरे वरबृहद्देवाख्यया गीयते ।
श्रीमत्यादिनिषिद्धिकेयमवताद् दिग्वाससां शासनम् ॥ ६ ॥
लोकैः पञ्चशतीमितैरविरतं संहत्य निष्पादितम् ।
यत्कक्षान्तरमेकमेव महिमा सोऽन्यस्य कस्यास्तु भोः ॥
यो देवैरतिपूज्यते प्रतिदिनं जैने पुरे सांप्रतम् ।
देवो दक्षिणगोम्मटः स जयताद् दिग्वाससां शासनम् ॥ ७ ॥
यं दुष्टो न हि पश्यति क्षणमपि प्रत्यक्षमेवाखिलम् ।
संपूर्णावयवं मरीचिनिचयं शिष्टः पुनः पश्यति ॥
पूर्वस्यां दिशि पूर्वमेव पुरुषैः संपूज्यते संततम् ।
स श्रीपार्श्वजिनेश्वरो दृढयते दिग्वाससां शासनम् ॥ ८ ॥
यः पूर्वं भुवनैकमण्डनमणिः श्रीविश्वसेनादरात् ।
निश्चक्राम महोदधेरिव ह्रदात् सच्छत्रवत्याद्भुतम् ॥
क्षुद्रोपद्रववर्जितोऽवनितले लोकं नरीनर्तयन्
स श्रीशान्तिजिनेश्वरो विजयते दिग्वाससां शासनम् ॥ ९ ॥
यौगा यं परमेश्वरं हि कपिलं सांख्या निजं योगिनो
बौद्धा बुद्धमजं हरिं द्विजवरा जल्पन्त्युदीच्यां दिशि ।
निश्चीरं वृषलाञ्छनं ऋजुतनुं देवं जटाधारिणं
निर्ग्रन्थं परमं तमाहुरमलं दिग्वाससां शासनम् ॥ १० ॥
सोपानेषु सकष्टमिष्टसुकृतादारुह्य यान् वन्दति
सौधर्माधिपतिप्रतिष्ठितवपुष्का ये जिना विंशतिः ।
प्रख्याः स्वप्रमितिप्रभाभिरतुला सम्मेदपृथ्वीरुहि
भव्योऽन्यस्तु न पश्यति ध्रुवमिदं दिग्वाससां शासनम् ॥ ११ ॥

पाताले परमादरेण परया भक्त्यार्चितो व्यन्तरैः
यो देवैरधिकं स तोपमगमत् कस्यापि पुंसः पुरा।
भूभृन्मध्यतलादुपर्यनुगतः श्रीपुष्पदन्तः प्रभुः
श्रीमत्पुष्पपुरे विभातिनगरे दिग्वाससां शासनम् ॥ १२ ॥
ब्रह्मेति द्विजनायकैर्हरिरिति.........वैष्णवैः
बौद्धैर्बुद्ध इति प्रमोदविवशैः शूलीति माहेश्वरैः।
कुष्ठानिष्टविनाशनो जनदृशां योऽलक्ष्यमूर्तिर्विभुः
स श्रीनागह्रदेश्वरो जिनपतिर्दिग्वाससां शासनम् ॥ १३ ॥
यस्याः पाथसि नाम विंशतिभिदा पूजाष्टधा क्षिप्यते
मन्त्रोच्चारणबन्धुरेण युगपन्निर्ग्रन्थरूपात्मनाम्।
श्रीमत्तीर्थकृतां यथायथमियं संसंपनीपद्यते
सम्मेदामृतवापिकेयमवताद् दिग्वाससां शासनम् ॥ १४ ॥
यस्य स्नानपयोऽनुलिप्तमखिलं कुष्टं दनीध्वस्यते
सौवर्णस्तवकेशनिर्मितमिव क्षेमंकरं विग्रहम्।
शश्वद्भक्तिविधायिनां शुभतमं चन्द्रप्रभः स प्रभुः
तीरे पश्चिमसागरस्य जयताद् दिग्वाससां शासनम् ॥ १६ ॥
शुद्धे सिद्धशिलातले सुविमले पञ्चामृतस्नापिते
कर्पूरागुरुकुङ्कुमादिकुसुमैरभ्यर्चिते सुन्दरैः।
फुल्लत्कारफणापतिस्फुटफटाटारत्नावलीभासुरः
छायापार्श्वविभुः स भाति जयताद् दिग्वाससां शासनम् ॥ १७ ॥
क्षाराम्भोधिपयः सुधाद्रव इव प्रत्यक्षमास्वाद्यते
.....................रसकृत् यच्छायया संभरत्।
पूतं पूततमः स पञ्चशतकोदण्डप्रमाणः प्रभुः
श्रीमानादिजिनेश्वरो स्थिरयते दिग्वाससां शासनम् ॥ १८ ॥
तिर्यञ्चोऽपि नमन्ति यं निजगिरा गायन्ति भक्त्याशया
दृष्टे यस्य पदद्वये शुभदृशो गच्छन्ति नो दुर्गतिम्।
देवेन्द्रार्चितपादपङ्कजयुगः पावापुरे पापहा
श्रीमद्वीरजिनः स रक्षतु सदा दिग्वाससां शासनम् ॥ १९ ॥
सौराष्ट्रे यदुवंशभूषणमणेः श्रीनेमिनाथस्य या
मूर्तिर्मुक्तिपथोपदेशनपरा शान्तायुधापोहनात्।
चक्रैराभरणैर्विना गिरिवरे देवेन्द्रसंस्थापिता
चित्तभ्रान्तिमपाकरोतु जगतो दिग्वाससां शासनम् ॥ २० ॥

यस्याद्यापि सुदुन्दुभिस्वरमलं पूजां सुराः कुर्वते
भव्यप्रेरितपुष्पगन्धनिचयोऽध्यारोहति क्ष्मातले ।
नित्यं नूतनपूजयार्चिततनुः श्रीवासुपूज्योऽवभात्
चम्पायां परमेश्वरः सुखकरो दिग्वाससां शासनम् ॥ २१ ॥
श्रीदेवीप्रमुखाभिरर्चितपदाम्भोजः पुरापि क्वचित्
कल्याणेऽत्र निवेशितः पुनरतो नो चालितुं शक्यते ।
यः पूज्यो जलदेवताभिरतुलः सन्नर्मदापाथसि
श्रीशान्तिर्विमलं स रक्षतु सदा दिग्वाससां शासनम् ॥ २७ ॥
पूर्वं याश्रममाजगाम सरितां नाथास्तु दिव्या शिला
तस्यां देवगणान् द्विजस्य दधतस्तस्थौ जिनेशः स्थिरम् ।
कोपाद् विप्रजनावरोधनगरे देवैः प्रपूज्याम्बरे
दध्रे यो मुनिसुव्रतः स जयताद् दिग्वाससां शासनम् ॥ २८ ॥
सिक्ते सत्सरितोऽम्बुभिः शिखरिणः संपूज्य देशे वरे
सानन्दं विपुलस्य शुद्धहृदयैरित्येव भव्यैः स्थितैः ।
निर्ग्रन्थं परमर्हतो यदमलं बिम्बं दरीदृश्यते
यावद् द्वादशयोजनानि तदिदं दिग्वाससां शासनम् ॥ ३० ॥
यस्मिन् भूरिविधातुरेकमनसो भक्तिं नरस्याधुना
तत्कालं जगतां त्रयेऽपि विदिता जैनेन्द्रबिम्बालयाः ।
प्रत्यक्षा इव भान्ति निर्मलदृशो देवेश्वराभ्यार्चिताः
विन्ध्ये भूरुहि भासुरेऽतिमहिते दिग्वाससां शासनम् ॥ ३२ ॥
आस्ते संप्रति मेदपाटविषये ग्रामो गुणग्रामभूः
नाम्ना नागफणीति तत्र कूपता लब्धा शिला केनचित् ।
स्वप्नं वृद्धमहार्जिकामिह ददौ स्वाकारनिर्मापणे
स श्रीमल्लिजिनेश्वरो विजयते दिग्वाससां शासनम् ॥ ३३ ॥
श्रीमन्मालवदेशमंगलपुरे म्लेच्छैः प्रतापागतैः
भग्ना मूर्तिरथोऽसियोजितशिराः संपूर्णतामाययौ ।
यस्योपद्रवनाशिनः कलियुगेऽनेकप्रभावैर्युतः
स श्रीमानभिनन्दनः स्थिरयते दिग्वाससां शासनम् ॥ ३४ ॥
इति हि मदनकीर्तिश्चिन्तयन्नात्मचित्ते
विगलति सति रात्रेस्तुर्यभागार्धभागे ।
कपटशतविलासान् दुष्टवागन्धकारान्
जयति विहरमाणः साधुराजीववन्धुः ॥ ३५ ॥

११. निर्वाणकाण्ड

यह प्राकृत रचना निर्वाणभक्ति के रूप में दशभक्ति पाठ में सम्मिलित की जाती है। किन्तु क्रियाकलाप के पहले टीकाकार प्रभाचन्द्र ने इस की व्याख्या नही की है तथा दूसरे टीकाकार आशाधर ने प्रारंभ की पांच गाथाएं ही दी हैं। इस से प्रतीत होता है कि यह रचना प्रभाचन्द्र और आशाधर के मध्यवर्ती समय में – बारहवीं या तेरहवीं सदी में किसी लेखक द्वारा संकलित हुई थी तथा आशाधर के समय तक निर्वाणभक्ति के रूप में प्रतिष्ठित नही हुई थी। इस के लेखक के बारे में कोई जानकारी प्राप्त नही है। इस के दो भाग हैं – पहले १९ पद्यों को निर्वाणकाण्ड तथा बाद के ८ पद्यों को अतिशयक्षेत्रकाण्ड कहा जाता है। ये आठ पद्य कुछ प्रतियों में नही मिलते तथा हिंदी अनुवादक पं. भगवतीदास ने इन का अनुवाद नही किया है अतः कुछ विद्वान इन्हें मौलिक नही मानते। किन्तु आगे जिन लेखकों के उद्धरण दिये जा रहे हैं उन में से अधिकांश ने समान रूप से इन दोनों भागों का अनुवाद किया है। अतः हमारे विचार से ये दोनों एकही लेखकद्वारा संकलित हुए हैं। निर्वाणकाण्ड के बारे में विस्तृत विवेचन पं.नाथूराम प्रेमी ने 'जैन साहित्य और इतिहास' में 'हमारे तीर्थक्षेत्र' शीर्षक लेख में दिया है। इस कृति में उल्लिखित तीर्थों का विवरण इस तरह है। १ अष्टापद – ऋषभदेव का मुक्तिस्थान, नागकुमार, व्याल, महाव्याल आदि का मुक्तिस्थान (गा.१ व १५); २ चंपा – वासुपूज्य का मुक्तिस्थान (गा. १); ३ उज्जंत – नेमिनाथ, प्रद्युम्न, शंबुकुमार, अनिरुद्ध तथा ७२ कोटि सातसौ मुनियों का मुक्तिस्थान (गा. १ व ५), ४ पावा – महावीर का निर्वाणस्थान (गा. १); ५ सम्मेदगिरि – वीस तीर्थंकरों का मुक्तिस्थान (गा. २); ६ गजपंथ – सात बलभद्र और आठ कोटि यादव राजाओं का मुक्तिस्थान (गा. ३); ७ तारापुर – वरदत्त, वरांग, सागरदत्त तथा ३।। कोटि मुनियों का मुक्तिस्थान (गा. ४); ८ पावागिरि – राम के दो पुत्रों तथा लाट के पांच कोटि राजाओं का मुक्तिस्थान (गा. ६); ९ शत्रुंजय

— पाण्डु के तीन पुत्र तथा द्रविड के आठ कोटि राजाओं का मुक्तिस्थान (गा. ७); १० तुंगीगिरि – राम, हनुमान, सुग्रीव, गवय, गवाक्ष, नील, महानील तथा ९९ कोटि मुनियों का मुक्तिस्थान (गा. ८); ११ सवणगिरि – नंग, अनंग तथा २।। कोटि मुनियों का मुक्तिस्थान (गा. ९); १२ रेवातीर – दशमुख राजा के पुत्रों तथा २।। कोटि मुनियोंका मुक्तिस्थान (गा. १०); १३ सिद्धवरकूट – रेवा नदी के पश्चिमतीरपर दो चक्रवर्ती तथा दस कामदेवों का एवं ३।। कोटि मुनियों का मुक्तिस्थान (गा. ११); १४ चूलगिरि – वडवानी नगर के दक्षिण में इन्द्रजित और कुम्भकर्ण का मुक्तिस्थान (गा. १२); १५ पावागिरि – चलना नदीके तीरपर सुवर्णभद्र आदि चार मुनियों का मुक्तिस्थान (गा. १३); १६ द्रोणगिरि – फलहोडी ग्राम के पश्चिम में गुरुदत्त आदि मुनियों का मुक्तिस्थान (गा. १४); १७ मेढगिरि – अचलपुर के ईशान्य में ३।। कोटि मुनियों का मुक्तिस्थान (गा. १६); १८ कुंथुगिरि – वंशस्थल के पश्चिम में कुलभूषण, देशभूषण का मुक्तिस्थान (गा. १७); १९ कोटिशिला – कलिंग देशमें यशोधर राजा के पुत्रों; पांचसौ मुनियों तथा एक कोटि मुनियों का मुक्तिस्थान (गा. १८), २० रिस्सिदगिरि –पार्श्वनाथ के समवसरण में वरदत्त आदि पांच मुनियों का मुक्तिस्थान (गा. १९); २१ नागद्रह – पार्श्वनाथ (गा. १); २२ मंगलपुर – अभिनन्दन (गा. १); २३ आशारम्य – मुनिसुव्रत (गा. १); २४ पोदनपुर – बाहुबली (गा. २); २५ हस्तिनापुर – शान्तिनाथ, कुंथुनाथ व अरनाथ (गा. २); २६ वाराणसी – सुपार्श्वनाथ व पार्श्वनाथ (गा. २); २७ मथुरा – महावीर (गा. २); २८ अहि-छत्र – पार्श्वनाथ (गा. ३); २९ जम्बूवन – जम्बूस्वामी का मुक्तिस्थान (गा. ३); ३० अर्गलदेव (गा. ५); ३१ णिवडकुंडली (गा. ५); ३२ सिरपुर – पार्श्वनाथ (गा. ५); ३३ होलगिरि – शंखदेव (गा.५); ३४ गोमटदेव – पांचसौ धनुष ऊंचे, देवों द्वारा पुष्पवृष्टि से पूजित (गा. ६)।

आगे निर्वाणकाण्ड का मूलपाठ दिया जा रहा है जो अब प्रचलित है। इस में विद्वानों द्वारा सुझाया गया परिवर्तन है – गा. ४ में तार-

वरणयरे के स्थान पर तारउरणियडे होना चाहिए। अलग अलग प्रतियों में गाथाओं का क्रम अलग अलग मिलता है। गा. ९ में आधुनिक प्रतियों में सवणागिरि के स्थान में सुवण्णगिरि पाठ मिलता है। गा. १७ में वंसत्थलवरणियडे के स्थान में वंसत्थलम्मि णयरे पाठ भी मिलता है। कुछ प्रतियों में १३ और १४ क्रमांक की गाथाएं नही पाई जातीं। अतिशयक्षेत्रकाण्ड में गा. ५ में सिरपुरि के स्थान पर सिवपुरि पाठभी मिलता है। कुछ प्रतियों में दो गाथाएं अधिक मिलतीं हैं—

विंझाचलम्मि रण्णे मेघणादो इंदजियसहियं।
मेघवरणामतित्थं णिव्वाणगया णमो तेसिं॥
रेवातडम्मि तीरे संभवनाथस्स केवलुप्पत्ती।
आहुट्ठयकोडीओ निव्वाणगया णमो तेसिं॥

इन के अनुसार मेघवर तीर्थ में जो विन्ध्य पर्वत के अरण्य में है— इन्द्रजित और मेघनाद मुक्त हुए तथा रेवा नदी के तीर पर सम्भव-नाथ को केवल ज्ञान प्राप्त हुआ एवं ३॥ कोटि मुनि मुक्त हुए।

निर्वाण काण्ड

अट्ठावयम्मि उसहो चंपाए वासुपुज्जजिणणाहो।
उज्जंते णेमिजिणो पावाए णिव्वुदो महावीरो॥ १॥
वीसं तु जिणवरिंदा अमरासुरवंदिदा धुदकिलेसा।
सम्मेदे गिरिसिहरे णिव्वाणगया णमो तेसिं॥ २॥
सत्तेव य बलभद्दा जदुवणरिंदाण अट्ठकोडीओ।
गजपंथे गिरिसिहरे णिव्वाणगया णमो तेसिं॥ ३॥
वरदत्तो य वरंगो सायरदत्तो य तारवरणयरे।
आहुट्ठयकोडीओ णिव्वाणगया णमो तेसिं॥ ४॥
णेमिसामी पज्जुण्णो संबुकुमारो तहेव अणिरुद्धो।
बाहत्तरि कोडीओ उज्जंते सत्तसया सिद्धा॥ ५॥
रामसुआ वेण्णि जणा लाडणरिंदाण पंचकोडीओ।
पावागिरिवरसिहरे णिव्वाणगया णमो तेसिं॥ ६॥
पंडुसुआ तिण्णिजणा दविडणरिंदाण अट्ठकोडीओ।
सत्तुंजयगिरिसिहरे णिव्वाणगया णमो तेसिं॥ ७॥

राम हणू सुग्गीवो गवय गवक्खो य णीलमहणीला ।
णवणवदीकोडीओ तुंगीगिरिणिव्वुदे वंदे ॥ ८ ॥

णंगाणंगकुमारा कोडीपंचद्धमुणिवरासहिया ।
सवणागिरिवरसिहरे णिव्वाणगया णमो तेसिं ॥ ९ ॥

दहमुहरायस्स सुआ कोडीपंचद्धमुणिवरे सहिया ।
रेवाउहयतडग्गे णिव्वाणगया णमो तेसिं ॥ १० ॥

रेवाणईए तीरे पच्छिमभायम्मि सिद्धवरकूडे ।
दो चक्की दह कप्पे आहुट्ठयकोडि णिव्वुदे वंदे ॥ ११ ॥

चडवाणीवरणयरे दक्खिणभायम्मि चूलगिरिसिहरे ।
इंदजिय कुंभकण्णो णिव्वाणगया णमो तेसिं ॥ १२ ॥

पावागिरिवरसिहरे सुवण्णभद्दाइमुणिवरा चउरो ।
चलणाणईतडग्गे णिव्वाणगया णमो तेसिं ॥ १३ ॥

फलहोडीवरगामे पच्छिमभायम्मि दोणगिरिसिहरे ।
गुरुदत्ताइमुणिंदा णिव्वाणगया णमो तेसिं ॥ १४ ॥

णायकुमारमुणिंदो वालि महावालि चेव अज्झेया ।
अट्ठावयगिरिसिहरे णिव्वाणंगया णमो तेसिं ॥ १५ ॥

अच्चलपुरवरणयरे ईसाणभाए मेढगिरिसिहरे ।
आहुट्ठयकोडीओ णिव्वाणगया णमो तेसिं ॥ १६ ॥

वंसत्थलवरणियडे पच्छिमभायम्मि कुंथुगिरिसिहरे ।
कुलदेसभूसणमुणी णिव्वाणगया णमो तेसिं ॥ १७ ॥

जसहररायस्स सुआ पंचसयाइं कलिंगदेसम्मि ।
कोडिसिला कोडिमुणी णिव्वाणगया णमो तेसिं ॥ १८ ॥

पासस्स समवसरणे सहिया वरदत्तमुणिवरा पंच ।
रिस्सिंदे गिरिसिहरे णिव्वाणगया णमो तेसिं ॥ १९ ॥

(अतिशयक्षेत्रकाण्ड)

पासं तह अहिणंदण णायद्दह मंगलाउरे वंदे ।
अस्सारंभे पट्टणि मुणिसुव्वओ तहेव वंदामि ॥ १

बाहुवली तह वंदमि पोयणपुर हत्थिणाउरे वंदे ।
संती कुंथु व अरहो वाणारसिए सुपास पासं च ॥ २ ॥

महुराए अहिछत्ते वीरं पासं तहेव वंदामि ।
जंबुमुणिंदो वंदे णिव्वुइपत्तो वि जंबुवणगहणे ॥ ३ ॥

पंचकल्लाणठाण विजाणिवि संजाद मच्चलोयम्मि ।
मणवयणकायसुद्धी सव्वे सिरसा णमंसामि ॥ ४ ॥
अग्गलदेवं वंदमि वरणयरे णिवडकुंडली वंदे ।
पासं सिरपुरि वंदमि होलागिरिसंखदेवं पि ॥ ५ ॥
गोमटदेवं वंदमि पंचसयं धणुहदेहउच्चत्तं ।
देवा कुणंति वुट्टी केसरकुसुमाण तस्स उवरिम्मि ॥ ६ ॥
णिव्वाणठाण जाणि वि अइसयठाणाणि अइसये सहिया ।
संजाद मिच्चलोए सव्वे सिरसा णमंसामि ॥ ७ ॥
जो जण पढइ तियालं णिव्वुइकंडं पि भावसुद्धीए ।
भुंजदि णरसुरसुक्खं पच्छा सो लहइ णिव्वाणं ॥ ८ ॥

---

१२. उदयकीर्ति

उदयकीर्ति की अपभ्रंश रचना तीर्थवन्दना हमारे संग्रहसे आगे दी जाती है । इस में १८ पद्य हैं तथा निम्नलिखित क्षेत्रों का उल्लेख है — १ कैलास–ऋषभदेव; २ चंपानगर — वासुपूज्य; ३ उज्जन्त — नेमिनाथ, प्रद्युम्न, अनिरुद्ध तथा अन्य ७२ कोटि सातसौ मुनियों का मुक्तिस्थान; ४ पावापुर — वर्धमान; ५ संमेदगिरि — वीस तीर्थंकर; ६ नागद्रह — पार्श्वस्वयंभूदेव; ७ आशारम्य — मुनिसुव्रत; ८ मालव शांतिनाथ — जो विश्वसेन राजा द्वारा निकाले गये थे; ९ मंगलपुर — अभिनन्दन; १० पोदनपुर — बाहुबली; ११ हस्तिनापुर — शांति, कुंथु व अर; १२ वाणारसी — पार्श्वनाथ; १३ पावा — लवण, अंकुश तथा पांच कोटि मुनियों का मुक्तिस्थान; १४ शत्रुंजय — पांडव तथा आठ कोटि मुनियों का मुक्तिस्थान; १५ तारापुर — वरांग मुनि तथा ३॥ कोटि मुनियों का मुक्तिस्थान; १६ वडवाणी — रावण के पुत्र इन्द्रजित मुनि; १७ आगल-देव — करकंड राजाद्वारा निर्मित; १८ सिरपुर — अंतरिक्ष पार्श्वनाथ; १९ होल्लागिरि — शंखजिनेन्द्र, जिन्हें विज्जण राजा नहीं तोड सका था; २० त्रिपुरी — त्रिलोकतिलक; २१ तुंगीगिरि — बलभद्र तथा ९९ कोटि मुनियों का मुक्तिस्थान; २२ गजपथ — बलदेव तथा आठ कोटि मुनियों

का मुक्तिस्थान; २३ रेवानदी के तट – रावण के पुत्र तथा पांच कोटि मुनियों का मुक्तिस्थान; २४ कर्णाट के वाडवजिनेन्द्र; २५ गोमटदेव; २६ माणिकदेव; २७ तिलकपुर – पश्चिम समुद्र के तीर पर चन्द्रप्रभ।

उदयकीर्ति की इस रचना की कुछ पंक्तियां पं. परमानन्दजी की प्रति से पं. दरबारीलालजी ने शासनचतुस्त्रिंशिका के संस्करण में उदधृत की हैं। किन्तु इन दोनों महानुभावों ने उदयकीर्ति के समय के बारे में कोई अनुमान नही किया है। उन्होंने विज्जण राजा का उल्लेख किया है जिस का समय सन ११५६–११६८ तक निश्चित है (दि स्ट्रगल फॉर एम्पायर पृ. १८०–८१)। अतः वे बारहवीं सदी के बाद के हैं। उन के समय की उत्तरमर्यादा निश्चित करने का कोई साधन हमें ज्ञात नहीं हुआ। फिरभी त्रिपुरी, तिलकपुर आदि के वर्णन को देखते हुए वे चौदहवीं सदी के बाद के प्रतीत नही होते। उपर्युक्त विद्वानों ने इस रचना को अपभ्रंश निर्वाणभक्ति यह नाम दिया है।

तीर्थवंदना

कमकमल णवेप्पिणु हियइ धरेप्पिणु बापसरि गुरु गणहरहँ।
णिव्वाणइ ठाणइ अइसयठाणइ पयडमि भत्तिय जिणवरहँ॥ १॥
कइलाससिहरि सिरिरिसहणाहु। जो सिद्धउ पयडमि धम्मलाहु॥
पुणु चंपणयरि जिणवासुपुज्जु। णिव्वाणपत्त छंडेवि रज्जु॥ २॥
उज्जंतमहागिरि सिद्धिपत्तु। सिरिणेमिणाहु जादव पवित्तु॥
अण्णु वि पुणु सामि पज्जुण णवेवि। अणुरुद्धइ सहियर णमवि तेवि॥३
अण्णु वि पुणु सत्त सयाइँ तित्थु। बाहत्तरि कोडिय सिद्ध जेत्थु॥
पावापुरि वंदउं वड्ढमाण। जिणि महियलि पयडिउ विमलणाण॥ ४॥
संमेदमहागिरि सिद्ध जे वि। हउँ वंदउँ वीस जिणंद ते वि॥
अवरे वि तित्थ महियलि पसिद्ध। हउँ वंदउँ ते अइसयसमिद्ध॥ ५॥
णायद्दहि पास सयंभु देउ। हउँ वंदउँ जसु गुण णत्थि छेउ॥
जो उ देउ पतिट्ठिय आसरम्मि। मुणिसुव्वय वंदउँ अंतरम्मि॥ ६॥
मालवइ संति धंदउँ पवित्तु विससेणराय कट्ठिउ णिरुत्तु॥
मंगलउरि धंदउँ जगि पयास। अहिणंदणु अइसयगुणणिवास॥ ७॥

बाहुबलि देउ पोयणपुरम्मि । हउँ वंदउँ सुमरिसु जम्मि जम्मि ॥
हत्थिणपुरि वंदउँ संति कुंथु । अरु तिण्णि वंदउँ पयडेवि तित्थु ॥ ८ ॥
वाणारसि पास सयंभु सत्थु । वंदमि परिहरि विहुमेय गंथु ॥
पावइ लवणंकुस रामसुवा । पंचेव कोडि जहिँ सिद्ध हुवा ॥ ९ ॥
सत्तुंज सिहरि अट्ठेवि कोडि । पंडव सहु वंदउँ हत्थ जोडि ॥
ताराउरि वंदउँ मुणि वरंगु । आहुट्ठ कोडि किउ सिद्धिसंगु ॥ १० ॥
बडवाणी रावणतणउ पुत्त । हउँ वंदउँ इंदजित मुणि पवित्त ॥
करकंडरायणिम्मियउ भेउ । हउँ वंदउँ आगलदेव देउ ॥ ११ ॥
अरु वंदउँ सिरपुरि पासणाहु । जो अंतरिक्ख थिउ णाणलाहु ॥
होल्लागिरि संखजिणिंदु देउ । विज्जण णरिंद णवि लद्ध छेउ ॥ १२ ॥
हउँ वंदउँ तिउरिहि गयणिलग्गु । तियलोयतिलउ जो सिद्धिमग्गु ॥
णवणवइ कोडि बलभद्द जुत्त । तुंगीगिरि वंदउँ मुणि पवित्त ॥ १३ ॥
पुणु अट्ठ कोडि बलएव सत्थ । गयवह गिरिम्मि णिव्वाणपत्त ॥
पुणु पंच कोडि रावणसुआइँ । रेवाणइ वंदउँ सयंभुवाइँ ॥ १४ ॥
कण्णाडि वसइ बाडइ जिणंदु । जसु आगलि णाचइ सुरवरिंदु ॥
वंदिज्जइ गोम्मटदेउ तित्थु । जसु अणुदिणु पणवइ सुरहँ सत्थु ॥ १५ ॥
वंदिज्जइ माणिकदेउ देउ । जसु णामइँ कम्मह होइ छेउ ॥
पच्छिम समुद्द ससिसंखवण्ण । तिलयाउरि चंदप्पहु रवण्ण ॥ १६ ॥
मइँ अइसयतित्थइँ पयडियाइँ । सिरिउदयकित्तिमुणि वंदियाइँ ॥ १७ ॥
इय तित्थंकर वित्थइँ पुण्णु पवित्तइँ पढइ विहाणइँ विमलहरे ।
तसु पाउ पणासइ दुरिउ विणासइ सयलवि मंगल तासु घरे ॥ १८ ॥

---

१३. पद्मनन्दि

मूलसंघ – बलात्कारगण के भट्टारक प्रभाचन्द्र के शिष्य भ. पद्मनन्दि अपने समय के प्रभावशाली आचार्य थे। ये सं. १३८५ से १४५० = सन १३२९ से १३९४ तक पट्टाधीश रहे (भट्टारक सम्प्रदाय पृ. ९५)। इन के दो स्तोत्र अनेकान्त व. ९ पृ. २५० तथा व. ८ पृ. ४२७ पर प्रकाशित हुए हैं जिन में जीरापल्ली के पार्श्वनाथ

तथा रावण पार्श्वनाथ की स्तुति है। इन के अन्तिम पद्य नीचे दिये जाते हैं। पद्मनन्दि के तीन शिष्यों द्वारा दिल्ली, ईडर तथा सूरत की भट्टारक परम्पराएं शुरू हुई थीं।

[अ]

जीरापल्लीमण्डनं पार्श्वनाथं नत्वा स्तौति भव्यभावेन भव्यः।
यस्तं नूनं ढौकते नो वियोगः कान्तोद्भूतश्चाप्यनिष्टस्य योगः॥ ९॥
श्रीमत्प्रभेन्दुचरणाम्बुजयुग्मभृङ्गश्चारित्रनिर्मलमतिर्मुनिपद्मनन्दी।
पार्श्वप्रभोर्विनयनिर्भरचित्तवृत्तिर्भक्त्या स्तवं रचितवान् मुनि पद्मनन्दी॥

[आ]

वन्दारुत्रिदशेन्द्रसुन्दरशिरःकोटीरहीरप्रभा-
भास्वत्पादपयोजमुज्ज्वललसत्कैवल्यलक्ष्मीगृहम्।
श्रीमद्रावणपत्तनाधिपममुं श्रीपार्श्वनाथं जिनं
भक्त्या संस्तुतवाननिन्द्यचरितः श्रीपद्मनन्दी मुनिः॥ २५॥

---

१४. श्रुतसागर

मूलसंघ – बलात्कारगण की सूरत शाखा के भट्टारक विद्यानन्दि के शिष्य श्रुतसागर ने संस्कृत में कई रचनाएं लिखी हैं। इन में से तीन रचनाओं के कुछ अंश आगे उद्धृत किये जाते हैं। पहला उद्धरण षट्प्राभृतटीका का है। बोधप्राभृत की २७ वीं गाथा का स्पष्टीकरण करते हुए लेखक ने तीर्थों की गणना की है, इस में २७ क्षेत्रों का नामोल्लेख है जो मूल उद्धरण में देखा जा सकता है। दूसरी रचना पार्श्वनाथस्तोत्र है। इस के १५ पद्यों में पार्श्वनाथ के पूर्वभवसहित जीवनवृत्त का संकलन कर के अन्तिम पद्य में लेखक ने जीरापल्ली नगर के उत्तम महिमा से युक्त पार्श्वनाथ को वन्दन किया है। तीसरा उद्धरण पल्यविधान व्रतकथा की प्रशस्ति का है। ईडर के राजा भानु के मन्त्री भोज का उल्लेख कर लेखक ने उन के कुटुम्ब का विवरण दिया है – विनयदेवी उनकी पत्नी थी, कर्मसिंह, काल, घोरर तथा गंग ये चार पुत्र थे एवं पुत्तलिका यह

कन्या थी। पुत्तलिका ने विधिपूर्वक पल्यविधानव्रत कर के संघसहित गजपंथ एवं तुंगीगिरि की यात्रा की थी। उसी के बाद मल्लिभूषण गुरुकी आज्ञा से लेखक ने प्रस्तुत कथा की रचना की थी।

विद्यानन्दि एवं मल्लिभूषण के समयानुसार श्रुतसागर का समय भी सन १४५० से १५३० तक निर्धारित होता है (भट्टारक सम्प्रदाय पृ. १९५–१९७)। तत्त्वार्थसूत्रवृत्ति, यशस्तिलकचन्द्रिका, महाभिषेक-टीका, तत्त्वत्रयप्रकाशिका, श्रुतस्कन्धपूजा, औदार्यचिन्तामणि प्राकृत-व्याकरण, सहस्रनामटीका, षट्प्राभृतटीका एवं कई व्रतकथाओं की आपने रचना की थी। पं. परमानन्द शास्त्रीने एक लेख में इन का विवरण प्रस्तुत किया है (अनेकान्त वर्ष ९ किरण १२)।

बोधप्राभृतटीका (गाथा २७)

ऊर्जयन्त-शत्रुंजय-लाटदेशपावागिरि-आभीरदेशतुंगीगिरि-नासिक्यनगरसमीपवर्ति-गजध्वजगजपन्थ-सिद्धकूट-तारापुर-कैलासाष्टापद-चम्पापुरी-पावापुरी-वाराणसीनगरक्षेत्र-हस्तिनागपत्तन- सम्मेदपर्वत-सह्याचल-मेढ्रगिरि-वैभारगिरि-रूप्यगिरि-सुवर्णगिरि-रत्नगिरि-शौर्यपुर-चूलाचल-नर्मदातट-द्रोणीगिरि-कुन्थुगिरि-कोटिकशिलागिरि-जम्बूकवन-चलनानदीतट-तीर्थंकरपञ्चकल्याणकस्थानानि।

पार्श्वनाथ स्तोत्र (अनेकान्त वर्ष १२ पृ. २४०)

त्रैलोक्ये स शिरोविभूषणमणे सम्मेदमुक्ते विभो
जीरापल्लिपुरप्रकृष्टमहिमन् मौकुन्दसेवानिधे।
श्रीमत्पार्श्वजिनेन्द्रचन्द्रचलनालग्नस्य दासस्य मे
नाम्नैव श्रुतसागरस्य शिवकृद् भूया भवोच्छित्तये॥ १५॥

पल्यविधान कथाप्रशस्ति

श्रीभानुभूपतिभुजासिजलप्रवाह-
निर्मग्नशत्रुकुलजाततत्प्रभावः।
सद्वुध्यहुंवृह(हुंवड ?)कुले वृहतीलदुर्गे
श्रीभोजराज इति मन्त्रिवरो वभूव॥ ४४॥

भार्यास्य सा विनयदेव्यभिधा सुघोप-
सोद्गारवाक् कमलकान्तमुखी सखीव।
लक्ष्म्याः प्रभोर्जिनवरस्य पदाब्जभृङ्गी
साध्वी पतिव्रतगुणा मणिवन्महार्घ्या॥ ४५॥

सासूत भूरिगुणरत्नविभूषिताङ्गं
श्रीकर्मसिंहमिति पुत्रमनूकरत्नम् ।
कालं च शत्रुकुलकालमनूनपुण्यं
श्रीघोषरं घनतराघगिरीन्द्रवज्रम् ॥ ४६ ॥

गङ्गाजलप्रविलोच्यमनोनिकेतं
तुर्यं च वर्यतरमङ्गजमत्र गङ्गम् ।
जाता पुरस्तदनु पुत्तलिका स्वसैषां
वक्त्रेषु सज्जिनवरस्य सरस्वतीव ॥ ४७ ॥
सम्यक्त्वदार्ढ्यकलिता किल रेवतीव
सीतेव शीलसलिलोक्षितभूरिभूमिः ।
राजीमतीव सुभगा गुणरत्नराशिः
वेला सरस्वति इवाञ्चति पुत्तलीह ॥ ४८ ॥
यात्रां चकार गजपन्थगिरौ ससङ्घा
ह्येतत् तपो विदधती सुदृढव्रता सा ।
सच्छान्तिकं गणसमर्चनमर्हदीश-
नित्यार्चनं सकलसङ्घसदत्तदानम् ॥ ४९ ॥
तुङ्गीगिरौ च बलभद्रमुनेः पदाब्ज-
भृङ्गी तथैव सुकृतं यतिसिश्चकार ।
श्रीमल्लिभूषणगुरुप्रवरोपदेशात्
शास्त्रं व्यधाय यदिदं कृतिनां हृदिष्टम् ॥ ५० ॥

(अनेकान्त वर्ष ९ किरण १२):

---

१५. सिंहनन्दि

मूलसंघ – बलात्कारगण के भट्टारक सिंहनन्दि श्रुतसागर के समकालीन सहयोगी थे । अतः उन का समय पन्द्रहवीं सदी का उत्तरार्ध सुनिश्चित है (भट्टारक सम्प्रदाय पृ. १९६)। इन की गुजराती रचना माणिकस्वामी विनती हमारे हस्तलिखित संग्रह से आगे दी जाती है। इस में १४ पद्य हैं तथा इस की प्रमुख बातें इस प्रकार हैं – पद्य १ माणिकस्वामी तेलंग देश के कुलपाक पुर में हैं, २ भरत राजा द्वारा इन्द्रनील रत्न की मुद्रिका के रूप में आदिजिनेंद्र की जो मूर्ति बनाई

गई वही माणिकस्वामी हैं, ३ बाद में यह मूर्ति इन्द्रभुवन में रही, ४ लंका में राजा रावण के यहां मन्दोदरी ने इस की पूजा की, ५ दुःषमा काल में यह मूर्ति समुद्र में मग्न रही जहां धरणेन्द्र ने उस की पूजा की, ६-७ शासनदेवी की आज्ञा से शंकरराय ने इस मूर्ति को प्राप्त कर कुलपाक में उत्तम मन्दिर बनवाया, ८ माणिकस्वामी जटामुकुट से सुशोभित हैं, ९-१० यहां आनेवाले संघ स्वामी को नित्य नये वेश पहनाते हैं, ११ तरह तरह के फूलों से बने मुकुट पहनाते हैं, १२ मंदिर में स्त्रियां माणिकस्वामी के सुंदर नाम के गीत गाती हैं।

टिप्पण—मूलसंघ के भ. शुभचन्द्र के एक शिष्य भ. सिंहनन्दि ने सं. १६६७ में पंचनमस्कारदीपक नामक ग्रंथ लिखा था (जैन ग्रंथ प्रशस्ति संग्रह भा. १ पृ. २४) ये सिंहनन्दि उपर्युक्त सिंहनन्दि से कोई एक सदी बाद के हैं। प्रस्तुत गीत के कर्ता ने अपने गुरु का नाम नहीं दिया है। अतः यह कहना कठिन है कि यह इन दोनों में किस सिंहनन्दि की रचना है।

माणिकस्वामी विनति

तेलंग देश मझारि कुलपाकपुर जाणियए।
महिमा मेरु समान माणिकस्वामी वखाणियए॥ १॥
आदि अनादि जिणंद भरतेश्वर करि मुद्रिकाए।
इंद्रनील माणिकसार तेहतणी मूरत जाणियए॥ २॥
देहरासार तिठामि काल घणा प्रभु पूजियए।
इंद्रभुवन अभिराम पछे स्वामी तिहाँ रह्याए॥ ३॥
लंकानयरि मझारि जिहाँ रावण राजियोए।
तस घरणी सुविचार मंदोदरी प्रभु पूजियोए॥ ४॥
जाण्यो दुखम काल स्वामी सायर संचर्याए।
परमेश्वर पइआल धरणेंद्रे प्रभु पूजियाए॥ ५॥
सासनदेवी प्रमाण संकरराय जाणियोए।
कालत्रय कुलपाक पुण्यप्रभावि आवियाए॥ ६॥
उत्तम तोरण प्रासाद संकरराये करावियाए।
प्रभु बैठा तिणि ठाम महिमा पडयो वजावियोए॥ ७॥

धन धन माणिकस्वामी कुलपाकपुर जाणियोए ।
जटामुकुट सिरि सार भाल तिलक रवि चांद लोए ॥ ८ ॥
नाभि लिंगाकार जिनवर जगमाहि गुणनिलोए ।
महिमा मेरु समान संघ आवी सदा घणोए ॥ ९ ॥
पहिरे नवनवा वेस पाय पूजी जिनवर तणोए ।
चंदन केशर घोल सुवर्ण सीप भरि करीए ॥ १० ॥
जाइ जुइ मचकुंद चंपकमाला चउलरिए ।
मुगट भरे सुविचार एणि परि प्रभुं पूजियाए ॥ ११ ॥
गावे गीत रसाल जिनमंदिर सवि सुंदरिए ।
धनधन माणिक स्वामी नाम तुम्हारो सोहामणोए ॥ १२ ॥
धन धन तीरथ ठाम दीजे रंग वधा मणोए ।
जे पूजे जगदीस ते सदा संपदा सुख लहिए ॥ १३ ॥
पूरे मनोरथ जगि सार कर जोडि गुरु सिंहनंदि भणिए ।
तेहनि पुण्य अपार भणे भणावि भाव धरिए ॥ १४ ॥

---

१६. अभयचन्द्र

मूलसंघ – बलात्कारगण के भट्टारक अभयचन्द्र लक्ष्मीचन्द्र के शिष्य थे। इन का ज्ञात समय सन १४९२ है (भट्टारक सम्प्रदाय पृ. २००)। हमारे हस्तलिखित संग्रह से आगे उद्धृत किया हुआ मांगीतुंगी गीत सम्भवतः इन्ही की रचना है। गीत गुजराती में है तथा इस में ४४ पद्य हैं। इस का सारांश इस प्रकार है – पद्य ३ सोरठ देश की द्वारिका नगरी में नारायण (श्रीकृष्ण) और बलभद्र राज्य कर रहे थे ४ एकवार दोनों ने गिरनार पर्वत पर श्रीनेमिनाथ के दर्शन किये तथा ५-६ द्वारका का अन्त कैसे होगा यह प्रश्न पूछा ७-८ भगवान ने उत्तर दिया कि बारा वर्ष बाद अग्नि से द्वारका नष्ट होगी, कृष्ण और बलभद्र वन में जायेंगे तब जरतकुमार के बाण से कृष्ण की मृत्यु होगी ९-१० दोनों भाई द्वारका लौटे, यथासमय द्वारका में अग्निप्रलय हुआ, ११ कृष्ण ने कोलाहल सुना, बलभद्र ने समुद्र के पानी से आग बुझाने का प्रयत्न

किया लेकिन तब पानी भी तेल जैसा हो गया १२-१५ मातापिता को द्वारका के बाहर लाना भी संभव नही हुआ, सब वैभव छोडकर कृष्ण और बलभद्र निकले तथा १६-१७ पैदल चलते हुए वन में गये १८-१९ कृष्ण को बहुत प्यास लगी इस लिये बलभद्र पानी लाने गये २०-२१ तभी सोते हुए कृष्ण को वनचर जीव समझ कर जरतकुमार ने बाण मारा जिस से कृष्ण की मृत्यु हुई २२-२६ कृष्ण को अचेत देख कर बलभद्र शोकाकुल हुए और उन्हें मनाने लगे २७-२९ मोह से व्याप्त बलभद्र ने कृष्ण का शरीर ले कर छह महीने भ्रमण किया, तब देवों ने उन्हें समझाया ३०-३१ मैं कुंआरी भूमि पर कृष्ण का दाह संस्कार करूंगा यह सोच कर बलभद्र दुर्गम जंगल में मांगीतुंगी पर चढे तथा वहां दाह किया ३२-३५ कृष्ण ने समय रहते धर्मचिन्तन नही किया यह सोच कर बलभद्र विरक्त हुए और मुनिधर्म स्वीकार कर ध्यान साधना करने लगे ३६-४२ एकबार जैतपुर में पारणा के लिये वे गये तब स्त्रियां उन के सुन्दर रूप को देख मोहित हुईं, एक स्त्रीने पानी भरते हुए घडे के स्थान पर अपने बालक को ही फांस लगाया, यह देख कर दुखी हो बलभद्र पर्वत पर लौटे तथा अनशन कर पांचवें स्वर्ग में उत्पन्न हुए, अगले चतुर्थ काल में वे तीर्थंकर होंगे ४३-४४ इसी तुंगीपर्वत पर रामचंद्र, हनुमान आदि ९९ कोटि मुनि मुक्त हुए थे।

मांगीतुंगी गीत

श्रीपतिनुत जिन वांदीइ रे भजीइ ते भारती मायि रे।
श्रीबलभद्र मुनि गुण गाइसुँ रे नितु तुंगीगिरकेरो राय रे ॥ १ ॥
मांगी तुंगी जैनि भेटसुँरे रुयडा श्रीबलभद्र स्वामी रे।
नामी ते नवनिधि पामीइ रे नवाणूं कोडि सिद्धा ठामि रे ॥ २ ॥
सोरठ देस माँहि सोभता रे भजता ते द्वारिका मँझारि रे।
नारायण बलभद्र बेडली रे पालि ते राज उतंग रे ॥ ३ ॥
एकवार दोए बंधव चालीया रे भेटवा ते श्रीगिरनारि रे।
समोसरणि जैईने पुछीयु रे तिहां वांद्या श्रीनेमिजिणंद रे ॥४॥
धर्म उपदेस सुधो सांभलँ रे पाम्या ते परमानंद रे।
बलदेवि हाथ जोडि करीरे पूछ्या श्रीनेमिकुमार रे ॥ ५ ॥

त्रिहुखंडकेरो काहान राजियो रे भोगवि राज महंतरे ।
देवतानी वासी रुडी द्वारिका रे तेहनु होसि कहि अंतरे ॥ ६ ॥
दिव्य वाणी जिण बोलीया रे घणी म करसो आस रे ।
बारमि वरसि अग्नि लागसि रे द्वारिका ते होसि विणास रे ॥ ७ ॥
निकलसु तम्हे दोए जणारे सांचरस्यो वनमझारि रे ।
जरतकुमार बाण मेहलसि रे मरसि ते देव मोरारि रे ॥ ८ ॥
काले माथे कृष्ण उठीया रे मंदिरि पुहुता दोइ चंग रे ।
कीधा कर्म नहि छुटीए रे रांक नि राय बलवंत रे ॥ ९ ॥
अवधि पुहुती वार वरसिनीरे उठी अगनिनी झाल रे ।
झालकालोल तव नीपनो रे सहुनो आव्यो अंतकाल रे ॥ १० ॥
काहानि कोलाहल सांबलु रे उठ्या बंधव बलदेवरे ।
समुद्र नयरमाँहि वालियो रे पाणी थयुँ जसु तेल रे ॥ ११ ॥
भागी आस्या नवि मासियुँ रे कहि काढीइ वसुदेव रे ।
रथ आणीनि वैसाडीया रे सांचरी न सकी तेणे खेव रे ॥ १२ ॥
आकासवाणी इम बोलीया रे भोला हुवा बलदेव रे ।
तम्हे दोए टाली को नहि नीसरे रे इम बोल्या श्रीनेमि जिणंद रे॥१३
हस्ती घोडा रथ मेहलिया रे मेहल्या ते सब परिवार रे ।
एकला दोए बंधव चालीया रे मेहल्या ते अरथभंडार रे ॥ १४ ॥
वापनि मायि तिहाँ मेहल्या रे मेहली ते सघली आस रे ।
देवता जस पाय सेवता रे पडीय वेलाँ को नहि साथ रे ॥ १५ ॥
हय गय पालखीइ विठा हिंडता रे चालता ते आपणे पाय रे ।
करमन खेवा नवि छूटीये रे मोटा ते बलवंत राय रे ॥ १६ ॥
रुदन करता आघा सांचर्‍या रे पुहुता ते वन मंझारि रे ।
पायक परवार कोई साथि नही रे दैव रुठो एकवार रे ॥ १७ ॥
विविध कुडी काहान बोली रे तृषा लागीछे अपार रे ।
पाणी आणीनि भाई पायजो रे वेगि मुलासो वार रे ॥ १८ ॥
काहान वचन कानि साँभलु रे उठया बलभद्र देव रे ।
काहान इहाँ तम्ही वेसंजो रे पाणी लावूं इणि खेवरे ॥ १९ ॥
वस्त्र ओढो सुता काहानजी रे तिहाँ आव्युं ते जरतकुमाररे ।
तिणि जाण्युं वनचर जीवडो रे बाण सांधुं तिणि वार रे ॥ २० ॥

वेगी करी बाण मुकीयु रे मार्‍यो ते देव मोरारि रे।
सहोदर पडुइसुँ चिंतवि रे धिग धिग ए संसार रे ॥ २१ ॥
वलभद्र जल लेइ आवीया रे वोल्या ते सुललितवाणी रे।
उठो माधव पाणी वावरु रे रीस म आणु जाणि रे ॥ २२ ॥
नीर लेइ मुखि नामीयुँ रे हेठु न उतरि कंठि रे।
विगे करि मुख नाहालुयुँ रे वोलो ते राय वइकुंठ रे ॥ २३ ॥
भोला भाई एक वोल द्यो रे घणी न धरीजे रीस रे।
आपण अवोला भाई कहि नहि रे वर समोथाइँ दीस रे ॥ २४ ॥
रुदन करतो दुखि पुरीयो रे सांभरि रुडु राज रे।
हा हा वली किम कीजीइ रे छेह दीधो दैवि आजि रे ॥ २५ ॥
संसार सागर दुखि पुरियो रे केहनु नहि वली कोए रे।
वलभद्र एकलो दुख भोगवे रे छोडो गयो सहू कोए रे ॥ २६ ॥
मोहनि करमि घणो पीडीयो रे हाथि वैसाडयो काहान देवरे।
दक्षिण दिसा लेई चालीयो रे जोवो जोवो करमन खेवरे ॥ २७ ॥
रसोइ करु भाइ रुवडो रे मनोहर आपु रुडा अन्न रे।
भोजन करो भाइ अम्ह भणी रे हेठु करो निज मन रे ॥ २८ ॥
दिन प्रति इय भणतो सांचरे हवा जव षट् मास रे।
देवता आवीनि सवोधीया रे भागी भागी मनतणी आस रे ॥ २९ ॥
विलाप करतो पगलाँ भरेरे सांभरि रे रुडा राज रे।
दहन करु महा काहाननि रे जिहाँ होइ कुँआरी भूमि रे ॥ ३० ॥
मांगीतुंगी जइ चढी करि रे जोयो ते विषमो ठाम रे।
केशव लेई परजालियो रे चिंतवे अणुपेहा साररे ॥ ३१ ॥
त्रिहु खंड केरो कान्ह राजियो रे उदय आव्यो जव कर्म रे।
संवल न कीवो काँइ आपणो रे कीधो न अवसरि धर्म रे ॥ ३२ ॥
विमणु वैराग वली पामीयुँरे छांडयो ते राग नि रोस रे।
अभितर वाहिज छांडीयारे धर्‍यो दिगंवर वेष रे ॥ ३३ ॥
पंच महाव्रत उच्चरी रे समिति गुपति सविसाल रे।
अठावीस मूलगुण उधर्‍या रे मूका मायानुँ जाल रे ॥ ३४ ॥
घोरवीर तप मुनि आचरे रे जोग धर्‍यो षट्मासरे।
चिद्रूप ध्यान करे उजलो रे मूकी सरीरनी आस रे ॥ ३५ ॥

एकवार पारणु केरवा उतऱ्या रे आव्या जैतापुर सारे।
रूपि त्रिभुवन मोहिया रे मोते सहु पाणीहारि रे ॥ ३६ ॥
पाणीहारी तव चिंतवे रे एहवुँ अनोपम रूप रे।
एहवो वर जव पामीइँ रे पूज्या होइ जिनभूप रे ॥ ३७ ॥
मोह पामी एक सुंदरी रे निहाले वलिभद्र स्वामी रे।
वालक गले पास घालीयुँ रे जाण्युँ घडानु ठाम रे ॥ ३८ ॥
वलिभद्र मुनि जोइ उचरे रे विकल थइ काँइ नारि रे ।
हजी मुझ रूप थिय वडुँरे हवि नहि आवुँ नयरमझारि रे ॥ ३९ ॥
अंतराय पाडी पाछया वल्या रे सहि मुनि उपनुँ दुखरे।
विषम परवत माहि पसिया रे जिहाँ नहि देखि कोइ मुख रे ॥ ४०
वैराग खडगि मोह मारीयो रे माऱ्यो ते दुरधर कामरे।
अवसाणि अणसण भावीयुँ रे पाम्या ते देवलोकि ठाम रे ॥ ४१ ॥
पांचमि स्वर्गि देव उपनो रे रुद्धि विरिद्धि नही पार रे।
चउथे कालि इहाँ आवसे रे होसे तीर्थंकर सार रे ॥ ४२ ॥
रामचंद्र इहाँ मोखिं गया रे पाम्या ते हणुमंत वीर रे।
एवंकारे मुनिवर गया रे निवाणुँ कोडि सिद्धा ठाम रे ॥ ४३ ॥
भाविं भवियण गावज्यो रे भणी अभयचंद्र सूरिरे।
वलिभद्र जइनि जुहारज्यो रे पाप जाए जिम दूरि रे ॥ ४४ ॥

---

१७. गुणकीर्ति

मराठी जैन साहित्य के प्राचीनतम लेखकों में गुणकीर्ति का समावेश होता है। वे मूलसंघ – वलात्कारगण के भट्टारक भुवनकीर्ति और ब्रह्म जिनदास के शिष्य थे। इस से उन का समय सन १४७० से १५०० तक अनुमानित होता है। उन का गद्य ग्रन्थ धर्मामृत शोलापुर की जीवराज जैन ग्रन्थमाला द्वारा सन १९६० में प्रकाशित हुआ है। इस ग्रन्थ के परिच्छेद १६७ में तीर्थक्षेत्रों को वन्दन किया गया है। निर्वाणकाण्ड तथा अतिशयक्षेत्रकाण्ड के तीर्थों के अतिरिक्त इस में उल्लिखित तीर्थ इस प्रकार हैं – कर्णाटक के पाडवदेव, कुल्लपाल्य के

माणिकस्वामी, व तिलकपुर के चन्द्रनाथ। हमारे संग्रह से तुंगीगीत नामक रचना इस परिच्छेद के साथ दी जा रही है वह भी सम्भवतः इन्ही गुणकीर्ति की रचना है। निर्वाणकाण्ड के अनुसार तुंगीगिरि का माहात्म्य इस में वतलाया है। धर्मामृत के परिच्छेद १५८ में लेखक ने सभी तीर्थंकरों के जन्मनगरों का भी उल्लेख किया है। पद्मपुराण, रुक्मिणीहरण, द्वादशानुप्रेक्षा तथा कुछ स्फुट गीत ये गुणकीर्ति की अन्य रचनाएं हैं।

तीर्थवंदना

(धर्मामृत-परिच्छेद १६७)

८

चतुर्थ कालामध्ये अनेक सिद्धि जालि। ते सिद्धक्षेत्र सांघेन आता। कविलास पर्वति श्रीयुगादिदेव आदिश्वरु सिद्ध जाले। ते सिद्धक्षेत्रासि नमस्कारु मांझा। चंपापुरी श्रीवासुपूज्य सिद्ध झाले। उर्जंत महासिद्धगिरिपंथु श्रीनेमिश्वरु स्वामि पज्जण्णु अनुरुद्ध मुख्य करौनि सातसे वाहात्तर कोडि यादवराय सिद्धि पावले। त्या सिद्धासि नमस्कारु माझा पावापुर नगरि श्री वर्धमान चोविसवा तिर्थंकरु सिद्धिसि पावले। त्या सिद्धक्षेत्रासि नमस्कारु माझा। संमेद माहागिरि पर्वति वीस तीर्थंकर अहूठ कोडि मुनिस्वरु सिद्धि पावले त्या सिद्धक्षेत्रासि नमस्कारु माझा। नागद्रह नगरि पार्श्वनाथासि नमस्कारु माझा। आसारम्य पाटणि मुनिसुव्रता देवासि नमस्कारु माझा। अवंति शांतिनाथु नमस्कारु माझा। पोयणापुरि नगरि श्रीवाहुवलिसि नमस्कारु माझा। मंगलावति नगरि अभिनंदन देवासि नमस्कारु माझा। हस्तनागपुरि श्रीशांतिनाथु कुंथुनाथु अरनाथु देवासि नमस्कारु माझा। वाणारसि नगरि श्री पार्श्वनाथ सुपार्श्वनाथ देवासि नमस्कारु माझा। पावा महागढि श्रीलवांकुश मुख्य करोनि पांच कोडि सिद्धि पावले त्या सिद्धक्षेत्रासि नमस्कारु माझा। सेत्रुंजगिरिपर्वति पांडव धर्म भिम अर्जुन मुख्य करौनि आठ कोडि मुनिस्वरु सिद्ध जाले त्या सिद्धक्षेत्रासि नमस्कारु माझा। तारांगागिरि पर्वति वरंगु मुनि मुख्य करौनि आहूट कोडि मुनिश्वरु सिद्ध जाले त्या सिद्धक्षेत्रासि नमस्कारु माझा। वडवाणि नगरि चुलगिरि पर्वति कुंभकर्ण इंद्रजित मुख्य करौनि आऊट कोडि मुनि सिद्ध जाले त्या सिद्धक्षेत्रासि नमस्कारु माझा। धारासिव नगरि आगलदेवासि नमस्कारु माझा। श्रीपुर नगरी अतिसयवंतु श्रीपार्श्वनाथु अंतरिक्षु त्या देवासि नमस्कारु

माझा। तूलागिरि पर्वति संखु देव त्या देवासि नमस्कारु माझा। वडवाणि नगरि त्रिभुवनतिलकु त्या देवासिं नमस्कारु माझा। तुंगिगिरि माहापर्वति श्रीरामदेव हनुमंतु सुग्रिव गवय गवाखु निलु महानिलु वलिभद्रु आदि करौनि नव्हाणौ कोडि महामुनि सिद्धिसि पावले। त्या सिद्धासि नमस्कारु माझा। नर्वदेचा तिरि रावणाचे पुत्र साडेपांच कोडि माहामुनि सिद्धिसि पावले त्या सिद्धासि नमस्कारु माझा। कर्णाटकें वाडवदेवा नमस्कारु माझा। कुल्लपाख्य माणिकस्वामिस नमस्कारु माझा। तिलकपुरि पाटणि चंद्रप्रभदेवासि नमस्कारु माझा। शवणागिरि पर्वति आहूठ कोडि सिद्धासि नमस्कारु माझा। मेढगिरि आहूठ कोडि मुनि सिद्धि पावले त्या सिद्धासि नमस्कारु माझा। नर्वदेचा उपकंठि सिद्धकुट पर्वति आहूठ कोडि सिद्धासि नमस्कारु माझा। वंसथल पर्वति कुलभूषण देशभूषण मुनिस्वर सिद्धि पावले त्या सिद्धासि नमस्कारु माझा गजपंथ पर्वति आठ कोडि सिद्धासि नमस्कारु माझा। फलहोडि ग्रामि आहूठ कोडि सिद्धासि नमस्कारु माझा। तारागिरि पर्वति आऊठ कोडि सिद्धासि नमस्कारु माझा। चलणा नयतटाकि आहूठ कोडि सिद्धासि नमस्कारु माझा। अष्टापद पर्वति नागकुमारु वाल महावाल आदि अनेकां सिद्धासि नमस्कारु माझा। कलिंगदेसि कोडिसिलेवरि कोडि सिद्धासि नमस्कारु माझा। सिद्धगिरि पर्वति अनेका सिद्धासि नमस्कारु माझा। जंवुस्वामि सिद्ध पुरपासि नमस्कारु माझा। नर्वदा उभयतिरि अनंत सिद्धासि नमस्कारु माझा। अष्ट कुलपर्वति पंचमेरुसिखरि समस्त आर्यखंडामध्ये जे जे भूमिकेवरि सिद्ध आले त्या सिद्धासि नमस्कारु माझा।

तुंगीगीत

तुंगीया गिरि गढ गरुवा भाई रे अनेक सिद्धकेरा वास।
सुकलध्याने मन मय गल वाधा लाधा सिवपुरि वास ॥ १ ॥
सुणो भविकालो सुणो भविकालो रे सुणो सिद्धांतकेरी वाणी।
नव्हाणो कोडि मुनि सिद्धले भाई रे पावले मुगतिघरराणी ॥ २ ॥
श्रीराम हणवंत नल नील जांवुवंत गव गवाखी महाराजे।
सुग्रीव महायोगी सिवपुरी वैसले अनहत ध्वनि तिहां वाजे ॥ ३ ॥
क्रमखंडणखेत्र सुहरे रे लोह्या अहीनिसी करो तम्हे-भाव।
जन्म जरा मरन सर्व क्रम तुटे अवर न जानुं तम्ह पात ॥ ४ ॥
वलिभद्र महामुनि स्वर्गरिद्धि पावले अवर मुनिका नही पार।
सकल तीर्थकेरा तिलक तुंगेन्यरु गुणकीर्ति म्हणे भवतार ॥ ५ ॥

१८. मेघराज

इन की गुजराती तीर्थवंदना हमारे हस्तलिखित संग्रह से आगे दी जाती है। इस के पहले १८ पद्यों में निर्वाणकाण्ड का अनुवाद है तथा शेष चार पद्यों में श्रीपुरपार्श्वनाथ, वेलगुल के गोमटस्वामी; तेरपुर के वर्धमान, पोयनापुर के बाहुबली, समुद्र के आदिनाथ, लक्ष्मीस्वर के शंखजिनेंद्र, हस्तिनापुर के शांतिनाथ, कुंथुनाथ, तिलकपुर के चंद्रनाथ, नागद्रह के पार्श्वनाथ, डभोई के पार्श्वनाथ, व जीराउल के (पार्श्वनाथ) इन ११ तीर्थों का वंदन है। रचना में लेखक ने अपना परिचय नही दिया है। किन्तु हमारे अनुमान से ये वही मेघराज हैं जिन का गुजराती शांतिनाथ पुराण एवं मराठी जसोधररास प्राप्त है। जसोधररास की प्रस्तावना में प्रो. अक्कोळे ने इन के विषय में विस्तृत जानकारी दी है। ये ब्रह्म जिनदास के शिष्य ब्रह्म शान्तिदास के शिष्य थे। अतः उन का समय सोलहवीं सदी का प्रारम्भ निश्चित होता है। मराठी में इनका लिखा हुआ पार्श्वनाथभवान्तर भी प्राप्त है।

तीर्थवंदना

भरत क्षेत्र मझार सिद्धक्षेत्र कहु सोहजलाए।
एह अवसर्पिणि काल आर्यखंड माहि निर्मलाए ॥ १ ॥
कइलास आदिजिनंद वासपुज्ज चंपापुरीए।
सिद्ध वीर जिनंद नगर कहु पावापुरीए ॥ २ ॥
सातसे बहोत्तर कोडि गिरनारे मुनिवर सिद्ध गयाए।
तिहा स्वामी नेमि जिनंद तीर्थंकर मुक्ति गयाए ॥ ३ ॥
पज्जुन्न संबुकुमार गजकुमार मुनि आदि करीए।
गिरनारि गिरि वर सार मुक्ति गया स्वामी ध्यान धरीए ॥ ४ ॥
वलि जिनवर जे वीस सिद्ध हवा स्वामी संमेदगिरीए।
सुरनर करे तिहा जात्र पूज रचे वडभाव धरीए ॥ ५ ॥
पावागिरि पांच कोडि लहु अंकुस सिद्धि गयाए।
तारापुर वरदत्त आदि अउठ कोडि मुनि गयाए ॥ ६ ॥
सेत्तुंजे गिरि आठ कोडि पांडुपुत्र तिन जानिजोए।
सिद्ध हवा मुनिराज जिनसासनि वखानिजोए ॥ ७ ॥

बलदेव सात सहित जादवपति सुत मुनि कहीए।
गजपंथ गिरिवर सार मुनिवर स्वामी सिद्ध हवाए ॥ ८॥

राम सुग्रीव सहित कोडि नव्याणु जानिजोए।
स्वर्गे गया बलदेव तुंगीए सिद्ध वखानियोए ॥ ९॥

नंगानंग कुमार सहित कोडि साढे पंच कहीए।
सिवणागिरि वर सार मुनिवर स्वामी मुक्ति लहीए ॥ १०॥

रावणपुत्रसहित पंच कोडि अर्ध जानिजोए।
रेवा उभय तडाग सिद्ध हवा स्वामी महितलीए ॥ ११॥

कुंथलगिरिवर सार देसभूषण कूलभूषणए।
उपसर्ग टाले राम सिद्ध हवा जगमंडणए ॥ १२॥

कोडिशिला मुनिकोडि जसहरनंदन पंचसतए।
कलिंगदेसे हवा सिद्ध सुरनर नित चरने नमीए ॥ १३॥

वलि मुनि सिद्ध बहुत वरदत्त रंग आदि करीए।
रीसंदिगिरिवर जाण तेहु वांदु भाव धरीए ॥ १४॥

वडवानि नगर सुतीर्थ पश्चिम चुलगिरि जानिजोए।
कुंभकर्ण इंद्रजित सिद्ध हवा ते वखाणिजोए ॥ १५॥

वलि ते सुमि मझारि त्रिभुवन तिलक छे जिणप्रतिए।
चोथा कालनि होए तीन काल वंदामियए ॥ १६॥

मेंढागिरि मुनि सिद्ध अउठ कोडि मुक्ति गयाए।
बाल मुनि महाव्याल अछेद अभेद स्वामि कह्याए ॥ १७॥

नागकुमार प्रमुख अष्टापद मुक्ति गयाए।
भव्य जीव करे जात्र सुरनर मनि ते भावियाए ॥ १८॥

श्रीपुर पारिश्वनाथ गोमटस्वामी वेलगुलेए।
तेरपुर वर्द्धमाण पोयनापुरे वंदु बाहुबलिए ॥ १९॥

समुद्रमाहे आदिनाथ संखजिनंद्र लक्ष्मीस्वरेए।
तेहु वांदु भावसहित शांति कुंथ हथिनापुरेए ॥ २०॥

तिलकपुरे चंद्रनाथ नागेंद्र श्रीपासजिनए।
घडभोद कोटमा पास जिराउल जिन वांदसुए ॥ २१॥

वलि जिहां जिहां हुवा सिद्ध जल थल आकास गृह गहीए।
तेहु वांदु तिनकाल मेघराज कहे भाव धरीए ॥ २२॥

---

१९. सुमतिसागर

मूलसंघ – बलात्कार गण की सूरत शाखा के भट्टारक अभयनन्दि के शिष्य सुमतिसागर की पांच रचनाएं ज्ञात हैं – षोडशकारण पूजा, दशलक्षण पूजा, व्रतजयमाला, जम्बूद्वीप जयमाला तथा तीर्थजयमाला। इन में से चौथी रचना के कुछ अंश तथा पांचवीं रचना पूर्ण रूप से आगे दी जाती हैं। जम्बूद्वीप जयमाला में उल्लिखित तीर्थ इस प्रकार हैं – १ अष्टापद २ संमेदगिरि ३ चंपापुरी ४ पावापुरी ५ बावनगज ६ समुद्रजिन ७ त्रिभुवनतिलक महावीर ८ गजपंथ ९ तुंगी १० शत्रुंजय ११ विंध्याचल १२ अमीझरो पार्श्वनाथ, शीतलनाथ, चन्द्रप्रभ तथा आदिनाथ १३ मगसी पार्श्वनाथ १४ कलिकुंड पार्श्वनाथ १५ छाया पार्श्वनाथ १६ माणिकस्वामी १७ गोमटेश्वर १८ अंतरिक्ष (पार्श्वनाथ) १९ शंखेश्वर (पार्श्वनाथ) २० चिन्तामणि (पार्श्वनाथ) २१ पाली शांतिनाथ २२ गिरनार नेमिनाथ। तीर्थजयमाला में इन से अधिक निम्न तीर्थों का उल्लेख है – २३ मुक्तागिरि २४ नागपंथ २५ तारंगा – कोटिशिला २६ वांसीनयर – देशभूषण – कुलभूषण २७ रेवातीर २८ पैठन – मुनिसुव्रत २९ वेरुल ३० डोंगरपुर – जटासहित आदिनाथ ३१ धुलेव ३२ अझारा ३३ वडाली – अमिझरो (पार्श्वनाथ) ३४ मांडव – महावीर ३५ उज्जैन – चिन्तामणि (पार्श्वनाथ), ३६ अवन्ति शांतिनाथ ३७ सारंगपुर – महावीर ३८ जांबुनेर – जटासहित आदिनाथ ३९ अलवर – रावणपार्श्वनाथ ४० गोपाचल – बावनगज।

सुमतिसागर अभयनन्दि के शिष्य थे। अभयनन्दि के गुरु अभयचन्द्र का ज्ञात समय सन १४९२ है तथा अभयनन्दि के बाद के पट्टाधीश रत्नकीर्ति सन १६०६ में विद्यमान थे। अतः सुमतिसागर का समय उन के गुरु के समयानुसार सोलहवीं सदी के मध्य में निश्चित होता है [भट्टारक सम्प्रदाय पृ. २००]।

जंबूद्वीप जयमाला

अष्टापद संमेदगिरि चंपापुरि पावापुरि महामुनि जिन कहिया ।
केवलज्ञान सुचंद्रप्रकाशे जे लहिया ॥ ३७॥
बावनगज वरसमुद्रजिन त्रिभुवनतिलक सुवीर महामुनि. ॥ ३८ ॥
गजपंथ तुंगि सेत्रुंजाए विंध्याचलगिरि सार महामुनि. ॥ ३९ ॥
पास अमीझर शीतलए चंद्रनाथ आदिनाथ महामुनि. ॥ ४० ॥
मगसि पास कलिकुंड जिन छाया जिन सुपास महामुनि. ॥ ४१ ॥
मानिकस्वामी गोमटए अंतरिक्ष संखेस महामुनि. ॥ ४२ ॥
चिंतामनि श्रीसांतिजिन पालि नेमि गिरनारी महामुनि ॥ ४३ ॥
उर्धलोक वलि वांदिसुए चैत्यालय असंख्य महामुनि. ॥ ४४ ॥
सोल स्वर्ग नव ग्रैवेकए पूज्यो नवसो विमान महामुनि. ॥ ४५ ॥
पंच पंचोत्तरि पंचजिन पूजंता भवहानि महामुनि. ॥ ४६ ॥
सिद्ध अनंतानंत कह्या मुक्तिलोक भवतार महामुनि. ॥ ४७ ॥
पद्मनंदि देवेंद्रमुनि विद्यानंदि महंत महामुनि. ॥ ४८ ॥
मल्लिभूषण बाल ब्रह्मचारो लक्ष्मीचंद्र यतिराय महामुनि. ॥ ४९ ॥
अभयचंद्र रूपवंत गुण अभयनंदि गुणधार महामुनि. ॥ ५० ॥
श्रीसुमतिसागर देवेंद्र भणि त्रिभुवनतिलक जयमाल महामुनि. ॥५१
जे नरनारि त्रिकाल भणे संपति पामे सुपुत्र महामुनि ॥ ५२ ॥
रूप सरीर निरोग लहे सुनता पुण्य अपार महामुनि. ॥ ५३ ॥
सकलविघ्ननो नास होए भंजे भवजंजाल महामुनि. ।
(घत्ता) श्रीजिनगुणमाला जिनगृहमाला माला त्रिभुवनविषभर ।
पूजइ सुभमाला मुक्तिय माला महित सुमति सुविधिकरण ॥ ५५ ॥

तीर्थ जयमाला

वंदो भवियण मनवचकाया शुद्ध करी वर तीर्थ मही ।
ते भवभयभंजन मुनिजनरंजन गंजन कामकठोर सही ॥ १ ॥
सुसंमेदाचल पूजो संत । सुवीस जिनेश्वर मुक्ति वसंत ॥
सुचंपापुरि वासुपूज्य जिनेंद । सुपावापुरि वर वीर मुनींद्र ॥ ६ ॥
सुवंदो नेमिनाथ गिरिनारि । सुमुक्तागिरि पूजो संसारि ॥
सुवंदो तुंगीगिरि भवतार । सुनागपंथ वंदो भवपार ॥ ७ ॥
सुगजपंथ सेत्रुंज महाठाम । सुनामे उत्तम पासु ठाम ॥
सुतारंग कोडिसिला पवित्र । सुसमरे आतम होय पवित्र ॥ ८ ॥

सुवांसीनयर मनोहर चंग। सुदेशकुलभूषण मुनिरंग ॥
सुरेवातीरे सिद्ध अनंत। सुदेखे पाप गले अनंत ॥ ९ ॥
सुपैठन मुनिसुव्रत प्रसिद्ध। सुनामे नवनिधि होइ प्रसिद्ध ॥
सुवेरुल नयर अतिसयचर्य। सुसुनता भवियण होइ अचर्य ॥ १० ॥
सुविंझाचल बावणगज देव। सुगोमट माणिकस्वामी सेव ॥
सुअंतरिक्ष वंदे सुख थाय। सुसंखजिनेश्वर-छायाराय ॥ ११ ॥
सुडोंगरपुर वर सामलो देव। सुजटा सहित आदिदेव सुसेव ॥
सुधुलेवगाम कह्या जिनस्वामी। सुदेव अझारा चारुपनाम ॥ १२ ॥
सुगाम वडाली नाम विशाल। सुअमीझरा पूजो गुणमाल ॥
सुचर्चो मांडव श्रीमहावीर। सुचिंतामणि उज्जेनी धीर ॥ १३ ॥
सुशांति अवंति राय सुधार। सुसारंगपुर महावीर सुसार ॥
सुजांबुनेरि वर नगर गंभीर। सुजटासहित आदिदेव सुवीर ॥ १४ ॥
सुवंदो पालि शांत जिनराय। सुपूज्यपाद कियो नयनविराज ॥
सुअलवर रावणपास जिनेंद्र। सुबावनगज गोपाचल चंद्र ॥ १५ ॥
सुवंदो जलधिदेव भगवंत। सुसवापांचसे दंड सुसंत ॥
सुनंदीश्वर कुंडलगिरि सार। सुरुजगिरि व्यंतरगेह अपार ॥ १६ ॥
(घत्ता) जय परमेश्वर बोध जिनेश्वर अभयनंदि मुनिवर शरणं।
जय कर्म विदारण भवभयवारण सुमतिसागर तव गुणचरणं ॥२०॥

---

२०. राजमल्ल

पंडित राजमल्ल ने सं. १६३२ = सन १५७६ में जम्बूस्वामी-चरित की रचना की। वे काष्ठासंघ – माथुरगच्छ के भ. हेमचन्द्र के आम्नाय के पंडित थे। लाटीसंहिता, छंदोविद्या, पंचाध्यायी तथा अध्यात्म कमल मार्तण्ड ये उन की अन्य रचनाएं हैं*। जम्बूस्वामिचरित के कुछ उद्धरण आगे दिये जाते हैं। इस ग्रन्थ की रचना साधु टोडर द्वारा आग्रह करने पर हुई थी। साधु टोडर भटानिया निवासी थे और मथुरा की

*राजमल्ल के विषय में माणिकचंद्र ग्रंथमाला में प्रकाशित लाटीसंहिता की प्रस्तावना में पं. मुख्तार ने विस्तृत विवरण दिया है।

यात्रा करने गये थे। वहां उन्हों ने जम्बूस्वामी, विद्युच्चर तथा अन्य पांचसौ मुनियों के जीर्ण स्तूप देखे। सं. १६३१ में टोडर ने इन स्तूपों का जीर्णोद्धार पूर्ण किया और उसी अवसर पर राजमल्ल द्वारा जम्बूस्वामी का यह चरित लिखा गया। इस के पर्व १२ से ज्ञात होता है कि जम्बूस्वामी तथा उन के गुरु सुधर्मस्वामी इन दोनों का निर्वाण विपुलाचल पर हुआ। पर्व १२ और १३ के अनुसार जम्बूस्वामी के विद्युच्चर, प्रभव आदि पांचसौ शिष्य मथुरा नगर के एक उद्यान में भूतप्रेतादि के उपसर्ग से दिवंगत हुए थे। इन्हीं के स्मारकों के रूप में ५१४ स्तूप स्थापित किये गये थे।

जम्बूस्वामिचरित

कथामुखवर्णन (पर्व १)

एतेषां बन्धुवर्गाणां मध्ये श्रीसाधुटोडरः।
व्यावर्णितोऽपि यः पूर्वं संबन्धः सूच्यतेऽधुना ॥ ७८ ॥
अथैकदा महापुर्यां मथुरायां कृतोद्यमः।
यात्रायै सिद्धक्षेत्रस्थचैत्यानामगमत् सुखम् ॥ ७९ ॥
तस्याः पर्यन्तभूभागे दृष्ट्वा स्थानं मनोहरम्।
महर्षिभिः समाक्रान्तं पूतं सिद्धास्पदोपमम् ॥ ८० ॥
तत्रापश्यत स धर्मात्मा निःसहीस्थानमुत्तमम्।
अन्त्यकेवलिनो जम्बूस्वामिनो मध्यमादिमम् ॥ ८१ ॥
ततो विद्युच्चरो नाम्ना मुनिः स्यात् तदनुग्रहात्।
अतस्तस्यैव पादान्ते स्थापितः पूर्वसूरिभिः ॥ ८२ ॥
ततः केऽपि महासत्त्वा दुःखसंसारभीरवः।
संनिधानं तयोः प्राप्य पदमाप्यं समं दधुः ॥ ८३ ॥
ततः स्थानानि तेषां हि तयोः पार्श्वे सुयुक्तितः।
स्थापितानि यथाम्नायं प्रमाणनयकोविदैः ॥ ८६ ॥
क्वचित् पञ्च क्वचिच्चाष्टौ क्वचिद्दश ततः परम्।
क्वचिद् विंशतिरेव स्यात् स्तूपानां च यथायथम् ॥ ८७ ॥
तत्रापि चिरकालत्वे द्रव्याणां परिणामतः।
स्तूपानां कृतकत्वाच्च जीर्णता स्यादबाधिता ॥ ८८ ॥
शीघ्रं शुभदिने लग्ने मङ्गलद्रव्यपूर्वकम्।
सोत्साहः स समारम्भं कृतवान् पुण्यवानिह ॥ ११५ ॥

ततोऽप्येकाग्रचित्तेन सावधानतयानिशम् ।
महोदारतयाशश्वन् निन्ये पूर्णानि पुण्यभाक् ॥ ११७ ॥
शतानां पञ्च चापैकं शुद्धं चाधित्रयोदश ।
स्तूपानां तत्समीपे च द्वादश द्वारिकादिकम् ॥ ११८ ॥
संवत्सरे गताब्दानां शतानां षोडशं क्रमात् ।
शुद्धैस्त्रिशद्भिरब्दैश्च साधिकं दधति स्फुटम् ॥ ११९ ॥
शुभे ज्येष्ठे महामासे शुक्ले पक्षे महोदये ।
द्वादश्यां बुधवारे स्याद् घटीनां च नवोपरि ॥ १२० ॥
परमाश्चर्यपदं पूतं स्थानं तीर्थसमप्रभम् ।
श्वभ्रं रुक्मगिरेः साक्षात् कूटं लक्ष्मिवोच्छ्रितम् ॥ १२१ ॥
पूजया च यथाशक्ति सूरिमन्त्रैः प्रतिष्ठितम् ।
चतुर्विधमहासंघं समाहूयात्र धीमता ॥ १२२ ॥

पर्व १२

तपोमासे सिते पक्षे सप्तम्यां च दिने शुभे ।
निर्वाणं प्राप सौधर्मो विपुलाचलमस्तकात् ॥ ११० ॥
तत्रैवाहनि यामार्धव्यवधानवति प्रभोः ।
उत्पन्नं केवलज्ञानं जम्बूस्वामिमुनेस्तदा ॥ ११२ ॥
विजहर्ष ततो भूमौ थितो गन्धकुटीं जिनः ।
मगधादिमहादेशमथुरादिपुरीस्तथा ॥ ११९ ॥
ततो जगाम निर्वाणं केवली विपुलाचलात् ।
कर्माष्टकविनिर्मुक्तः शाश्वतानन्तसौख्यभाक् ॥ १२१ ॥
अथ विद्युचरो नाम्ना पर्यटन्निह सन्मुनिः ।
एकादशाङ्गविद्यायामधीती विद्धत् तपः ॥ १२५ ॥
अथान्येद्युः स निःसंगो मुनिपञ्चशतैर्वृतः ।
मथुरायां महोद्यानप्रदेशेऽप्यगमन्मुदा ॥ १२९ ॥

पर्व १३

व्यतीते चोपसर्गेऽथ मुनिर्विद्युच्चरो महान् ।
व्यभ्रे व्योम्नि यथादित्यस्तेजःपुञ्ज इवाद्युतत् ॥ १६४ ॥
प्रातःकालेऽथ संजाते प्रान्त्यसल्लेखनाविधौ ।
चतुर्विधाराधनां कृत्वागमत् सर्वार्थसिद्धिके ॥ १६५ ॥
शतानां पञ्चसंख्याकाः प्रभवादिमुनीश्वराः ।
अन्ते सल्लेखनां कृत्वा दिवं जग्मुर्यथायथम् ॥ १६९ ॥

२१. ज्ञानसागर

काष्ठासंघ–नंदीतटगच्छ के भट्टारक श्रीभूषण के शिष्य ज्ञानसागर ने गुजराती में कई रचनाएं लिखी हैं। इनमें से एक – सर्वतीर्थवंदना – हमारे हस्तलिखितसंग्रह से आगे दी जाती है। इस में १०१ छप्पय हैं– यह इस संग्रह की सब से बडी रचना है। इस का विषयपरिचय संक्षेप में इस तरह है—

पद्य १-३ सम्मेदशिखर – बीस तीर्थंकर तथा असंख्य मुनियों का मुक्तिस्थान; पद्य ४ चंपापुर–बंग देश में वासुपूज्य जिन के पांच कल्याणकों का स्थान, प्रचंड मानस्तंभ से भूषित; पद्य ५ पावापुर – मगध देश में महावीर जिन का निर्वाण स्थान, तालाब में जिनमंदिर; पद्य ६ विपुलाचल – महावीर जिनके शिष्य गौतम गणधर द्वारा श्रेणिक राजा को उपदेश दिये जाने का स्थान; पद्य ७ राजगृह – पांच शिखरों से युक्त विपुलाचल के समीप, मगध देशमें, वर्धमान जिनके समवसरण का स्थान;

पद्य ८ पाडलिपुर–मगधदेश में सुदर्शन सेठ का मुक्तिस्थान; पद्य ९-१० उज्जयंत – सोरठदेश में जूनागढ के पास, नेमिनाथ जिन का दीक्षा, केवलज्ञान व निर्वाण का स्थान; पद्य ११ शत्रुंजय – पालीतागानगर के पास, आठ कोटि मुनियों का मुक्तिस्थान, वृषभदेव बाईस बार यहां आये थे, ललित सरोवर तथा अक्षयवट दर्शनीय स्थान हैं; पद्य १२ व ९२ – तुंगी पर्वत–बलिभद्र का स्वर्गप्राप्ति स्थान; पद्य १३ गजपंथ पर्वत– आठ कोटि मुनि तथा यादव राजाओं का मुक्तिस्थान; पद्य १४ मुक्तागिरि –मंदिरों की दो पंक्तियां हैं, धर्मशालाएं हैं, मध्यमें जलप्रवाह है, यहां यात्रा के लिए पांच रात तक ठहरते हैं;

पद्य १५ कैलास पर्वत–वृषभदेव का निर्वाणस्थान; पद्य १६ आबू मठ–विशाल मंदिर तथा अनेक जिनमूर्तियां सुंदर हैं; पद्य १७ व ६३ तारंगागढ–ऊंचे मंदिर हैं; कोटिशिला है, साढेतीन कोटि मुनियों का मुक्तिस्थान; पद्य, १८ सहेणाचल–मालव देश में, साढेतीन कोटि मुनियों का मुक्तिस्थान, शांतिनाथ की ऊंची प्रतिमा है; पद्य १९ व ६५ पावागढ

-गुर्जर देशमें, सुंदर मंदिर हैं; पद्य २० वाणारसी-काशी देश में, गंगा के किनारे पार्श्वनाथ और सुपार्श्वनाथ के मंदिर हैं; पद्य २१ प्रयाग-गंगा और यमुना के मध्य में, वृषभदेव का दीक्षास्थान, प्रसिद्ध वटवृक्ष है; पद्य २० मथुरा-यमुना के किनारे, गोवर्धनपर्वत के पास, जंवूवन में जंवूस्वामी के पांचसौ शिष्यों का स्वर्गवासस्थान; पद्य २३ गोपाचल-वावनगज प्रतिमा है; पद्य २४ मगसी-मालव देश में, पार्श्वनाथ मंदिर है; पद्य २५ पालीगढ-चंदेरी नगर के पास, शांतिनाथ मंदिर है; पद्य २६ माणिकस्वामी -तिलंगदेश में, भरतराज द्वारा पाच रत्न से निर्मित प्रतिमा है; पद्य २७ श्रीपुर-दक्षिण देश में, अंतरिक्ष पार्श्वनाथ का मंदिर; पद्य २८ खंडेवो-पार्श्वनाथमंदिर; पद्य २९ सेलग्राम-कमठ पार्श्वनाथमंदिर, दक्षिणदेशमें; पद्य ३० आम्रपुरी-दक्षिण देशमें, चिंतामणि जिनमंदिर; पद्य ३१ पैठण-दक्षिण देशमें, शालिवाहन राजा का नगर, रामचंद्र राजा द्वारा स्थापित मुनिसुव्रतजिनमंदिर, गौतमगंगा (गोदावरी) के किनारे; पद्य ३२ एलूर-दक्षिण देश में एयल राजा का नगर, पर्वत में खुदाई कर गुहाएं वनाई जो इन्द्रराज को पसन्द आईं, कार्तिक शु० १५ को पार्श्वनाथ की यात्रा होती है; पद्य ३३ अवधापुर-राय गुणधर द्वारा निर्मित सहस्रकूट जिनमंदिर; पद्य ३४ तेरनपुर-वर्धमान जिनका समवसरण आया था, उन का मंदिर है;

पद्य ३५ धारासिव-पर्वत की गुफा में आगलदेव हैं; पद्य ३६ कुंथुगिरि-वांसि नगर के समीप, कुलभूषण व देशभूषण का मुक्तिस्थान, पद्य ३७ तवनिधि-पार्श्वनाथ का मंदिर है; पद्य ३८ व ५५ लक्ष्मीश्वर - कर्णाटक देश में, शंखेश्वर पार्श्वनाथ का मदिर, राजदरवार में विवाद में प्रकट हुई प्रतिमा है; पद्य ३९-४० गोमटदेव-वेडगुल नगर के समीप, चामुंडरायने सात दिन उपवास कर वाण छोडा तव प्रतिमा प्रकट हुई थी; पद्य ४१ हुंवस-पार्श्वनाथमंदिर, निंगुड वृक्ष के नीचे पद्मावती देवी है; पद्य ४२ व ४४ गिरसोपा-रानी भैरवदेवी का राज्य है, पार्श्वनाथ के तीन भूमिमंदिर हैं, चारमंजिला चतुर्मुख मंदिर दोसौ खंभों से सुशोभित है; पद्य ४३ व ४७; ४९ व ५३ कारकल-तुलराज देश में, नेमिनाथ का

मंदिर, चार रत्नत्रय प्रतिमाओं से युक्त चतुर्मुख मंदिर, द्वारपाल तथा यक्ष यक्षिण्यादि से सुशोभित है, मेरसवेरड्डु राजाद्वारा स्थापित दशधनुष ऊंची लघुगोमटेश्वर मूर्ति है, पद्य ४५ वेदरी–चंद्रप्रभमंदिर, पार्श्वनाथमंदिर, स्फटिक, रत्न तथा सोने की मूर्तियां हैं; पद्य ४८ वरांग–तालाब में मंदिर है, चांदी, सोने तथा रत्न की मूर्तियां हैं; पद्य ५० भटकल–समुद्रतीर पर है, कई मंदिर हैं; पद्य ५१ वारकुल–सोलहमंदिर हैं, चौवीसी, यक्ष लांछनादि से सुशोभित है; पद्य ५२ हाडोली–चंद्रगिरि समीप है, चौवीस जिनमूर्तियां हैं; पद्य ५४ एनूर–पांडुराय जैन राजा हैं, नवधनुष ऊंची गोमटदेवमूर्ति है, आठ मंदिर हैं; पद्य ५६ हलयवेड – स्फटिक के चार खंभों से युक्त मंदिर है; पद्य ५७ मोरुम–चंद्रनाथमंदिर; पद्य ५८ मलयखेड–मंदिर में जयधवल, महाधवल शास्त्र पढे जाते हैं; पद्य ५९ महुखेड–श्रीपालनृप द्वारा पूजित शांतिनाथ का मंदिर; पद्य ६० उखलद–पूर्णानदी के तीर पर नेमिनाथमंदिर, प्रतिमा के अंगूठे में पारस पत्थर हैं; पद्य ६१ गिरनार–कई प्रकार के मंदिर, सहसावन, लक्खावन, राणी राजुल की गुंफा, अंबादेवी की टोंक, सात टोंक हैं, भीम कुंड, ज्ञानकुंड दर्शनीय हैं; पद्य ६२ डभोई – लाट देश में लोडणपार्श्वनाथ का मंदिर, प्राकार से युक्त, मानसरोवर दर्शनीय है; पद्य ६४ चूलगिरि – वडवाणी नगर के पास, कुंभकर्ण व इंद्रजित का मुक्तिस्थान; पद्य ६६ दिलोद – रायदेश में, नवखंड पार्श्वनाथ का मंदिर; पद्य ६७ व ८३ धुलेव – वृषभदेव का मंदिर; पद्य ६८ वडाली – अमीझरो पार्श्वनाथ का मंदिर, जिन की मूर्ति से पूजा के वाद अमृत झरता है; पद्य ६९ मधुकर नगर – भूमिगृह में पार्श्वनाथ की प्रतिमा है; पद्य ७० संखेसर – पार्श्वनाथ मंदिर; पद्य ७१ सूर्यपुर – चंद्रप्रभ मंदिर, गुर्जर देश में; पद्य ७२ व ९० वडगाम– गौतम गणधर का मुक्तिस्थान; पद्य ७३ व ७९ चंदवाड – यमुना के तीरपर, चंद्रप्रभ का मंदिर, बहुत मूर्तियां हैं; पद्य ७४ कारंजा–चंद्रप्रभ का मंदिर; पद्य ७५ क्षत्रियकुंड – वर्धमान जिन का जन्मस्थान, उन का मंदिर है; पद्य ७६ दत्तारो – पार्श्वनाथ मंदिर; पद्य ७७ गया – अकलंकदेव ने बौद्धों को जीत कर संभवनाथ, नेमिनाथ, सुपार्श्वनाथ के मंदिर बनवाये थे; पद्य ७८ जिहांगिरपुर – गंगानदी के मध्य में पर्वत पर जिन मंदिर

कीर्तिमल्ल द्वारा निर्मित है; पद्य ८० सुरिपुर – नेमिनाथ का जन्मस्थान; पद्य ८१ अयोध्या – कोशल देश में, नाभिराज, वृषभदेव, भरत राजा, सगर चक्रवर्ती, दशरथ, राम, लक्ष्मण आदि का राज्यस्थान, प्रचंड जिन मंदिर हैं; पद्य ८२ उज्जैन – मालव देश में पार्श्वनाथ मंदिर, सिद्धसेन आचार्य ने यह मूर्ति प्रकट करा कर विक्रम राजा को धर्मनिष्ठ बनाया था; पद्य ८४ ऊन – नमिआड देश में, शिखरवद्ध मंदिर हैं; पद्य ८५ डुंगरपुर – वागड देश में, अनेक मूर्तियों से सुशोभित मंदिर, तथा मानसरोवर है; पद्य ८६ सागपत्तन–वागड देश में, आदिनाथ मंदिर; पद्य ८७ आंतरी–वागड देश में, दो बडे मंदिर हैं; पद्य ८८ गुरवाडी – वागड देश में, बडा मंदिर है; पद्य ८९ कणझरो–वागड देश में, बावन प्रतिमाओं से शोभित मंदिर है; पद्य ९१ गिरनार–श्रीकृष्ण के छोटे भाई गजकुमार उग्र उपसर्ग सहन कर मुक्त हुए थे; पद्य ९३ राजगृह–धनदत्त नामक श्रीमान श्रावक महावीर जिन के पास दीक्षा लेकर मुक्त हुआ था; पद्य ९४ सिंहपुर–कावेरी के तीर पर, नेमिनाथ मंदिर; पद्य ९५ हस्तिनापुर–चक्रवर्ती तीर्थंकर शांतिनाथ का जन्मस्थान; पद्य ९५ व ९६ रामटेक–शांतिनाथ मंदिर; पद्य ९७ खंभायत–गुज्जर देश में, विमलनाथ मंदिर, भट्टपुरा जाति के लोग हैं; पद्य ९८ अंकलेश्वर–गुज्जर देश में, चिंतामणि पार्श्वनाथ का मंदिर; पद्य ९९ नलोडु–गुज्जर देश में, जिनमंदिर, पद्मावती की महिमा है; पद्य १०० एरंडवेल–नेमिनाथ मंदिर; पद्य १०१ कारंजा–वराड देश में, चंद्रप्रभ मंदिर, भूमिगृह में रत्नत्रय मूर्ति हैं।

जैसा कि ऊपर कहा है–ज्ञानसागर के गुरु भट्टारक श्रीभूषण थे। तदनुसार उन का समय सन १५७८ से १६२० तक निश्चित होता है (भट्टारक संप्रदाय पृ. २९५)। उन्होंने गुजराती में इक्कीस व्रतकथाएं, कई स्फुट रचनाएं तथा संस्कृत में छह पूजापाठ लिखे हैं। उन की अक्षर बावनी यह रचना बघेरवाल संघपति बापू के लिये लिखी गई थी जो कारंजा के निवासी थे। प्रस्तुत तीर्थवंदना का अन्तिम पद्य भी कारंजा के ही विषय में है। वैसे ज्ञानसागर तथा उन के गुरु का मुख्य प्रभावक्षेत्र गुजरात में सोजित्रा नगर के पास था।

सर्वतीर्थवंदना

सम्मेदाचल शृंग वीस जिनवर शिव पाया।
संख्यारहित मुनीश मोक्ष तिस थान सिधाया॥
यात्रा जेह करंत तास पातक सवि जाये।
मनवांछित फलपूर सद्य सुखसंपति थाये॥
सारद अथवा सुरगुरु जो तस गुणवर्णन करे।
ब्रह्म ज्ञानसागर वदति जन्मजन्म पातक हरे॥ १॥

देखत पाप पलाय सकल संकट भय भंजत।
अप्सरसहित सुरेंद्र अर्चत जन मन रंजत॥
विद्याधर सुर कोटि भावसहित नित आवत।
जयजयकार करंत भावना बहुविध भावत॥
स्तवन करंत दीसके नृत्य करत मंगल रटत।
सम्मेदाचल वंदिये भव भव सवि पातक घटत॥ २॥

थानक परमपवित्र परसत पाप पणासे।
हरत सकल मिथ्यात सुमति सुज्ञान प्रकासे॥
धर्मध्यानकी बुद्धि सहज सदा उपजावे।
जे समरत मनभाव तेह मनवांछित पावे॥
मनवच काया सुद्ध करी जे नर इह यात्रा करे।
ब्रह्म ज्ञानसागर वदति ते नर भवसागर तरे॥ ३॥

चंपापुर सुभ थान वंग देश मझारह।
वासुपूज्य जिनराज पंचकल्याणक सारह॥
जिनवरधाम पवित्र अंब चंपक प्रविराजे।
मानस्तंभ प्रचंड पंच शब्द घन वाजे॥
देशदेशना संघ तिहाँ भावसहित आवे मुदा।
ब्रह्म ज्ञानसागर वदति इच्छित फल पावे सदा॥ ४॥

मागध देश विशाल नयर पावापुर जाणो।
जिनवर श्रीमहावीर तास निर्वाण वखाणो॥
अभिनव एक तलाय तस मध्ये जिनमंदिर।
रचना रचित विचित्र सेवक जास पुरंदर॥
जिनवर श्रीमहावीर तिहाँ कर्म हणि मोक्षे गया।
ब्रह्म ज्ञानसागर वदति सिद्ध तणुँ पद पामया॥ ५॥

वंदु श्रीमहावीर सुरनरफणिपतिवंदित।
भजत सकल यतिवर्ग मोह मदमान निकंदित॥
गौतम गणधर जास श्रेणिक नृप प्रतिबोधित।
कर्मप्रकृति वनदहन पाप मिथ्यात निरोधित॥
विपुलाचलगिरिवर सरस समवसरण सुरपति कऱ्यो।
त्रिभुवन जन प्रतिबोधि करि पावापुर शिवपद वऱ्यो॥६॥

मगध देश मझार नयर राजगृह चंगह।
विपुलाचल गिरिसार शिखर तस पंच उतंगह॥
समवसरण संयुक्त वर्धमान जिन आया।
सुर नर किन्नर भूप सकल संघ मन भाया॥
विविध प्रकारे जिनवरे श्रेणिक नृप प्रतिबोधियो।
मिथ्यामत दूरे करी कर्म हणी मोक्षे गयो॥७॥

मगध देश मंडान नयर पाडलिपुर थानह।
शीलवंत सुविचार सेठ सुदर्शन जाणह॥
दृढकर संयम ग्रह्यो तपकरि कर्म विनाश्यो।
प्रगट्यो केवलज्ञान लोकालोक प्रकाश्यो॥
शूलि सिंहासन थयो जय जय जगमाँ नीपनो।
ब्रह्म ज्ञानसागर वदति अखय अचल सुख ऊपनो॥८॥

सोरठ देश पवित्र उज्जयंत गिरि नामह।
जूनागढने पास जगमंडन सुभ ठामह॥
दर्शनथी सुख होय पूजत पाप विनाशे।
सेवत शिवपद लहत नवनिधि निकट निवासे॥
राजिमती राणी तजी नेमिनाथ ध्यानें रह्या।
ब्रह्म ज्ञानसागर वदति कर्म हणी मोक्षे गया॥९॥

यदुकुलभूषण नेमि जीवदयाव्रतमंडित।
हलधरहरिकृतसेव मानमकरध्वज खंडित॥
राजीमति परिहरित भरित संयम भर भारह।
भंडित कठिण कषाय पार संसार विचारह॥

शत्रुंजय सुविसाल नयर तिहाँ पालीताणो ।
अष्ट कोडि मुनि मुक्ति सिद्धसुक्षेत्र वखाणो ॥
वृषभदेव जिनराय वार बावीस पधार्या ।
कहि उपदेश अनंत भविक जीव बहु तार्या ॥
ललितसरोवर अखयवड देखत आनंद ऊपजे ।
ब्रह्म ज्ञानसागर वदति स्वर्ग मोक्ष सुख संपजे ॥ ११ ॥

तुंगी पर्वत सार सिद्ध क्षेत्र सुखदायक ।
श्रीवलिभद्रकुमार थया जिहाँ सुरवरनायक ॥
दर्शनथी आनंद पूजत बहु सुख पावे ।
सुर नर किन्नर सकल मुनिवर मिलि गुण गावे ॥
मांगीतुंगी तीर्थको महिमा जगमाँ विस्तरी ।
ब्रह्म ज्ञानसागर वदति जिहाँ वलिभद्रैं तपसा करी ॥ १२ ॥

गजपंथह गिरिराय आठ कोडि मुनि सिद्धा ।
यादव राय कुमार भाव करी संयम लीधा ॥
तीर्थ गरिष्ठ पवित्र पापसंतापनिवारण ।
सुख संपति दातार स्वर्ग मुगति सुख कारण ॥
दर्शन देखत ततक्षणे सकल मनचिंतित फले ।
ब्रह्म ज्ञानसागर वदति समस्त कर्म दुरे टले ॥ १३ ॥

मुक्तागिरि माहंत सिद्धक्षेत्र अतिसंतह ।
चैत्यतणी दो पंक्ति पूज रचे गुणवंतह ॥
धमसाल गुणमाल मध्य जलधार वहंति ।
यात्रा करवा काज पंच रात्रि निवसंति
विविध चैत्य देखि करी हर्ष घणो मन ऊपजे ।
ब्रह्म ज्ञानसागर वदति क्रम क्रम शिवपुरि संचरे ॥ १४ ॥

वृषभदेव जिन प्रथम नाभिरायकुल चंद्रह ।
दीक्षा ग्रही पवित्र कर्या कर्म सवि मंद्रह ॥
सहस्र वर्ष पर्यंत धर्यो मन उज्वल ध्यानह ।
घाति कर्म मद हणि पामियूँ केवल ज्ञान ह ॥
कैलासगिरि शिखरोपरि आदिनाथ मुगते गयो ।
सुरमानवगण उद्धरण अष्टापद प्रगटह भयो ॥ १५ ॥

आवूगढ अभिराम काम त्रिभुवनमाँ सारे ।
श्रीजिनबिंब अनेक समस्त भव जल तारे ॥

जिनवरभुवन विशाल देखत पाप पणासे ।
कहेताँ न लहुँ पार कर्म अनंत विनासे ॥
आवूनी रचना प्रबल देखत जन मन उल्लसे ।
ब्रह्म ज्ञानसागर वदति मुझ मन जिनचरणेँ वसे ॥ १६ ॥

तारंगो गढ सार सिद्धक्षेत्र मनुहारह ।
जिनवर भुवन उतंग वंदत सुख अधिकारह ॥
कोडिशिला अभिराम औठ कोडि मुनि शिवकर ।
पूजत सुरनरनाथ सेवत किन्नर मुनिवर ॥
जे नर मन वचनेँ करी भावसहित यात्रा करे ।
ब्रह्म ज्ञानसागर वदति ते नर भवसागर तरे ॥ १७ ॥

मालव देश मझार सहेणाचल सुविसालह ।
सिद्धक्षेत्र गुणवंत पर्वत अतिगुणमालह ॥
शांतिनाथ जिनबिंब उन्नत दोषविवर्जित ।
पूजत प्रणमत लोक सयल पाप परितर्जित ॥
औठ कोडि निर्वाण गमित सकल कर्म दूरीकरण ।
ब्रह्म ज्ञानसागर वदति भवभव मुझ जिनपद सरण ॥ १८ ॥

पावागढ सुपवित्र देश गुज्जर मुखमंडन ।
सुंदर जिनवर भुवन पापसंतापविखंडन ॥
विघन टलत सवि दूर दर्शन बहुसुखकारी ।
वंदत नरवर खचर दुखदारिद्र निवारी ॥
भावसहित नर जे भजत तस मन इच्छित सवि फले ।
ब्रह्म ज्ञानसागर वदति सुखसंपति वेगे मले ॥ १९ ॥

नयर वणारसि चंग कासिदेशमझारह ।
भागीरथि उपकंठ चैत्य जिनवरनाँ सारह ॥
पास सुपास प्रसिद्ध कर्मगिरि वज्र समानहं ।
मदन दर्प परिहरित प्रगटित केवल ज्ञानह ॥
पास सुपास जिनेंद्रनाँ चैत्य मनोहर वंदिये ।
ब्रह्म ज्ञानसागर वदति पाप समस्त निकंदिये ॥ २० ॥

गंगा यमुना मध्य नयर प्रयाग प्रसिद्धह ।
जिनवर वृषभ दयाल धृत संयम मन सुद्धह ॥
वट प्रयाग तल जैन योग धर्यो पटमासह ।
प्रगटयो तीर्थ प्रसिद्ध पूरत भवियण आसह ॥

प्रयागवट दीठें थके पाप सकल जन परिहरे ।
ब्रह्म ज्ञानसागर वदति प्रयाग तीर्थ बहु सुख करे ॥ २१ ॥

मथुरा नयर विसाल गोवर्धनगिरिपासह ।
यमुना तट अभिराम जंबुस्वामि सुखरासह ॥
परहरिया सवि भोग योग अभ्यास सदा रत ।
जंबूवनह मझार चोर शत पंच शिवंगत ॥
नारि च्यारि परिहरि करी जंबुदेव शिवपद लह्यो ।
ब्रह्म ज्ञानसागर वदति अनंत सुख पद पामियो ॥ २२ ॥

गोपाचल जिनथान बावनगज महिमा वर ।
भविक जीव आधार जन्मकोटिक पातकहर ॥
जे समरे दिनरात तास पातक सवि नाशे ।
विघन सदा विघटंत सुख आवे सवि पासे ॥
बावनगज महिमा घणी सुरनरवर पूजा करे ।
ब्रह्म ज्ञानसागर वदति जे दीठे पातक हरे ॥ २३ ॥

मालव देश मझार नयर मगसी सुप्रसिद्धह ।
महिमा मेरु समान निर्धनकूँ धन दीधह ॥
मगसी पारसनाथ सकल संकट भयभंजन ।
मनवांछित दातार विघनकोटि मद गंजन ॥
रोग शोक भय चोर रिपु जिस नामें दूरे पले ।
ब्रह्म ज्ञानसागर वदति मनवांछित सघलों फले ॥ २४ ॥

पालिगढ मनुहार नयर चंदेरी पासह ।
चैत्य विचित्र अनेक देखत मन उल्लासह ॥
शांतिनाथ जिनराय षोडशमो जिनचंदह ।
देखत पाप पलाय सेवत जास पुरंदह ॥
पालिगढ प्रतिमाँजके पूजंता पातक हरे ।
ब्रह्म ज्ञानसागर वदति सकल सिद्धि पूरण करे ॥ २५ ॥

देश तिलंग मझार माणिकजिनवर वंद्रो ।
भरतेश्वरकृत बिंब पूजिय पाप निकंद्रो ॥
पान्न मणि सुप्रसिद्ध नीलवर्ण जिनरायह ।
पूजत पातक जाय दर्शनथें सुख थायह ॥
किंनर सुंदर अपछरा सकल मिलि सेवा करे ।
ब्रह्म ज्ञानसागर वदति माणिकजिन पातक हरे ॥ २६ ॥

श्रीपुर नयर प्रसिद्ध देश दक्षण सुसिद्धसह ।
महिमावंत वसंत अंतरिक्ष जिनपासह ॥
देशदेशनाँ संघ नितनित्त बहुतर आवे ।
पूजा स्तवन करेवि मनवांछित फल पावे ॥
सकल लोक मन मानता परता पूजे जिनपति ।
अंतरिक्ष जिन वंदिये कहत ज्ञानसागर यति ॥ २७ ॥

खंडेवो जिन पास आस मनवांछित पूरे ।
रोग शोक दारिद्र सकल संकट भय चूरे ॥
कामिनि पुत्रकलत्र सुख संपतिको दाता ।
भविकजीवदुखहरण भवसागरभयत्राता ॥
अश्वसेनकुलमंडनो त्रिभुवनपतिवंदितचरण ।
ब्रह्म ज्ञान एवं वदति पार्श्वनाथ कल्याणकरण ॥ २८ ॥

कमठमानमदहरण करण शिवसुख जिननायक ।
कमठपास जगदीस मनवांछित सुखदायक ॥
दक्षण देश मझार सेलग्राम सुखकारी ।
अतिशय प्रगट अनंत रोग संकट मद हारी ॥
मन वच काया भाव सहित त्रिभुवन जन सेवा करे ।
ब्रह्म ज्ञानसागर कहे कमठपार्श्व दुख परिहरे ॥ २९ ॥

आम्रपुरी जग जाण दक्षण देश मझारह ।
जिनवरभुवन वखाण भवियणजनसुखकारह ॥
चिंतामणि जगदीश चूडामणि जिनरायह ।
देखत पाप पलाय समरत सुख बहु थायह ॥
जिनवरप्रतिमा देखता मनोह मनोरथ सवि फले ।
ब्रह्म ज्ञानसागर वदति जन्मानेक पातक टले ॥ ३० ॥

दक्षण देश मंडान नयर सुंदर पैठाणह ।
शालिवाहन कृतराज्य महिमा महियल जाणह ॥
मुनिसुव्रत जिनदेव रामचंद्र नृप थापित ।
पूजित इंद्र नृपेंद्र सुभ जस त्रिभुवन व्यापित ॥
गौतमगंगा उपतटे जिनप्रासादह वंदिये ।
ब्रह्म ज्ञानसागर वदति दीठें पाप निकंदिये ॥ ३१ ॥

एयल राय प्रसिद्ध देश दक्षणमें जायो ।
एलुर नयर वखाण महिमंडल जस पायो ॥

खरचो द्रव्य अनंत पर्वत सवि कोरायो ।
षटदर्शनकृतमान इंद्रराज मन भायो ॥
कार्तिक सुदि पूनम दिनें यात्रा श्रीजिनपासकी ।
जे पूजत नित भावसूं आसा पूरत तासकी ॥ ३२ ॥

अवधापुर जिनथान राय गुणधर्ण कीनो ।
सहस्रकूट जिनबिंब करी जगमें जस लीनो ॥
मिलिया लोक अनंत बिंबप्रतिष्ठा कीधो ।
संतोष्या शुभ पात्र संघपूजा बहु दीधी ॥
पद्मावती परसादथी जयजयकार थयो घणो ।
ब्रह्मज्ञान कहे वंदतां पार नही पुण्यह तणो ॥ ३३ ॥

तेरनपुर सुप्रसिद्ध स्वर्गपुरीसम जाणो ।
वर्धमान जिनदेव तास तिहाँ चैत्य वखाणो ॥
पाप हरत सुख करत अतिसय श्रीजिनकेरो ।
भविकलोक भय हरत दूर करत भवफेरो ॥
समवसरण जिन वीरको तेर थकी पाछयो वल्यो ।
ब्रह्मज्ञान जग उद्धरण पावापुर सर शिव मल्यो ॥ ३४ ॥

धारासिव शुभ ठाण स्वर्गपुरीसम लहिये ।
आगलदेव जिनेश नामथी पातक दहिये ॥
पर्वतमध्य निवास महिमा नहि पारह ।
सेवत नवनिधि होय पूजत सुखभंडारह ॥
आगलदेवतणी कथा सुणतां पातक परिहरे ।
ब्रह्म ज्ञानसागर वदति मनवांछित पूरण करे ॥ ३५ ॥

बाँसिनयर विशाल पास पर्वत अतिसुंदर ।
सिद्ध सुक्षेत्र पवित्र जिहाँ सिद्ध्या दो मुनिवर ॥
कुलभूषण मुनिराय देशभूषण तपधारी ॥
पाया मोक्ष दुआर भविगण जन भवतारी ॥
जे दीठें सुख ऊपजे भवभवनां दुख परिहरे ।
ब्रह्म ज्ञानसागर वदति कुंथुगिरि सविसुख करे ॥ ३६ ॥

नवनिधि पास प्रसिद्ध ऋद्धि नवनिधिको दाता ।
त्रिविधताप दुखहरण भविक जीव भयत्राता ॥
नित्य महोत्सव चंग रंग वाजित्रह वाजे ।
मुनिवर मंडे ध्यान वृक्ष शोभा अविराजे ॥

त्रिभुवननायक जिनपति रोग शोक चिंता हरण ।
ब्रह्म ज्ञानसागर वदति नवविधि पार्श्व कल्याणकरण ॥ ३७ ॥

लक्ष्मीश्वर पुरनाम देश कर्णाटक सारह ।
शंखेश्वर जिन पास थया प्रगट भवतारह ॥
शंख निमित्त विवाद हुओ भूपति दरबारह ।
प्रगटी प्रतिमा ताम थयो जन जयजयकारह ॥
जिन अतिसय देखी करी नर सम्यक्तह पामिया ।
ब्रह्म ज्ञानसागर वदति बहु नर सुभ श्रावक थया ॥ ३८ ॥

अमल कमल गति करण धरण सुभध्यान गुणाकर ।
प्रबल पाप तम हरण सरण जन भविक सुखाकर ॥
जीता भरत नरद योग धृत वर्ष दिनांतर ।
प्रगटित केवल ज्ञान मोक्ष दायक जय जिनवर ॥
दुष्ट अष्टभय कष्ट रहित मनवांछित जन सुखकरण ।
ब्रह्म ज्ञानसागर वदति गोमट देव मुझ तव सरण ॥ ३९ ॥

नयर वेडगुल नाम राय चामुंड वखाणो ।
सागर मध्ये देव देखन कियो पियाणो ॥
सात रात दिन सात किया उपवास नरेंदह ।
सुपनो पायो ताम करो पारणो अनंदह ॥
निज मंदिर नृप आवियो यथा सुपन सनमुख गयो ।
बाण एक मूकत थके गोमटदेव प्रगटह थयो ॥ ४० ॥

हुंवस नयर पवित्र जिहां जिनमंदिर सुंदर ।
पार्श्वदेव जिनराज भक्ति जिन नाग पुरंदर ॥
पद्मावति प्रत्यक्ष वृक्ष निर्गुंड सुखाकर ।
सकलरोग भयहरण तरण तारण भवसागर ॥
पद्मावति परताप घणा पूरे मनइच्छित करे ।
ब्रह्म ज्ञानसागर वदति पाप ताप सवि परिहरे ॥ ४१ ॥

नयर विचित्र पवित्र गिरसोपा गुणवंतह ।
श्रावक धर्म करंत मुनिवर तिहाँ अतिसंतह ॥
भैरवदेवि नाम राणी राज्य करंतह ।
शीलवंत व्रतवंत दयावंत अघहंतह ॥
पार्श्वदेव जिनराजको त्रण्य भूमिप्रासाद किय ।
ब्रह्म ज्ञान गुरु पय नमी मानव भव फल तेन लिय ॥ ४२ ॥

चोमुख चैत्य प्रचंड चार रत्नत्रय मंडित ।
द्वारपाल चत्वार यक्ष यक्षणि अघखंडित ॥
शिखर गयूँ आकास आस जनमनकी पूरे ।
दरसन देखत सकल पाप सुरनरका चूरे ॥
नयर कारकल मध्य इह रत्नत्रय चोमुख कह्यो ।
भविक लोक पूजा करी जन्मांतर पातक दह्यो ॥ ४३ ॥

जिनवर चोमुख चैत्य नयर गिरसोपा चंगह ।
भूमि चार उतंग खंभ शत दोउ अभंगह ॥
प्रतिमा देखत सद्य पाप सवि दूर पलायो ।
पूजत परमानंद स्वर्ग मुगति सुख थायो ॥
अभिनव जिनवर चैत्यगृह देखत सुखसंपति मले ।
ब्रह्म ज्ञानसागर वदति चिंता दुख दूरें टले ॥ ४४ ॥

नयर वेदरी नाम चंद्रप्रभ जिनदेवह ।
मनवचकाया सुद्ध सुरनर करे तस सेवह ॥
चैत्य तणूं मंडाण देखि मन हर्ष वढावे ॥
पयडी कोट सुखंभ निरखत आनंद पावे ॥
जिनवर महिमा देखि करी सकल पाप दूरे गयो ।
कहत ज्ञानसागर कवि सकल संघकूं सुख भयो ॥ ४५ ॥

सार नयर वेदरी जिनमनमंडन पूरो ।
पास जिनेंद प्रसिद्ध अष्टकर्म कृत चूरो ॥
स्फटिक रतनका विंव कनक प्रतिमा तिहाँ राजे ।
दीपतणाँ झलकार वाजा विचित्र पर गाजे ॥
तोरण तारा खंभ वहु अगणित महिमा को लहे ।
समवसरण सम सुख करण ब्रह्म ज्ञानसागर कहे ॥ ४६ ॥

सकलदेशमंडाण देश तुलराज प्रसिद्धह ।
तस मध्ये अतिनिपुण कारकल नयर विशुद्धह ॥
उस थानक जिन नेमि चैत्य नेमि अनोपम ।
रचना रचित धनेश कवण दीजे तस ओपम ॥
अभिनव शोभा देखकर सकल भुवन आनंदे हुआ ।
ब्रह्म ज्ञानसागर वदति भवभय मुझ परसल तुज ॥ ४७ ॥

नयर वरांग विचित्र जिहाँ जिनवरको धामह ।
दरसनथें नयनिद्ध पूजत फलत सुकामह ॥

रतनतणाँ जिनबिंब कनक रूप्य अधिकारह ।
जो ज्ञानी गुण नर कहे तो भी न लब्मे पारह ॥
तलावमध्य चैत्यहतणी सोभा नर कोनवि लहे ।
ते वंदो हो नर निपुण ब्रह्म ज्ञानसागर कहे ॥ ४८ ॥

नयर कारकल मध्य लघु गोमटजिनदेवह ।
दश धनुष्य जिनदेह जगत करत तस सेवह ॥
अभिनव रूप दयाल पाप तिमिरभर भंजन ।
पूजित सुरनरराय मुगतिवधूमनरंजन ॥
भविक जीव पूजा करी निर्मल गुण गावे सदा ।
ब्रह्म ज्ञानसागर वदति वंदूँ जिनपति पद मुदा ॥ ४९ ॥

सुंदर सागरतीर भटकल पुरह भणिज्जे ।
तिहाँ जिनवर प्रासाद पंक्ति अति सुघट गणिज्जे ॥
रचना रचित विचित्र मोल तस कह्यो न जाये ।
जे वंदे ते चैत्य पाप तस दूर पलाये ॥
भटकल पुरनाँ चैत्य सकल देखत दुख दूरैं गयो।
ब्रह्म ज्ञानसागर वदति परम सौख्य मुझनैं थयो ॥ ५० ॥

अतिविशाल मनुहार बारकुल नयर भणिज्जे ।
तिहा श्रीजिनवर भुवन गणति सोल गणिज्जे ॥
चउवीसी अतिरम्य यक्षलांछनगुणमंडित ।
ठाम ठाम जिन चैत्य पापदोषमदखंडित ॥
जिनमंदिर देखत थके सकल पाप दूरैं टले ।
ब्रह्म ज्ञानसागर वदि मनचिंतित सघलाँ फळे ॥ ५१ ॥

हाडोली सुभ थान जिन चउवीस सुखाकर ।
चंद्रगिरी अभिराम सकलजन्म पातकहर ॥
पूजित भविक अनंत द्रव्य संयुक्तह ।
कर्मकलंक दहेवि ते पावतपद मुक्तह ॥
हाडोली जिनधामकी महिमा को यन कहि सके ॥
ब्रह्म ज्ञानसागर वदति जे दीठे पातक थके ॥ ५२ ॥

नयर कारकल नाम मेरस वेरडु रायह ।
श्रावक धर्म करंत नित वंदे गुरु पायह ॥
हृदय धरी बहु भाव गोमटदेव रचायो ।
पूजा रची त्रिकाल आप सुर पदवी पायो ॥

महिमा जगमें विस्तरी लघु गोमटस्वामी भयो ।
ब्रह्म ज्ञानसागर वदति दर्शनथी पातक गयो ॥ ५३ ॥

पनुर नयर विसाल चैत्य तिहां अष्ट वखाणो ।
गोमटदेव सरूप उंच नव धनुषह जाणो ॥
जिनधर्मी नृप वसे सुद्ध सम्यक्तह धारी ।
पांडुराय तस नाम विनय विवेक विचारी ॥
नगर लोक सोभा प्रबल देखत जनमन उल्लसे ।
कहत ज्ञानसागर मुनि मुझ मन जिनचरणे वसे ॥ ५४ ॥

लक्ष्मीश्वर नृपरेश नेमिनाथ जिन सुखकर ।
मेघघटा सम श्याम काय सर्ग जिनवर ॥
देखत पातक जाय कर्मफंद सवि तूटे ।
मनवांछित फल होय पाप बंधन सवि छूटे ॥
अतिउन्नत अभिनवचरित सुरनर जिस सेवा करे ।
ब्रह्म ज्ञानसागर वदति नेमिनाथ जग उद्धरे ॥ ५५ ॥

हलयवेड अद्भुत नयर वसुधामंडन ।
चैत्य मनोहर तत्र रचित सारे पाप विखंडन ॥
खंभ च्यार जगमोल स्फटिकतणां प्रविराजे ।
देखत भविक समूह वढत हर्ष दुह भाजे ॥
तिस थानक किंनर निकर कर जोडी जयजय करे ।
ब्रह्म ज्ञानसागर वदति पाप खोर दुह परिहरे ॥ ५६ ॥

मोरुम नयर प्रसिद्ध जिहाँ जिनवरगृह जाणो ।
चंद्रनाथ भवतार अहनिशि मनमां ठाणो ॥
अतिशय अधिक वखाण सेवत सुरनर सुखकर ।
पूजत अगणित लोक स्तवन करत विद्याधर ॥
मोलापुरमंडन सुभग अजरामर शिवरकरण ।
ब्रह्मज्ञानसागर वदति अष्टमजिन पातकहरण ॥ ५७ ॥

मलयखेड वर नयर तत्र जिनभुवन सुखाकर ।
श्रावकजन अधिकार आवत बहुविध मुनिवर ॥
पढत शास्त्र जयधवल अरु महाधवल मनोहर ।
अध्यातम अभ्यास आगम पढत विविध पर ॥
सिद्धांत ग्रंथ ध्यानी वचन सुणता सवि पातक हरे ।
ब्रह्म ज्ञानसागर वदति कुनय कुमति दूरें करे ॥ ५८ ॥

सज्जन जनमन हरण नयर मह्रुखेड विसालह ।
शांतिनाथ जिनभुवन पूजत नृप श्रीपालह ॥
आवत देवकुमार भावसहित नित सेवत ।
स्तवन करत अभिराम मनवांछित फल लेवत ॥
चैत्य अनेक सोभा प्रबल ध्वजा कलस लहके सदा ।
ब्रह्म ज्ञानसागर वदति भविक जीव वंदो मुदा ॥ ५९ ॥

पूर्णा नाम पवित्र नदि तस तीर विसालह ।
नामे ग्राम उखलद जिहाँ जिन नेमि दयालह ॥
सार पार्श्व पाषाण कर अंगुष्ठे जाणो ।
अगणित महिमा जास त्रिभुवन मध्य वखाणो ॥
प्रगट तीर्थ जाणी करी भविक लोक आवे सदा ।
ब्रह्म ज्ञानसागर वदति लक्ष लाभ पावे तदा ॥ ६० ॥

गढ गिरनार गरिष्ठ चैत्य जिहाँ विविध प्रकारह ।
सहसावन अतिसार लक्खावन मनुहारह ॥
राणि राजुल नार तास तिहाँ गुफा सुछाजे ।
अंबादेवि उतंग टोंक तिहाँ सात विराजे ॥
भीमकुंड अति निरमलो ज्ञानकुंड नित जल वहे ।
नेमिनाथ जिन वंदिये ब्रह्म ज्ञानसागर कहे ॥ ६१ ॥

सकल सजन सुखकार लाट देश वर वासह ।
नयर डभोइ सुथान तिहाँ जिन लोडन पासह ।
जंबू अंब अनेक आमलरायण चंगह ।
मानसरोवर सार कोट बहु रचित उतंगह ॥
अनेक संघ आवत सदा भविक भाव पूजा करे ।
ब्रह्म ज्ञानसागर वदति स्तवन करे पातक हरे ॥ ६२ ॥

तारंगो सुप्रसिद्ध भवथी जनने तारो ।
जन्मजन्मनाँ पाप समस्त सकल निवारो ॥
औठ कोडि मुनिराय मुक्ति तिस थानक पाया ।

कुंभकर्ण मुनिराय इंद्रजित मोक्ष पधार्या ।
सिद्धक्षेत्र जग जाण बहु जन भव जल तार्या ॥
बावन संघपति आय करि बिंबप्रतिष्ठा बहु करी ।
ब्रह्म ज्ञानसागर वदति कीर्ति त्रिभुवनमाँ विस्तरी ॥ ६४ ॥

गुज्जर देश पवित्र पावागढ अतिसारह ।
पूजत सुरवर वृंद करत किंनर जयकारह ॥
देखत पाप पलाय सेवत सुरपद लहिये ।
अहनिशि समरत शुद्ध सकल पातक मल दहिये ॥
मन वच काया भाव करि जे को नर नित्ये भजे ।
ब्रह्म ज्ञानसागर वदति ते नर सवि पातक त्यजे ॥ ६५ ॥

नयर दिलोद पवित्र रायदेशकृत मंडन ।
नवखंडो जिन पास कर्म अष्ट रिपु खंडन ॥
प्रगट्या भुवन मझार भव्य जीव उद्धारक ।
वांछित पूरे आस सकल भविजनतारक ॥
परता विविध प्रकारना पूरत अहनिशि जिनपति ।
त्रिकरण शुद्ध वंदूं सदा कहत ज्ञानसागर यति ॥ ६६ ॥

वृषभ देव जिनराज निखिल भव दुःख विहंडन ।
प्रथम मुक्तिसोपान जिन संयमव्रतमंडन ॥
नयर धुलेव निवास आस मनवांछित पूरण ।
चिंताहरण समर्थ रोकशोकभयचूरण ॥
पापतिमिर भंजन प्रगट सूर्य समान सुगतिकरण ।
ब्रह्म ज्ञानसागर वदति वृषभनाथ तारणतरण ॥ ६७ ॥

सुघट घटित अति निपुण ग्राम वडाली नामह ।
पार्श्व जिनेंद्र प्रसिद्ध अमीझरो तिस ठामह ॥
पूजानंतर सार अमिय सर्वांग झरंतह ।
कृष्णागरु महकंत जयजय जगत करंतह ॥
मानव घन सेवा करत आराधत सुर खगपति ।
अमीझरो नित वंदिये कहत ज्ञानसागर यति ॥ ६८ ॥

मधुकर नयर पवित्र यत्र श्रावक घन वासह ।
मुनिवर करत विहार बहुविध ग्रंथ अभ्यासह ॥
जिनवर धाम पवित्र भूमिगृहमें जिन पालह ।

... ...

नामें नवनिधि संपजे सकल विघ्न भंजे सदा ।
ब्रह्म ज्ञानसागर वदति विघ्नहरो वंदूँ मुदा ॥ ६९

संखेसर जिन पास आस त्रिभुवनकी पूरे ।
पाप ताप संताप रोग भय मद जर चूरे ॥
जरासंध नृप समय सैन्य की जरा निवारी ।
हलधर हरिकृत सेव सवि जनकूँ हितकारी ॥
चोर चरट चेटक सकल नाम लेत दूरें गयो ।
ब्रह्म ज्ञानसागर वदति वंदन मुझ बहु सुख थयो ॥ ७० ॥

गुज्जर देश पवित्र धर्मध्यान गुण मंडित ।
नगर सूर्यपुर नाम पाप मिथ्यात विहंडित ॥
श्रीचंद्रप्रभदेव मनमोहन प्रासादह ।
अगणित महिमा जास देखत मन आल्हादह ॥
स्तवन कहे पातक हरे भाविक जीव सेवे सदा ।
ब्रह्मज्ञानसागर वदति चंद्रप्रभ वंदूँ मुदा ॥ ७१ ॥

वर्धमान जिनदेव ताको प्रथम सुगणधर ।
गौतमस्वामी नाम पापहरण सवि सुखकर ॥
खंड्या कर्म प्रचंड परम केवल पद पायो ।
श्रेणिक बेठे पास द्विविध धर्म प्रगटायो ॥
वडगामे आवी करी कर्म हणी मुगते गयो ।
ब्रह्म ज्ञानसागर वदति वंदत मुझ बहु सुख थयो ॥ ७२ ॥

अभिनव यमुना तीर चंद्वाड पुरी जाणो ।
श्रीचंद्रप्रभदेव तास तिहाँ भुवन वखाणो ॥
जिनवर बिंब अनंत वंदत पाप विनाशे ।
पूजत नवनिधि होय सिद्धि अब्रु होय पासे ॥
मन वच काया सुद्ध करी अनेक संघ यात्रा करे ।
ब्रह्म ज्ञानसागर वदति भवभवनाँ पातक हरे ॥ ७३ ॥

सकलसौख्य दातार पाप पर्वत कृत खंडन ।
चंद्रनाथ जगदीश नयर कारंजा मंडन ॥
रोगशोक भय हरण मन वांछित सुख दायक ।
जन्म जरा गत दूर गणधर मुनिगण नायक ॥
मन वच काया सुद्ध करी सुरनरपति सेवे सदा ।
परमसिद्धिमंगलकरण ब्रह्मज्ञान वंदे मुदा ॥ ७४ ॥

क्षत्रियकुंड पवित्र सिद्धारथ नृप सारह।
त्रिसला उर उतपन्न वर्धमान भवतारह ॥
राज्यभोग मद तज्यो मोह मच्छर सवि छंडयो।
अंगीकृत तप निविड मान मकरध्वज दंडयो ॥
क्षत्रियकुंड जिनभुवनने वंदत पातक परिहरे।
ब्रह्म ज्ञान कर जोडि कर त्रिकरण सुद्ध वंदन करे ॥ ७५॥

दत्तारो जिन पास आस मनवांछित पूरे।
अष्ट वष्ट भय कष्ट पाप भवभवनाँ चूरे ॥
यात्रा करे नर जेह सोहि सुखसंपति पावे।
तिस घर मंगल चार विघन भय कोय न आवे ॥
अतिसय श्रीजिनवरतणो दीपक नित नित उल्लसे।
ब्रह्म ज्ञानसागर वदति सुझमन जिनचरणे वसे ॥ ७६ ॥

गया ग्राम सुभ ठाम बौद्धमत पूरण जाणो।
स्वामी श्रीअकलंक तेन जीत्यो तस राणो ॥
हाऱ्या बौद्ध समस्त देशनीकालो दीधो।
संभव नेमि सुपास चैत्य करि जग जस लीधो ॥
बौद्ध मत छंडि करी सकल लोक श्रावक थया।
गया तीर्थ नित वंदिये जिहाँ जिनवर थिर थइ रह्या ॥ ७७ ॥

नगर अधिक विस्तार नाम जिहाँगिरपुर सुंदर।
गंगा नदी मझार पर्वत एक सुखाकर ॥
तिहाँ जिनवरको धाम भवभव दुःख विहंडन।
पूजित भविक सुजाण सफल कर्म गिरि खंडन ॥
कीर्तिमल्लकृत चैत्य तिहाँ देखत पाप निकंदिये।
ब्रह्म ज्ञानसागर वदति लघु कैलासह वंदिये ॥ ७८ ॥

यमुना तट अभिराम चंदवाड नगरेश्वर।
राजत गुण भंडार चंद्रप्रभ परमेश्वर ॥
जिनवर बिंब अनेक जेह देखत मन रंजे।
अष्ट रोग भय अष्ट कष्ट दारिद्रह गंजे ॥
जिन चंद्रप्रभ पूजतां हर्ष अनंतो संपजे।
ब्रह्म ज्ञानसागर वदति मंगल नित बहु नीपजे ॥ ७९ ॥

सुरिपुर नयर प्रसिद्ध महिमा जिस अधिकेरी।
यादव राज्य करंत आण महिमंडल फेरी ॥

नेमिनाथ जिनराय जन्म शिवा तन पायो।
सुरनर किन्नर यक्ष फणिपति सुभ जस गायो ॥
सकल कर्मरिपु निर्जरी नेमिनाथ मुगते गयो।
ब्रह्म ज्ञानसागर वदति सुरिपुर तीर्थ प्रगट थयो ॥ ८० ॥

कोशल देश कृपाल नयर अयोध्या नामह।
नाभिराय वृषभेश भरत राय अधिकारह ॥
अन्य जिनेश अनेक सगर चक्राधिप मंडित।
दशरथ सुत रघुवीर लक्ष्मण रिपुकुल खंडित ॥
जिनवर भवन प्रचंड तिहाँ पुण्यक्षेत्र जगि जाणिये।
ब्रह्म ज्ञानसागर वदति श्रीजिनवृषभ वखाणिये ॥ ८१ ॥

उज्जेनी पुर सार देश मालव मुख मंडन।
पार्श्वदेव जिनराज पाप मिथ्यामति खंडन ॥
सिद्धसेन मुनिराय तेन महियल प्रगटायो।
विक्रम नरपति सार सुद्ध समकित गुण पायो ॥
मनवचकाया सुद्ध करी जिनपद सेवत जगपति।
अवंति पार्श्व जिन वंदिये कहत ज्ञानसागर यति ॥ ८२ ॥

सुरपति सेवत चरण सरण भुवनत्रय सारह।
नमित सुरासुर नाग भविक जीव भवतारह ॥
धर्मामृत कृत वृष्टि सकलसृष्टि प्रगटाई।
शांत दांत गंभीर भविक जीव सुखदाई ॥
धुलेव नयर निवास प्रगट सुर अनेक आवत सदा।
जय जय वृषभ जिनेश तूँ ब्रह्मज्ञान वंदित मुदा ॥ ८३ ॥

ऊन नयर अभिराम देश नमिआड मनोहर।
शिखरबद्ध प्रासाद भविक जीव मन सुखकर ॥
देखत परमानंद पूजत पाप विनासे।
मन चिंते जे कोय तास सुभ ज्ञान प्रकासे ॥
दर्शन देखत जे निपुन पाप ताप दूरे पले।
ब्रह्म ज्ञानसागर वदति मनचिंतित फल सवि फले ॥ ८४ ॥

डूंगरपुर वर सार वागड देश विचक्षण।
जिनवर भुवन उत्तंग यक्ष किन्नर कृत रक्षण ॥
श्रीजिनबिंब अनेक देखत मोह विनाशे।
भाविक लोक नित भजत पूजत सुख प्रतिभासे ॥

मान सरोवर नर निपुण देखत जन मन उल्लसे।
ब्रह्म ज्ञानसागर वदति जिन प्रतिमा मुझ मन वसे ॥ ८५ ॥

अभिनव वागड देश सागपत्तन सुभथानह।
जिनवर भुवन विशाल मुनि मंडत सुभ ध्यानह ॥
श्रावक चतुर सुजाण धर्म दशविध आराधे।
दान पुण्य व्रत करी गति उत्तम पद साधे ॥
आदि जिनेश्वर अतिसुभग वंदत पातक सवि टले।
ब्रह्म ज्ञानसागर वदति मनवांछित सयलाँ फले ॥ ८६ ॥

वागड देश प्रसिद्ध नगर आंतरि तिहाँ जाणो।
जिनवर भुवन प्रचंड दोय अतिरम्य वखाणो ॥
छत्र चमर राजंत किन्नर नृत्य करंतह।

... ...

जयजयकार करे सकल देखत मन हरखे सदा।
पुण्य प्रबलतर ऊपजे कहत ज्ञानसागर मुदा ॥८७॥

गुरवाडी सुभ ग्राम वागड देश मझारह।
जिहाँ जिनभुवन प्रचंड दान पूजा अधिकारह ॥
चंदन केसर धूप पूज रचत नरनायक।
राजत जिनवरदेव मनवांछित फलदायक ॥
सुरनर किन्नर नागपति नित नित सेवत जिनपति।
भविक जीव सेवा करो कहत ज्ञानसागरयति ॥ ८८ ॥

वागड माँहि विशाल नाम कणझरो ग्रामह।
तिहाँ जिनभुवन विशुद्ध देखत मन विश्रामह ॥
अतिसुंदर जिनबिंब बावन जिनगृह सारह।
साधर्मी नित भजत करत पूजा जलधारह ॥
चैत्य मनोहर देख करि हर्ष घणो मनमां थयो।
ब्रह्म ज्ञानसागर वदति पाप सकल दूरें गयो ॥ ८९ ॥

वर्धमानको शिष्य गौतम गणधरदेवह।
सकल शास्त्रको जाण वाद जीत्या ततखेवह ॥
मनमें धरी गुमाण समोसरणमें आयो।
देख्यो मानस्तंभ परम वैराग्यह पायो ॥
मान तजी दीक्षा ग्रही गणधर प्रथम हुओ सही।
मुगत गयो घडगाममें ब्रह्म ज्ञानसागर कही ॥ ९० ॥

गजकुमार हरिबंधु लघु वय अधिक सुजाणह ।
नेमिनाथ उपदेश बहु सुणियो निजकानह ॥
पायो परम विराग उग्र तपस्या मंडी ।
धर्यो ध्यान दृढ चित्त माया निविड विखंडी ॥
स्वसुर कृत उपसर्ग बहु अग्नि तणो निज सिर सह्यो ।
ब्रह्म ज्ञानसागर वदति गिरनारेँ शिवपद लह्यो ॥ ९१ ॥

हलधर श्रीबलिभद्र नृप बसुदेवसुनंदन ।
कृष्णरायको बंधु सकल शास्त्र कृत खंडन ॥
द्वारावति निज बंधु विरह थकी व्रत लीनो ।
दृढतर राख्यो चित्त ध्यान अधिक परिकीनो ॥
बालक फाँस्यो देखि करि तुंगी गिरि अणसण कियो ।
ब्रह्म ज्ञानसागर वदति पंचम स्वर्ग सुरपद लियो ॥ ९२ ॥

नगर राजगृह थान धनवंतो धनदत्तह ।
पायो मन वैराग्य हण्यो मोह उनमत्तह ॥
वर्धमान जिन पास हवा संयम व्रत धारी ।
छंड्यो कर्मविवाद जेन माया परिहारी ॥
उग्र तपस्या आदरी कर्म हणी मोक्षे गयो ।
ब्रह्म ज्ञानसागर वदति सिद्धतणो पद पामयो ॥ ९३ ॥

कावेरी उपकंठ नयर सिंहपुर नामह ।
नेमिनाथ जिनदेव पूरन इच्छित कामह ॥
भविक जीव सवि मिलि अहनिशि पूज रचावे ।
स्तोत्र पढत गुणवंत भावना मुनिजन भावे ॥
श्रीजिनपुण्य प्रसादथी भविक लोक लीला करे ।
ब्रह्म ज्ञानसागर वदति नेमिनाथ पातक हरे ॥ ९४ ॥

तीर्थंकर चक्रेश कामदेव पदधारी ।
शांतिनाथ महाराज त्रिभुवनको हितकारी ॥
विविध भोग साम्राज्य आण षट्खंड फिराई ।
समवसरण उपदेश धर्ममति सवि उपजाई ॥
हस्तनागपुर जन्म सरस सम्मेदाचल शिवकरण ।
रामटेक महिमा अधिक ब्रह्म ज्ञान वंदित चरण ॥ ९५ ॥

सकल विमल गुणपूर भूरभवसंकटभंजन ।
केवलज्ञानप्रकाश सुरवर मुनिवर रंजन ॥

कुनय कुकर्म विनाश शांतिनाथ सुखदायक ।
रामटेक सुभ थान वंदत सुरनरनायक ॥
मनवांछित फल पूरवे अविरल महिमा जगधणी ।
ब्रह्म ज्ञानसागर वदति शांतिनाथ त्रिभुवनधणी ॥ ९६ ॥
सकल देश शिर तिलक गुज्जरदेश पवित्रह ।
खंभायत वर नयर सज्जन वसत विचित्रह ॥
विमलनाथ जिनराज तास प्रासाद मनोहर ।
भद्दपुरा निवसंत याचक जन बहु सुखकर ॥
अंबावती नगरी सदा मनवांछित सुखकरण ।
ब्रह्म ज्ञानसागर वदति विमलनाथ वंदो चरण ॥ ९७ ॥
गुज्जर देश दयाल नगर नाम अंकलेश्वर ।
तिहाँ चिंतामणि पास नेमिनाथ परमेश्वर ॥
श्रावक पुण्य पवित्र अहनिशि भगति करंतह ।
पूजत भाव समेत पाप प्राचीन हरंतह ॥
मनवचकाया सुद्ध करी दान दया नित आचरे ।
ब्रह्म ज्ञानसागर वदति जिन अतिशय बहु सुख करे ॥ ९८ ॥
गुज्जर देश मझार नाम नलोडुँ ग्रामह ।
जिनवर भुवन उतंग दयाधर्म सुभ ठामह ॥
पद्मावति तिहाँ सार परता मनना पूरे ।
संकट ग्रह भय त्रास दुख दारिद्रह चूरे ॥
सकल भविक सेवा करत चिंता रोग निवारिणी ।
ब्रह्म ज्ञानसागर वदति पद्मावति सुखकारिणी ॥ ९९ ॥
प्रगट सकल गुणपूर भूर कल्याणक कर्ता ।
सुरपति कृतनित सेव निविड कर्माष्टक हर्ता ॥
विघन विषम विष रोग भय भंजन भगवंतह ।
शिवादेवि उर रयण मयणखंडन जग संतह ॥
एरंडवेलि नगराधिपति यदुकुलमंडन सुखकरण ।
ब्रह्म ज्ञानसागर वदति नेमिनाथ त्रिभुवनसरण ॥ १०० ॥
देश वराड सुजाण कारंजापुर सारह ।
पापहरण सुखकरण चंद्रप्रभ भवतारह ॥
रत्नत्रयजिनबिंब भूमिगृह मध्य वखाणो ।
महिमा मेरु समान अष्टापद सम जाणो ॥
सकल भविक जन हर्ष सहित अष्टविधार्चन नित करत ।
ब्रह्म ज्ञानसागर वदति रत्नत्रय पातक हरत ॥ १०१ ॥

२२. ज्ञानकीर्ति

भ. ज्ञानकीर्ति के यशोधरचरित की प्रशस्ति प्रकाशित हुई है (जैन ग्रंथ प्रशस्ति संग्रह भा. १ पृ. २२३-२६)। इस से ज्ञात होता है कि वे मूलसंघ-बलात्कारगण के भ. वादिभूषण के शिष्य थे। यह ग्रंथ उन्हों ने सं. १६५९ = सन १६०३ में लिखा था। अन्तिम प्रशस्ति में लेखकने राजा मानसिंह के मंत्री नानू का वर्णन किया है। इस के अनुसार नानू ने सम्मेदशिखर पर जिनमंदिर का निर्माण कराया था। प्रशस्ति का यह सम्बद्ध अंश आगे उद्धृत किया जाता है।

श्रीमूलसंघे च सरस्वतीतिगच्छे बलात्कारगणे प्रसिद्धे।
श्रीकुन्दकुन्दान्वयके यतीशः श्रीवादिभूषो जयतीह लोके ॥ ५८ ॥
तद्गुरुबन्धुर्भुवनसमर्च्यः पंकजकीर्तिः परमपवित्रः।
सूरिपदाप्तो मदनविमुक्तः सद्गुणराशिर्जयतु चिरं सः ॥ ५९ ॥
शिष्यस्तयोर्ज्ञानसुकीर्तिनामा श्रीसूरिरत्राल्पसुशास्त्रवेत्ता।
चरित्रमेतद् रचितं च तेनाचन्द्रार्कतारं जयताद् धरित्र्याम् ॥ ६० ॥
शते षोडश-एकोनषष्ठिवत्सरके शुभे।
माघे शुक्लेऽपि पञ्चम्यां रचितं भृगुवासरे ॥ ६१ ॥
राजाधिराजोऽत्र तदा विभाति श्रीमानसिंहो जितवैरिवर्गः।
अनेकराजेन्द्रविनम्यपादः स्वदानसन्तर्पितविश्वलोकः ॥ ६२ ॥
तस्यैव राज्ञोऽस्ति महानमात्यो नानूसुनामा विदितो धरित्र्याम्।
सम्मेदशृंगे च जिनेन्द्रगेहमष्टापदे वादिमचक्रधारी ॥ ६४ ॥
योऽकारयद् यत्र च तीर्थनाथाः सिद्धिं गता विंशतिमानयुक्ताः।
तत्प्रार्थनां च संप्राप्य जयवंतबुधस्य च।
आग्रहाद् रचितं चैतच्चरित्रं जयताच्चिरम् ॥ ६६ ॥

---

२३. लक्ष्मण

काष्ठासंघ–नन्दीतटगच्छ के भट्टारक चन्द्रकीर्ति के शिष्य लक्ष्मण की तीन रचनाएं प्राप्त हुई हैं – बारामासी, तीन चउवीसी विनती तथा श्रीपुरपार्श्वनाथविनती। इन में से अन्तिम रचना हमारे हस्तलिखित संग्रह

से आगे दी जाती हैं। इस में गुजराती में १९ पद्य हैं तथा इस की प्रमुख बातें इस प्रकार हैं — पद्य ३—५ लंका के रावण की बहिन चन्द्रनखा का विवाह विद्याधर खरदूषण से हुआ था। खरदूषण जिन-दर्शन किये विना भोजन नही करता था। एक वार वनविहार करते समय उसे प्यास लगी तव वालुका की मूर्ति वना कर उसने पूजन किया तथा वादमें वह मूर्ति एक कुंए में रख दी। पद्य ६—८ वहुत समय वाद एलचनगर का राजा एल कुष्टरोग से पीडित था, उस का रोग इस कुंए के जल से दूर हुआ। पद्य ९—११ रानी के कहने पर राजा ने उस कुंए की खोज की। पद्य १२—१६ वहां अनशन करने पर सातवें दिन स्वप्न में देव ने राजा से कहा कि इस कुंए में पार्श्वनाथ की मूर्ति है, उसे निकाल कर घास से वने हुए रथ में रखो तथा एक दिन आयु के गाय के वछडों को जोत कर चलो लेकिन नगर में पहुंचने तक पीछे नही देखो, राजा ने वैसा ही किया किन्तु वीच में ही शंकित हो कर पीछे मुड कर देखा तव भगवान की मूर्ति वहीं अंतरिक्ष रूप में स्थिर हुई।

लक्ष्मण के गुरु चन्द्रकीर्ति की ज्ञात तिथियां सं. १६५४ से १६८१ = सन १५९८ से १६२५ तक ज्ञात हैं। यही लक्ष्मण का भी समय निश्चित होता है (भट्टारक सम्प्रदाय पृ. २९६)।

श्रीपुरपार्श्वनाथ विनंति

प्रनमि सारद सद्गुरुपाय। विश्वसेन वाणारसि ठाय॥
श्रीवामादेवि वर्न सुस्याम। नवकर उंच शरीर आराम॥ १॥

श्रीपासजिनेश्वर विघनविनास। कमठासुरमर्दन मोक्षनिवास॥
पद्मावतिसहित सेवे धरणेंद्र। श्रीपुर वंदो पासजिनंद ॥ २॥

लंकानयरी रावण करे राज्य। चंद्रनखा भगिनी भरतार॥
खरदूषण विद्याधर धीर। जिनमुख अपलोकन मत धरे धीर॥ ३॥

वसंतमास आयो तिहाकाल। क्रीडा करन चाल्यो भूपाल॥
लागी तृषा प्रतिमा नहि संग। वालुतनूनि पायो विंव॥ ४॥

पूजि प्रतिमाजल लियो विश्राम। राख्यो विंव कूपनि ठाम॥
बहुत काल गया तिहा ठाय। प्रतिमा यत्न करे सुरराय॥ ५॥

एलचनगर ठान करे राज । कुष्ठरोग करी पीड्यो गात ॥
रजनिसमी होइ तनु क्रिम । दिनकर उगे सकल तनु जिम ॥ ६ ॥
दुख देखत काल बहुत भयो । राजा एल वन खेलन गयो ॥
क्रीडा कर्ता लागी तृषा । धुंडत जल देख्यो कूपसा ॥ ७ ॥
चरण पखालि पियो नीर । क्रीडा करी घरी आव्यो वीर ॥
रयनिसमे रानि चिंतवे ईस । कुन कारण हुयो जगदीस ॥ ८ ॥
प्रात समे सुंदरि पुछे तास । क्रीडा करी कवने वन पास ॥
भोजनपाक कऱ्यो केहे थान । सयनासन किहा कियो विश्राम ॥९॥
सर्व वृतांत पुछ्यो भूपाल । राजा रानि चाल्या ततकाल ॥
जे थानक जल लियो विश्राम । ततक्षन राजा आयो तिहा ठाम॥१०॥
थोडे नीर पखालु गात । सर्व रोग तनु हुयो विनास ॥
ते दिन राजा रह्यो तिहा ठाम । कियो रजनि तिहा विश्राम ॥ ११ ॥
प्रातह भूप करे संन्यास । जव यह प्रगटे देव कोइ पास ॥
तव लगइ अनसन देह । शत व्रत हुआ आभूपने तेह ॥ १२ ॥
दिवस सातमे स्वपनांतर हुयो । राजा मने हरखित भयो ॥
शर कालाने करो विस्तार । एक दिवसना गोवछा सार ॥ १३ ॥
ते जोपि रथ चलावो भार । फिर मत चितवो राजकुमार ॥
तवहु आवि सहज भाव । मनवांछित फल पुरउ राज ॥ १४ ॥
प्रात समे कियो सव साज । जोपि रुषभ रथ चलावो राज ॥
मनमि संका उपनि हेवा । न जानु केम आवे देव ॥ १५ ॥
उपज्यो भ्रम फिरि चिंतवे रूप । अंतरिक्ष देव रह्या अनूप ॥
महिमा वाध्यो महियल घनो । अंतरिक्ष प्रभु पासह तनो ॥ १६ ॥
जग केशरी दावानल सर्प । रण उदधि रोग वंधन दर्प ॥
पासह नामे सहु विघनविनास । भव भव शरण चरण जिन पास॥
काष्ठासंघे गुणह गंभीर । सूरिश्रीभूपणपट्ट सुधीर ॥
चंद्रसकीर्ति नमित नरसीस । सेवक लखमन चरन विसेस ॥ १८॥

२४. सोमसेन

मूलसंघ–सेनगण के कारंजापीठ के भट्टारकों में सोमसेन नाम के चार आचार्य हुए हैं। उन में अन्तिम सोमसेन सं. १६५६ से १६९६ = सन १६००–१६४० तक विद्यमान थे (भट्टारक सम्प्रदाय पृ. ३२)। रामपुराण तथा त्रैवर्णिकाचार ये उनके ग्रन्थ प्रकाशित हो चुके हैं। हमारे संग्रह में एक पुष्पांजलि जयमाला है जिस का कुछ अंश आगे दिया है – वह सम्भवतः इन्ही सोमसेन की रचना है। इस अंश में कैलास, चम्पा, पावापुर, गिरनार, सम्मेदपर्वत, बावनगज जिन, गोमटस्वामी, अंतरिक्ष (पार्श्वनाथ), बडवानी (नावर देस में), गजपंथ, शेत्रुंजय, मुक्तागिरि, मांगीतुंगी, तारंगा, वंशगिरि, नर्मदातीर इन सोलह तीर्थों का नामोल्लेख हुआ है।

पुष्पांजलि जयमाला

भरत क्षेत्रमध्ये कैलासं। व्रत पुष्पांजलि शुद्धविकासं ॥
चंपा पावापुरि गिरनारि। संमेद पर्वत पूजति भारि ॥ १६ ॥
सहस्र सताणु लक्ष चौरासि। तेविस अधिका स्वर्गावासि ॥
बावनगज जिण गोमटस्वामि। अंतरिक्षादिक पण वंदामि ॥२१॥
अट्ठसुकोडि छप्पणलक्षा। चारसे सताणु सहस्र संख्या ॥
एकाशीति अधिक प्रमानं। अकृत्रिम जिनपतिगेह जाणुँ ॥ २२ ॥
देसनावर बडवानि गजपंथा। सेत्रुंजे मुक्तागिरि सद्ग्रंथा ॥
मांगीतुंगि वर तारंगा। वंसगिरि नर्मदतट सुरंगा ॥ २३ ॥
नवसे पंचविसवर कोडि। त्रिपन लक्ष सतावित जोडि ॥
अठेतालिस अधिका जिन नवसे। वंदु जिनबिंब अकृत्रिम मनसे।
घत्ता ॥ पुष्पांजलिव्रतोत्साहे नंदीश्वरस्य पूजने।
भावभक्ति सदा कार्या सोमसेनेन सेविता ॥ २५ ॥

(इस के पहले १५ पद्यों तथा १७ से २० तक के पद्योंमें अकृत्रिम चैत्यालयों की स्तुति है अतः उन्हे उद्धृत नहीं किया है।)

२५. जयसागर

काष्ठासंघ—नन्दीतटगच्छके भट्टारक रत्नभूषण के शिष्य जयसागर की तीर्थजयमाला हमारे संग्रह के हस्तलिखित से आगे दी जाती है। इस में गुजराती के २२ पद्य हैं तथा निम्नलिखित तीर्थोंका उल्लेख है – १ अष्टापद – आदिजिनेश्वर, २ सम्मेदाचल – वीस तीर्थंकर, ३ चंपापुर – वासुपूज्य, ४ पावापुर – वर्धमान महावीर, ५ गिरनार – नेमिनाथ, ६ शत्रुंजय – पांडव तथा आठ कोटि मुनि, ७ नागेद्र (नागद्रह), ८ लोडण पार्श्वनाथ, ९ वंशस्थलगिरि, १० धाराशिव – आगलदेव, ११ तेर – वर्धमान, १२ आवापुर – चिन्तामणि, १३ मुक्तागिरि, १४ तुंगी, १५ गजपंथ, १६ विंध्याचल – बावनगज, १७ कुलपाक – माणिकदेव, १८ गोमटस्वामी, १९ तवनिधि, २० सेलग्राम – कमठेश्वर पार्श्वनाथ, २१ अंबापुर – मल्लिनाथ, २२ पैठन – मुनिसुव्रत, २३ एरंडवेल – नेमिनाथ, २४ खेडवापुर – त्रिभुवनतिलक, २५ श्रीपुर – अंतरिक्ष पार्श्वनाथ, २६ होलागिरि – शंखजिनेंद्र, २७ तारंगा, २८ आबूगढ, २९ पाली – आदिनाथ, ३० वडाली – अमीझरो (पार्श्वनाथ), ३१ धुलेव – वृषभदेव, ३२ मांडवगढ – महावीर, ३३ उज्जैन – अवंति पार्श्वनाथ, ३४ मगसी – पार्श्वनाथ, ३५ ग्वालियर – बावनगज, ३६ अणिधो – वायड(देश)में पार्श्वनाथ, ३७ जामनयर – जटासहित आदिनाथ, ३८ सारंगपुर – वर्धमान, ३९ रावण पार्श्वनाथ, ४० अचणपुर – पूज्यपाद द्वारा वंदित जिन, ४१ डूंगरपुर – मल्लिनाथ, ४२ सागवाडा – आदिनाथ, ४३ वासवाडा – वासुपूज्य, ४४ खाधुनगर – शीतलनाथ, ४५ समुद्रजिन, ४६ काशी – वाहुवली।

जयसागर के गुरु रत्नभूषण की ज्ञात तिथि संवत् १६७४ = सन १६१८ है। तदनुसार जयसागर का समय सत्रहवीं सदी के पूर्वार्ध में सुनिश्चित है। (भट्टारक सम्प्रदाय पृ. २९३–९४) ज्येष्ठजिनवरपूजा तथा पार्श्वनाथ पंचकल्याणिक ये जयसागर की अन्य रचनाएं हैं।

तीर्थ जयमाला

सुरनरपतिवन्द्यं नागनागाङ्गनार्च्यं
मङ्गलभविकसेव्यं नर्तितं नर्तकीभिः।
जननजलधिपोतं पापतापापहारं
जिनवरवरचैत्यं स्तौमि कर्मारिशान्त्यै ॥ १ ॥

सुवंदो नागभुवन जिनदाख । सुकोडि विसाल बहुतरि लाख ॥
सुव्यंतर ज्योतिष छे जिनगेह । असंख्य भवियण वंदो तेह ॥ २ ॥
सुलाख चउरासी सताणू सहस । तेवीसह वंदो सरगनिवास ॥
सुमेरु सुदर्शन मध्यह लोक । सुविजयाचल दोय गतशोक ॥ ३ ॥
सुमेरु चतुर्थह मंदर नाम । सुविद्युन्माली छे जिनधाम ॥
सुपंच मेरु असीय जिनगेह । सुभवियण वंदो पूजो तेह ॥ ४ ॥
सुषट् कुल जिनवर गेह छत्रीस । सुविजयारध सत्तरसो ईस ॥
सुसहस्त्रकूट वंदो जिनदेव । सुशीतशीतोदा करु कंठ सेव ॥ ५ ॥
सुअष्टापद वंदो जिनसार । श्रीआदिजिनेश्वर गया भवपार ॥
सुवीस जिनेश्वर पूजो संत । सुसम्मेदाचल मुक्ति लहंत ॥ ६ ॥
सुवासपूज्य चंपापुरि देव । वर्द्धमाण पावापुरि सेव ॥
सुगिरनारि छे नेमिजिणंद । पूजो भवियण परमानंद ॥ ७ ॥
सुपांडुपुत्र मुनि अठकोडि । सुशत्रुंजय वंदो करजोडि ॥
नागेंद्र नरामरच्चर्चितपाद । सुलोडण पास हरो विखवाद ॥ ८ ॥
सुवंशस्थल गिरि जिनवरधाम । सुआगलदेव धाराशिव ठाम ॥
सुतेरनयर वंदो वर्धमान । सुआग्रापुर पूजो चिंतामणि भान ॥ ९ ॥
सुमुक्तागिरि मनि मुक्तिनिवास । तुंगीश्वर पूजो पुरवो आस ॥
सुवंदो गजपंथह गिरिराय । सुबावनगज विंध्याचल ठाय ॥ १० ॥
सुकुलपाक वंदो माणिकदेव । सुगोमटस्वामी करु नितसेव ॥
सुतपनिधि वंदो दोइ सिववास । सुसेलगाम कमठेश्वर पास ॥ ११ ॥
अंघापुर पूजो मल्लिजिणंद । सुपैठनमा मुनिसुव्रत सुखकंद ॥
सुपरंडवेल्लि नेमीश्वर देव । सुत्रिभुवनतिलक खेडवापुर सेव ॥ १२ ॥
सुअंतरिक्ष वंदो जिनपास । सुश्रीपुरनयर पुरवि मन आस ॥
होलागिरि वंदो संखजिणंद । सुतारंगो पूजो मुनिवृंद ॥ १३ ॥
सुबावुगढ जिनबिंब मनोहार । सुआदिनाथ पाली अवतार ॥
खडावली पूजो अमीझरो सार । धुलेव नयर वृषभ जिनतार ॥ १४ ॥

सुपूज्नो मांडवगढ महावीर । सुउजेणीय पास अवंतीय धीर ॥
सुमालवमंडन मगसी पास । धरणेंद्र पद्मावती सेवक जास ॥ १५ ॥
सुग्वालियर गढ वंदो जिनराज । सुवावनगज पूरी सुखकाज ॥
सुवायडे वंदो जिनदेव । अणिघो पास करी सुरसेव ॥ १६ ॥
सुजामनयर जटासहित आदीस । सुवर्धमान सारंगपुर ईस ॥
सुरावणपास अचणपुर राय । सुपूज्यपादमुनिप्रणमितपाय ॥ १७ ॥
सुडूंगरपुर वंदो मल्लिनाथ । सुसागवाडि आदि भवमाथ ॥
सुवासुपूज्य वासवाडि धाम । सुखाधुनगर शीतल जयो नाम ॥१८॥
सुवंदो जलधिमाहि जयवंत । सुकासिगओ वाहुवलि संत ॥
नंदीश्वर जिनगेह वावन । सुकुंडलगिरि वंदो जिनधन्य ॥ १९ ॥
सुपूरव पश्चिम जिनवरगेह । उत्तर दक्षिण वंदो तेहं ॥
सुवीसजिनेश्वर क्षेत्र विदेह । सुवंदो भवियण शाश्वत तेह ॥ २० ॥
सुचंद्र नक्षत्र भानु विमान । सुतारा ग्रह वंदो जिनभान ॥
जे त्रिभुवनमाहि जिनवरसार । ते वंदता भवियण लहि पार ॥२१॥
घत्ता॥ जय जिनवरस्वामी पय सर नामी कर जोडी मन भाव धरी ।
जयसागर वंदो पाप निकंदो रत्नभूषण गुरु नमस्करी ॥ २२ ॥

---

२६. चिमणा पंडित

मराठी जैन साहित्य के लेखकों में चिमणा पंडित का विशिष्ट स्थान है। उन की दो रचनाएं आगे दी जाती हैं। पहली रचना तीर्थवंदना में निर्वाणकाण्ड में वर्णित तीर्थों का वंदन है। निर्वाणकाण्ड से पृथक् जो वर्णन है उस का सार इस प्रकार है – दूसरे श्लोक में लताओं – सर्पों द्वारा वेष्टित गोमटस्वामी को वंदन है। श्लो. ९ में मुक्तागिरि पर एक वकरे के (मराठी – मेंढा) उद्धार का तथा वहां की जलधारा का वर्णन है। श्लो. १४ में कलिंग देश की कोटिशिला तथा तारंगा का एकत्र उल्लेख है। श्लो. १५ में पावागिरि पर गंगादास द्वारा चैत्यालयों के निर्माण का वर्णन है। श्लो. २० में श्रीपुर के अंतरिक्ष पार्श्वनाथ को वंदन है जिन्हें खरदूषण ने पूजा था तथा जो श्रीपाल

राजा पर प्रसन्न हुए थे। श्लो. ३१ में प्रतिष्ठान के मुनिसुव्रत, आदीश्वर तथा चंद्रप्रभ को वंदन है, यहां के मंदिर को गंगा (गोदावरी) के तीर पर बारह द्वार थे ऐसा कहा है।

लेखक की दूसरी रचना एक आरती है। इस में कसनेर के पार्श्वनाथ को वंदन किया है। इस ग्राम को महिमावंत तीर्थ कहा है तथा कार्तिक शुद्ध पौर्णिमा को यहां यात्रा होती है ऐसा कथन है।

चिमणापंडित ने मराठी में कुछ व्रतकथाओं, स्तोत्रों तथा आरतियों की रचना की है। वे मूलसंघ – बलात्कारगण की लातूर शाखा के भट्टारक अजितकीर्ति के शिष्य थे। तथा कारंजा के भट्टारक धर्मभूषण से भी वे परिचित थे। उन का समय सन १६५१ से १६७० तक निश्चित रूप से ज्ञात है।

तीर्थवंदना

अरहंत देवा नमस्कार केला । मग सारजा श्रीगुरु नमियेला ॥
तीर्थवंदना श्लोक सांगेन पाहा । श्रवण केलिया होय पुण्य माहा ॥१॥
उभा गोमटस्वामि त्या पर्वताथी । महा दिव्य रूपाचि शोभा नसाथी ॥
वेली पन्नगी वेष्टिले अंग त्याचे । चिन्मय स्वरूप देवाधिदेवाचे ॥२॥
अष्टापदी आदीश्वरा मोक्ष जाली । भरते जिनमंदिरे रम्य केली ॥
वालि महावालि नागकुमारादि । कैलासी तथा प्राप्ति मुक्तिसुखादि ॥३॥
सम्मेदाचली वीस तीर्थंकरासी । समवसरणादि वैभव त्यासी ॥
परम सुख पावले मुक्तियोगी । महातीर्थ ते वंद्य इंद्रादिकासी ॥४॥
चंपावती वासुपूज्य जनमले । सुरनर इंद्रादिक देव आले ॥
लघु वय तप महोछव केले । चंपापुरी तीर्थ प्रभु सिद्ध झाले ॥५॥
उज्जंतगिरी नेमितीर्थंकरादि । [illegible] राय प्रद्युम्नादि ॥
सातसे बाहात्तरि कोडी मुनीशा । गिरनारी मुक्ति नमोतो सुरेशा ॥६॥
महीपति सिद्धार्थ कुंडलपुरी । वीर जन्मले त्रिशला त्या उदरी ॥
तीस वर्ष कुमार दीक्षा [illegible] । पावापुरी मुक्ति पद्मसरोवरी ॥७॥
मना लागली तुंगितीर्थाचि गोडी । [illegible] नव्याण्णव कोडी ॥
राम सुग्रीव श्रीबलिभद्र जाना । तीर्थंकर दोन्हि पादपद्मा ॥८॥

मेंढा उद्धरीला मुगतागिरीसी । साडेतीन कोडी मुनि मुक्ति त्यासी ॥
वरी चैत्यालयी प्रतिमा अपारा । अखंड वाहते महातीर्थधारा ॥ ९ ॥

नर्वदा उभय तटी सिद्ध झाले । अनंत मुनीश्वर मुक्तीसि गेले ॥
रेवास्नान जाले वहू पुण्य जोडे । हारे कर्ममल महाधर्म घडे ॥१०॥

गजपंथ शैल नृप यदुवंशी । वलिभद्र सप्त पहा जे तपेसी ॥
आठ कोडि मुनिवर सिद्ध झाले । ऐसे तीर्थ पाहे तया कोन तोले ॥ ११ ॥
वंसाचली राम सीता लक्षिमने । मुनिभय निवारिले ज्ञानवाने ॥
देशकुलभूषण ते ध्यान केले । तयाच्या प्रसादे शिवपद झाले ॥ १२ ॥
शेत्रुंजगिरी पर्वती पांडवादि । द्रविडाधिप आठ कोडी मुन्यादि ॥
मुगतीसि गेले महातीर्थ मोठे । अनुपम हे ऐसे नाही कोठे ॥ १३ ॥
जसहरराय पंचसत पुत्र । कलिंगदेसी कोडिसिला पवित्र ॥
तारंगा कोडि मुनि सुज्ञानपात्र । तप करुनि साधिले मुक्तिसूत्र ॥१४॥
रामनंदन लहु अंकुस जाना । पावागिरि उभय गेले निर्वाना ॥
पाच कोडि मुनि मुगतिनिवासी । गंगादासे चैत्याले केलो पुण्यासि ॥१५॥
रेवा पच्छिमे ते सिद्धकूट तीर्था । द्वि चक्री दशमन्मथ मुक्ति पंथी ॥
आठ कोडि यति गेले सिद्धपदा । ऐसे तीर्थ तूं वंदे त्रिकाल सदा ॥१६॥
वडवानि नयर दक्षिन भागी । चूलगिरी पर्वत तू पाहे वेगी ॥
इंद्रजित कुंभकर्ण उभय योगी । तपोनिधि झाले शिवसुखभोगी ॥१७॥
पावागिरि समीप सुवर्णभद्रा । महातपोनिधि चउर मुनींद्रा ॥
साधु मुक्ति गेले चलनातडागी । ऐसे सिद्ध क्षेत्रा नमस्कार वेगी ॥१८॥
वडग्राम सुनाम पच्छिम दिसा । द्रोणागिरि पर्वत कैलास जैसा ॥
तेथे सिद्ध झाले मुनि गुरुदत्त । ऐसे तीर्थ वंदा तुम्ही एकचित्त ॥१९॥

वरदत्त सागरदत्तादि स्वामी । मुगतीस गेले तारापुरग्रामी ॥
आठ कोडी मुनीश्वर सिद्ध जेथ । महातीर्थ वंदी जिनावास तेथ ॥२०॥

नर्मदातटी संभवनाथ देवा । केवलोत्पत्ति झाली नदी नीरी रेवा ॥
त्रय सिद्ध कोडि मुनि तये वेलि । मुगतीस गेले पहा तेच थली ॥२१॥

अंगानंग कुमार मुनीश्वरासी । साडेतीन कोडि यतिराय त्यासी ॥
सिवनागिरि झाली मुक्ति महीला । ऐसे तीर्थ तू वंदी त्रिकालवेला॥२२॥

महाशैल विंध्याचल दृष्टि पाहा । तया मध्य को तीर्थ आहेति माहा ॥
तेथे मेघनाद मुनि इंद्रजया । मेघवरे तीर्थ झाली मुक्ति श्रिया ॥२३॥

समोसरन रम्य श्रीपासोजीचे । रीसिंदेगिरि आले होते तयाचे ॥
तेथे गुरुदत्त मुनि वरदत्त । तपे झाले पंच यति मुक्तिकांत ॥ २४ ॥
महाराज तो श्रीपुरी अंतरिक्ष । खर दूषण भूपे पूजिला प्रतक्ष ॥
कैसा पावला पाहे राया श्रीपाला । ऐसा पासोजो देखिला आजि डोला ॥३०
प्रतिष्ठान ग्राम महातीर्थ त्यासी । बारा दारघंटे गंगातटी ज्यासी ॥
मुनिसुव्रतस्वामी निवास जेथ । आदीश्वर चंद्रप्रभ वंदी तेथ ॥ ३१ ॥
परमागम शब्दरत्नाकराचा । पाहाता मना न दिसे अंत त्याचा ॥
सुरगुरु सिनले गीर्वान वाचा । म्हने चिमना दास जिनेश्वराचा ॥३७॥

कसनेर पार्श्वनाथ आरती

चिदानंदि आरति चिंतामणीची । चिंतिली सारजा जे मुक्ति ज्ञानाची ॥
चित्ति धरुनि गुरु कृपा तयाची । चिंता हरली भेट झाली स्वामीची ॥१॥
जयदेव जयदेव जय पार्श्वनाथा । तुझिया दर्शन फटे भवबंधन व्यथा ॥
जयदेव जयदेव जय चिंतामणी। आरति वोवाळिन भावे तुज लागुनी ॥२॥
तारक भवसिंधु तू मुक्तिचा दाता । तारी शरनागता श्रीभगवंता ॥
तारक गुण तुझे वदनी बोलता । तापत्रय हरते चरनि अर्चिता ॥ ३ ॥
महिमावंत तीर्थ कसनेर ग्राम । महायात्रा कार्तिक शुद्ध पूर्णिम ॥
महा अभिषेक होती पूजा गुणधाम। महाराज तू भजता जना विश्राम ॥४॥
निजरूप तुझे देखोनि नयनी । निवाले मन माझे स्वामी येथोनी ॥
निज पद राखे देवी मुक्ति रमणी। आरति करि चिमना कर जोडोनि ॥५॥

---

२७. जिनसेन

कारंजा के सेनगण के भट्टारक जिनसेन भ. सोमसेन के पट्टशिष्य थे। इन की ज्ञात तिथियां शक १५७७ से १६०७ = सन १६५५ से १६८५ तक हैं (भट्टारक संप्रदाय पृ. ३३)। इन के परिचयपर चार पद्य सेनगण मन्दिर, नागपुर के एक गुटके में प्राप्त हुए हैं जो हम ने भट्टारक संप्रदाय पृ. १६ पर उद्धृत किये हैं। इन में अन्तिम पद्य है—

संघप्रतिष्ठा पाच धर्म उपदेस सुकारी।
श्रीगिरनारि समेदशिखर तीरथ कियो भारी॥
संघपति सोयरासाह निंवासा माधवसंगवी।
गनवासंगवी रामटेकमा कान्हासंगवी॥
जिनसेन नाम गुरुरायने संघतिलक एते दिय।
माणिक्यस्वामी यात्रा सफल धर्म काम बहु बहु किय॥

इस के अनुसार जिनसेन ने गिरनार, संमेदशिखर, रामटेक तथा माणिक्यस्वामी की यात्राएं की थीं तथा उन के द्वारा सोयरासाह, निंवासाह, माधव, गनवा एवं कान्हा इन पांच व्यक्तियों को संघपति पद प्राप्त हुआ था। इन में से कान्हासंगवी का प्रतिष्ठासमारोह रामटेक में ही हुआ था।

---

२८. विश्वभूषण

मूलसंघ – बलात्कारगण के भट्टारक विश्वभूषण भ. जगद्भूषण के शिष्य थे। सं. १७२२ तथा १७२४ = १६६६–६८ में वे विद्यमान थे (भट्टारक सम्प्रदाय पृ. १३३)। शौरीपुर में एक मन्दिर की प्रतिष्ठा उन्हों ने कराई थी। उन की सर्व त्रैलोक्यजिनालय जयमाला के सम्बद्ध पद्य पं. प्रेमीजी ने जैनसाहित्य और इतिहास पृ. ४६६–६७ पर दिये हैं। इस में निम्नलिखित तीर्थों का नामोल्लेख है—१ सोनागिरि – बुंदेलखंड में, २ रेवातीर – रावण के पुत्रों का मुक्तिस्थान, ३ सिद्धकूट – रेवा के पश्चिम तीरपर, ४ वडनगर, ५ वडवान – बावनगज, ६ अर्गलदेव, ७ होलगिरि – शंखेश्वर, ८ गोमटप्रभु – कर्णाट में १८ पुरुष ऊंची मूर्ति, वेलगुलपुर, ९ चिक्कवेटा – भद्रबाहु का निवासस्थान, नेमिचन्द्र सिद्धान्ती द्वारा स्थापित नेमिनाथ मंदिर, १० श्रीरंगपट्टन – महावीर, आदिनाथ, एलंदविड्वृत्त चन्द्रनाथ, ११ जैनवेदरी – चन्द्रनाथ, १२ गेरसोपा – पार्श्वनाथ, १३ कारकल – नेमिनाथ, ९ धनुष ऊंचे गोमटप्रभु, १४ वेनूर – ? इन्द्रनृप द्वारा स्थापित सात धनुष ऊंचे लघुगोमटप्रभु, १५ वरांग – तालाव में नेमिनाथ मंदिर, १६ हाडोली – चौवीसी

मंदिर, १७ चन्द्रगिरि – चन्द्रनाथ, १८ वटकल – शान्तिनाथ, ९१ हलेबीड – पार्श्वनाथ, शान्तिनाथ, २० सक्कीपुरपट्टन – पार्श्वनाथ, २१ हासन – पार्श्वनाथ, २२ हुब्बली – आदिनाथ, २३ चन्नापुर – वासुपूज्य २४ ऊखलद – नेमिनाथ, २४ एलूर, २६ हुंवच – पद्मावती, अकलंकेश्वर पार्श्वनाथ, २७ मलयखेड – नेमिनाथ, सिद्धान्त, भट्टारकपीठ, २८ शीशलनगर – चन्द्रनाथ, २९ वेलतंगडी – शान्तिनाथ।

सर्व त्रैलोक्य जिनालय जयमाला

[इस के पहले ३१ पद्य, बीच के कुछ पद्य तथा ६१ से ९५ तक के पद्य अनुपयोगी समझकर छोड दिये हैं ।]

सोनागिरि बुंदेलाखंडे । आयातो चंद्रप्रभ वंदे ॥
पंचकोडि रेवा वहमानं । रावनसूनु मोक्ष शिव जाणं ॥ ३२ ॥
सिद्धकूट आहूट सुकोटि । पश्चिम रेवांगत शिव जोटी ॥
वडनगरे वडवाण मुनिंदा । बावनगज सेवित मुनिचंदा ॥ ३३ ॥
अर्गलदेवं वंदे नित्यं । वडनगरे पासाचसित्यं (?) ॥
ढोलगिरौ संखेश्वर वंदे । तज्जात्रा दुख पाप निकंदे ॥ ४७ ॥
कर्णाटे गोमट प्रभु सेव्यं । तज्जात्रा भवसंतति खेव्यं ॥
अष्टादश पुरुषैः प्रोत्तुंगं । ध्यानधनं निर्भित्सितसंगं ॥ ४८ ॥
चिकबेटा लघु पर्वत तुंगं । भद्रबाहु पद्दम सत पुंगं ॥
नेमिनाथ चैत्यालय सुच्छं । नेमिचंद्र सिद्धांती प्रच्छं ॥ ४९ ॥
व्यलगुलपुर भंडार सुवस्ती । यस्तुति वंदित अघचय नास्ति ॥
अद्‌भुत महिमा कुसुमजवृष्टि । संप्रापित भूपाल सुदृष्टि ॥ ५० ॥
श्रीरंगपट्टन महिमाभासं । वर्धमान आदीश्वर कासं ॥
एलंद विप्रकृता शशिनाथं । अर्ह प्रतिष्ठा सुकृत साथं ॥ ५१ ॥
जैन वेदरी जैन निवासं । चंद्रप्रभ जिनधर्म प्रकाशं ॥
गेरसुपा वामासुत भ्राजं । तं दर्शन संप्रापित राजं ॥ ५२ ॥
कारकला शिवदेवीतनुजं । नव धनुर्गोमटप्रभु मनुजं ॥
नगर वेनूरे गोमटलघुकं । सप्तचाप रचिता नृपमधुकं ॥ ५३ ॥
ग्राम वरांग समीप तडागे । मूर्यमुक्ता जिनधामा भागे ॥
तन्मध्ये श्रीनेमिनिवासं । सौधर्म सम धामा भासं ॥ ५४ ॥
हाडोली हरिपीट चौवीसं । चंद्रगिरी चंद्रप्रभमीशं ॥
भटकाले शांतेश्वर पूजा । वडपाले शांतेश्वर पूजा ॥ ५५ ॥

हलेबिड्डु चैत्यालय तुंगं। पार्श्वनाथ शांतेश्वर पुंगं ॥
पार्श्वनाथ सक्कीपुरपट्टन। हासन पार्श्वाग्रे सुरनट्टन ॥ ५६ ॥
हुव्वलीय आदीश्वर पूतं। वासुपूज्य चन्नापुर नूतं ॥
ऊखलद नगरे नेमिकुमारं। बहु प्रतिमा अलुर सुचारं ॥ ५७ ॥
हुंबचनगरे पद्मादेवी। निर्गुंडीवृक्षामध सेवी ॥
पार्श्वनाथ चैत्यालय राजति। रथशोभा रविसम विभ्राजति ॥ ५८ ॥
अंकलेश्वरं पार्श्वप्रधारं। चिंतामणि चिंता चित हारं।
चंद्रनाथ निर्गुडी ध्यात्वा। मलयखेड सिंहासन ज्ञात्वा ॥ ५९ ॥
नेमिनाथ सिद्धांत सुध्यात्वा। जति सिंहासन स्थापितमित्वा ॥
शीशलनगरे शशिजिन वंद्यं। व्यलतंगडी शांतेशमणिंद्य ॥ ६० ॥
मूलसंघ शारदवरगच्छे। वलात्कार कुंदान्वय हंसे ॥ ९६ ॥
जगताभूपण पट्ट दिनेशं। विश्वभूपण महिमा जु गणेशं ॥
लाड भव्य उपदेश सुरचिता। सद्वचने जयमाल सचीता ॥ ९७ ॥

---

२९. मेरुचन्द्र

मूलसंघ – बलात्कारगण की सूरत शाखा के भट्टारक मेरुचन्द्र भ. महीचन्द्र के पट्टशिष्य थे। उन का समय सं. १७२२ से १७३२ = सन १६६६ से १६७६ तक ज्ञात है (भट्टारक सम्प्रदाय पृ. १९९।) वे हुंबड जाति के थे तथा उन की दो रचनाएं प्राप्त हैं – षोडशकारण पूजा एवं बलभद्र अष्टक। इन में से दूसरी रचना हमारे हस्तलिखित संग्रह से आगे दी जाती है। इस के अनुसार बलभद्र अच्युत (श्रीकृष्ण) के अग्रज (बडे भाई) थे तथा मृत्यु के बाद पांचवें स्वर्ग में उत्पन्न हुए थे। उन्हें तुंगी पर्वत के अधिपति कहा है जो वहां से उन के स्वर्गवास का सूचक है।

वलिभद्र अष्टक

क्षीराम्भोनिधितीर्थसमुद्भवकैः सुजलैः।
द्रव्यसुगन्धविमिश्रितकाञ्चनकुम्भगतैः ॥
पञ्चमस्वर्गनिवासि ददात्यखिलं हि सुखं।
तुङ्गी महीध्रपतिं सुयजे वलभद्रसुरं ॥ १ ॥ जलं।

कुङ्कुमकर्पुरमिश्रितचन्दनसाररसैः
पीतिमतर्जितहाटकप्रीणितभृङ्गगणैः ॥ पंचम. ॥ २ गंधं ।
कलमशालिसदक्षैः कृतपञ्जसुपुञ्जभरैः ।
कैलाशभृध्र इवोज्ज्वलवासितदिक्सुमुखैः ॥ पंचम. ॥ ३ अक्षतं ।
चम्पककेतकिजातिसुमालतिदैवसुमैः ।
कुन्दकदम्बकपाडलबकुलकुशेशयकैः ॥ पंचम. ॥ ४ पुष्पं ।
खज्जकमोदकमण्डकपायसपूपभरैः ।
शाल्यन्नैः शुचिपात्रगतैर्मधुरैः सुरसैः ॥ पंचम.॥ ५ चरुं ।
हैयगवीनसुधाकरतैलसुगन्धकृतैः ।
दीपैर्निर्जितरत्नसुकान्तितमोघहरैः ॥ पंचम. ॥ ६ दीपं ।
स्वगुरुसमुत्थितधूम्रघटैरलिसंमिलितैः ।
जीमूतविभ्रमकल्पित चातकमोदकृतैः ॥ पंचम. ॥ ७ धूपं ।
घाण्टालाङ्गलिगोस्तनिखर्जुरमोचफलैः ।
न्हीकृतनाकिफलव्रजमानसनेत्रहरैः ॥ पंचम. ॥ ८ फलं ।
वारिचन्दनाक्षतैः प्रसूनकैश्चरूत्करैः ।
दीपधूपसत्फलैः सुवर्णभाजनस्थितैः ॥
अच्युताग्रजं यजे श्रीतुङ्गीभृध्रसंस्थितं ।
वावदीति मेरुचन्द्र शुद्ध भक्तिभावयुक् ॥ ९ ॥ अर्घं ॥

---

३०. गंगादास

गंगादास कारंजा के मूलसंघ – बलात्कारगण के भट्टारक धर्मचन्द्र के शिष्य थे। इन की रचना बलभद्र अष्टक हमारे हस्तलिखित संग्रहसे आगे दी जाती है। इन्हों ने गुरु के साथ मांगीतुंगी पर्वत की यात्रा पौष अष्टमी, बुधवार, शक १६१७ = सन १६९५ के दिन की। अन्तिम पद्य में यात्रा की यह तिथि देते हुए लेखक ने इस पर्वत से ९९ कोटि मुनियों की मुक्ति का तथा बलभद्र के स्वर्गवास का उल्लेख किया है। गंगादास ने मराठी में पार्श्वनाथ भवान्तर (शक १६१२), गुजराती में आदितवार व्रतकथा (शक १६१५), त्रेपनक्रिया विनती व जटामुकुट, तथा संस्कृत में संमेदाचलपूजा, क्षेत्रपालपूजा, एवं मेरुपूजा की रचना की है (भट्टारक सम्प्रदाय पृ. ७३)।

वलिभद्र अष्टक

रत्नत्रयनिर्मल तुहिनकरोज्ज्वल सीर्पा (?) जस जलकेन वरं।
भुवनत्रयभूषण भवजलशोषण जिनमतपोषण शुद्धतरं॥
तुंगीस्थमुनीन्द्रं त्रिभुवनचन्द्रं श्रीवलिभद्रं भद्रकरं।
चर्चे सुरमहितं मुनिगणसहित भवभयरहितं दुरितहरं॥ १॥ जलं.
करुणारसकूपं कामसरूपं नुतमुनिभूपं मुक्तिवरं।
जनतापतिकन्दन षट्पदनन्दन सुरतरुचन्दनकैः सुकरं॥ तुंगी. गंधं
धर्मामृतधारं शुद्धविचारं मर्दितमारं मानहरं।
मौक्तिकशशिभाधर नयनमनोहर शालिजसुन्दरकैः प्रवरं॥२तुंगी.॥अक्षतं
विद्याधरवन्द्यं सततमनिंद्यं गतयमवंधं शुद्धनयं।
दशदिग्गतपरिमल चम्पकपाडलपुष्पभरेण सुगुणनिलयं॥तुंगी. ॥४ पुष्पं
धृतसंयमभारं भविकाधारं भवजलतारं शुभ्रमति।
सज्जनतृप्तिकर व्यञ्जनयुत वर पायसघेवरकैः सुपति॥ तुंगी.॥ ५ नैवेद्यं
पन्नजपन्नावर गोचरकिन्नर निखिलपुरंदरगणनमितं।
यमतातसुरञ्जन तिमिरविभञ्जन दीपनु वाण सदा समितं॥तुंगी.॥६दीपं.
वाञ्छितदातारं विधुरनिवारं मुनिशृङ्गारं मोक्षरतं।
आद्दतसुरभूपैरलिगणरूपैरगुरुसुधूपैर्विश्वमतं॥ तुंगी. ॥ ७॥ धूपं
पङ्कजदलनेत्रं जगतिपवित्र वरतरचित्रं चतुरतरं।
क्रमुकाम्रकचोचैश्चिर्भटचोचैः कल्पवृक्षसुफलैरजरं॥ तुंगी. ॥ ८॥ फलं.
कोटीनां नवमो प्रमा मुनिवरा मुक्तिगताश्चापरे
स्वर्गगो वलिभन्द्रकोऽर्वनिकरैः श्रीमांगितुंग्यद्रिके।
शाके सप्तशशांकषोडशमिते पौषाष्टमी क्षे दिने।
यात्रार्थे गुरुधर्मचन्द्रमहिता गंगादिदासार्चिताः॥ ९॥ अर्घं.॥

---

३१. ब्र. धनजी

इन की मुक्तागिरि – जयमाला हमारे हस्तलिखितसग्रह से आगे दी जाती है। इस में हिंदी-मिश्रित संस्कृत के ११ पद्य हैं। पद्य ५ - में वराड देश में यह पर्वत है। ऐसा कहा है, ६ वें पद्य में ३॥ कोटि मुनियों के मोक्ष जाने का उल्लेख है तथा पद्य ७ में यहां के मूलनायक श्रीपार्श्वनाथ हैं ऐसा कहा है। पद्य २ के अनुसार यहां विशाल शिखरा

बद्ध मंदिर हैं। इस रचना के कर्ता ब्रह्मचारी धनजी सम्भवतः वे धनसागर ही हैं जिन की तीन रचनाएं – नवकारपचीसी, विहरमानतीर्थंकर स्तुति तथा पार्श्वपुराण – प्राप्त हैं। वे काष्ठासंघ – नन्दीतटगच्छ के भट्टारक सुरेन्द्रकीर्ति के शिष्य थे तथा उन का समय सन १६९५ से १७०० तक निश्चित रूप से ज्ञात है (भट्टारक सम्प्रदाय पृ. २९७)।

मुक्तागिरि जयमाला

सर्वकर्मारिनाशाय विघ्ननाशाय संस्तुवे।
संस्तुवे फलमोक्षाय देवसेवाय संस्तुवे ॥ १ ॥
सिखरबद्ध प्रासाद विशालं। घंटानाद ध्वजा जयमालं ॥
मुक्तागिरि सुभ पर्वत नावं। देव विद्याधर पूजितभावं ॥ २ ॥
नृत्यविनोद सुकामिनि गानं। मंगल आरति तोरणमालं॥ मुक्तागिरि०॥३॥
ताल कंसाल मृदंग सुयंत्रं। सौरभधूपगंधोदकमंत्रं ॥ मुक्ता० ॥ ४ ॥
वराड देश जयो गिरिराजं। चतुर्विध संघ करे निजकाजं ॥ मुक्ता०॥५॥
अउठ कोडि मुनि मुक्तिनिवासं। पुष्पवृष्टि जयकार सुरेसं॥ मुक्ता०॥६॥
सकल सौभाग्य सुमंडित देयं। श्रीमूलनायक पार्श्व सुगेयं ॥ मुक्ता०॥७॥
इंद्रचंद्र धरणेंद्र सुआवे। पूजे जिनवर भावना भावे ॥ मुक्ता० ॥ ८ ॥
स्वर्ग विमानव जानो ख्यातं। भवियण वांछित पूरण दातं ॥ मुक्ता० ॥९॥
भाव धरीने म्हणे ब्रह्मचारी। सेव करे धनजी सुखकारी ॥ मुक्ता०॥१०॥
घत्ता ॥ समस्तदेवदेवेंद्रं समस्तयतिनायकं।
समस्तामरनायेन पूजितः परमेश्वरः ॥ ११ ॥

---

३२. मकरंद

इस कवि की मराठी रचना रामटेकछंद हमारे हस्तलिखित संग्रह से आगे दी जाती है। इस में १६ पद्य हैं जिन का सारांश इस प्रकार है– १ यह क्षेत्र 'झाडी मुलख' में अर्थात वनों से परिपूर्ण प्रदेश में है, २ यहां बघेरवाल लाड जाति के लोग पूजादि करते हैं, ३ यहां सुरे,

गुजर, पल्लीवाल जातियों के लोग तथा वराड (विदर्भ) एवं खोलापूर के लोग भी यात्रा करते हैं, ४ यहां शांतिनाथ की तीन पुरुष ऊंची मूर्ति पश्चिम की ओर मुख कर के है, ७ मुख्य मंदिर के दोनों ओर क्षेत्रपाल हैं, आगे वेदी ओर प्रतिशाला है, लेकुरसंघवी ने चौक वनवाया है, ८ गाहानकरी उपनाम के लाड सज्जन ने सभामंडप तथा चारों ओर किले जैसी दीवाल वनवाई है जिस में एक खिडकी है, ९. चौकोर आंगन में एक 'अड' अर्थात कुंआ वनाया है, उस में वहुत पानी है, आगे चिंचवन में अर्थात इमली के वृक्षों के वीच भी एक विहीर अर्थात कुंआ है जिस का पानी मीठा है, १० मंदिर के पीछे एक तालाव, आंवारवन, एक कुंआ, तातोवा की ध्यान की मठी है, ११ आगे भवानी–महाकाली का मंदिर है, १२ कार्तिक पूर्णिमा को यहां वार्षिक यात्रा होती है, १३ यहां के गड अर्थात पहाडीपर राम, सीता के मंदिर हैं, तालाव के पास कैकेयी, गौतम के मंदिर हैं, नागार्जुन ऋषि का गुप्त स्थान है, १४ सिंदूर तीर्थ के आगे आंगन है, वहां तीन मन वजन की वालाजी की मूर्ति है, १५ यह क्षेत्र देवगड राज्य के दहे परगने में है तथा वलात्कारगण के विद्याभूषण भट्टारक का शिष्यवर्ग यहां रहता है, १६ उन में हेमकीर्ति 'झाडिचा पाछाव' अर्थात इस वन्य प्रदेश के वादशाह कहे जाते हैं, उन के शिष्य मकरंद ने यह रचना लिखी।

जैसा कि उक्त रचना के अन्तिम पद्य में कहा है, कवि मकरंद के गुरु वलात्कारगण के भट्टारक विद्याभूषण के शिष्य भट्टारक हेमकीर्ति थे। इन का समय सन १६९६ से १७३१ तक ज्ञात है (भट्टारक-संप्रदाय पृ. ८७)।

रामटेक छंद

झाडि मुलकात पाहिल एक। हे तीर्थ अमोलिक रामटेक ॥ १ ॥
सांतिनाथाचे चरनाजवळ। जाति लाड वगेरवाळ ॥
न्हवन पुजा करति त्रिकाळ। जैन लोक। हे तीर्थ० ॥ २ ॥

अनखिन वद्नुरे गुजरपलिवार । वराड धरुनि खोलापुर ॥
आला श्रीसंघाचा भार । सकळिक लोक । हे तीर्थ० ॥ ३ ॥
उभी मूर्त पछम दिसाला । तिन पुरुस उभा पाहिला ॥
सांतिनाथ मज भेटला । गेले पातक । हे तीर्थ० ॥ ४ ॥
सत इंद्राचा तु राना । पुडे नृत्य करिति देवांगना ॥
स्वर्गमृत्यु त्रिभुवना । गर्जति लोक । हे तीर्थ० ॥ ५ ॥
आयका रामटेकाचि वस्ति । देउल वांधिल कवन्याप्रति ॥
हे का पुर्व लोक सांगति । आहे ठाउक । हे तीर्थ० ॥ ६ ॥
दोहि वाजु क्षेत्रपाळ । पुडे वेदि बांधलि पडसाळ ॥
लेकुर संगवि भुपाळ । मांडिला चौक ॥ हे तीर्थ० ॥ ७ ॥
गाहानकरि लाड बोलला । सभामंडप त्याने बांधिला ॥
भोवताला पवळिचा किल्ला । खिडकि एक । हे तीर्थ० ॥ ८ ॥
अड बांधिला चौवाऱ्यात । पानि लागल मालोनि त्या ल्रिन्यात ॥
पुढ विहिर त्रिचवनात । पानि मिस्टानिक । हे तीर्थ० ॥ ९ ॥
मावे तळ आधार वन । कापुर विहिरिन्चि बांधन ॥
तातोबा मडित धरे ध्यान । तपालायक । हे तीर्थ० ॥ १० ॥
सनमुख देउळ भवानिच । लोक म्हनति महाकाळिच ॥
अनखि मिथ्याति मुर्खांच । न पहावे मुख । हे तीर्थ० ॥ ११ ॥
कार्तिक शुद्ध पुरनमेसि । यात्रा भरे वरसोवरसि ॥
तेथचि महिमा वरनु कैसी । इंद्रलोक । हे तीर्थ० ॥ १२ ॥
राम सीता गड रहिवासि । केगद् वरड गौतन तळ्यापासि ॥
नागार्जुन गुत रुनि । द्रिस्यापुर्वक । हे तीर्थ० ॥ १३ ॥
सैंदुर विहिरिन्चि बांधण । पुडे आहे पटांगण ॥
तेथे थाला तो मनमोहन । त्याच वजन पक तिन मन ॥
कागद्पिनि । हे तीर्थ० ॥ १४ ॥
देवगडच्या दहे परगना । विशामुसलानि आनना ॥
गड थाळाकार जाना । समस्त लोक । हे तीर्थ० ॥ १५ ॥
पाळाव शाडिच्या म्हनति । धन्य धन्य टेमयाति ॥
मकरंद पाव्या त्याहचे चित्ति । नाव धारक । हे तीर्थ० ॥ १६ ॥

३३. तोपकवि

तोपकवि अथवा टोपण्णा कोल्हापुर के भट्टारक लक्ष्मीसेन के शिष्य थे। उन्हों ने नागपुर में शक १६२६ = सन १७०४ में पद्मावतीपूजा की रचना की तथा बादमें वे वहीं दीक्षा लेकर शान्तिकीर्ति के नाम से भट्टारक हुए। उन की पद्मावतीपूजा नागपुर की जैन वाङ्मय प्रकाशन संस्थाने छपाई है। इस में अन्तर्भूत पद्मावतीस्तोत्र तथा जयमाला के कुछ पद्यों में पोम्बुच (हुम्मच) की पद्मावतीदेवी की स्तुति की गई है। नीचे हम ये सम्बद्ध पद्य तथा लेखक की अन्तिम प्रशस्ति उद्धृत करते हैं।

पद्मावती स्तोत्र

श्रीमन्नागामरेन्द्रप्रकरविनुतपार्श्वेशपादाब्जभृंगि।
श्रीपातालेशचक्षुःश्रुतिपरिदृढभार्ये महापुण्यमूर्ते।
श्रीमत् सिद्धान्तकीर्ति-व्रतिपतिचरणाराधकेऽभीष्टसिद्धयै
श्रीदेवि स्तौम्यहं त्वां परमकरुणया पाहि पद्माम्बिके माम्॥ १॥
श्रीमद्राजाधिराजक्षितिपतिजिनदत्तार्च्यमानक्रमाब्जे
भूभामावक्त्रवच्छोभितविनुतमहाक्षेत्रपोम्बुच्चवासे।
लोहं सद्धेमकृत्सिद्धरसपरिलसत्कूपमध्याभिरामे
सौख्यप्राप्त्यै स्तुवे त्वामनवरतमहं पाहि मां देवि पद्मे॥ २॥
निर्गुंडीवृक्षमूलस्थकमलिनिपयःकूपनिष्कान्तबिम्बे
वल्मीकं सव्यभागे तव विलसति विध्वस्तदैत्यप्रताने।
भूतप्रेतौघमर्दिन्यतुलफणिफणालंकृतप्रोच्चशीर्षे
दत्त्वा मे कामितार्थं भजकसुखकरे देवि मां रक्ष रक्ष॥ ५॥

जयमाला

अम्बाम्बिकयोर्मध्यमबिम्बे पोम्बुच्चपुरवासिनि जगदम्बे।
मयि तव कृपास्तु कोमलगात्रे जय पद्मावति परमपवित्रे॥ ८॥
निर्गुंडयगमूलकृतवासे भार्गवदिन पूजितजनराशे।
नयभक्तार्चितपद्मशतपत्रे जय पद्मावति परमपवित्रे॥ ९॥

प्रशस्ति

स्वस्तिश्रीनृपशालिवाहनशके पञ्चद्र्यद्रिचन्द्रांकके
रक्ताक्ष्याऽह्वयवत्सरे प्रथमके मासेऽधिके चैत्रके ।
शुक्ले सत्प्रतिपत्तिथौ विधुदिने घोम्मात्मजेनोत्तमा
तोपेनाहिपुरे कृता कृतिरियं पूर्णा जगन्मंगला ॥ १ ॥
स्वस्तिश्रीकरवीरकोल्लापुरसिंहासनाधीश्वरश्रीमल्लक्ष्मी-
सेनभट्टारकशिष्येण बागवाडीपुरस्थेन रायबागश्रेष्ठिना
घोम्मात्मजेन तोपाख्यकविना भव्यजनाराधनार्थं पुण्यार्थं
कृतेयं पद्मावतीहस्तायुधांगपूजाविधानकृतिः ।
कृत्वेमां कवितां तोपकविर्नागपुरे मुनिः
बलात्कारगणे शान्तिकीर्तिभट्टारकोऽभवत् ॥

इन पद्यों के अनुसार देवी पद्मावती सिद्धान्तकीर्ति आचार्य की उपासिका थी, राजा जिनदत्त द्वारा पूजित थी, महाक्षेत्र पोम्बुच्च में निवास करती थी। जिस कूप में देवी की मूर्ति थी वहां लोहे को सोना बनानेवाला सिद्धरस था। देवी की मूर्ति निगुंडी वृक्ष के नीचे थी, उस की दाहिनी ओर बाँमी थी। अम्बा तथा अम्बिका की मूर्तियों के बीच में पद्मावती की मूर्ति थी तथा शुक्रवार को जनसमूह उस की पूजा करता था।

---

३४. देवेन्द्रकीर्ति

कारंजा के बलात्कारगण के पट्टधीश भट्टारक देवेन्द्रकीर्ति ने सन १७०८–९ में महाराष्ट्र तथा गुजरात के कुछ तीर्थों की वंदना की। उन के शिष्य जिनसागर, रत्नसागर, चंद्रसागर, रूपजी, व बीरजी इस यात्रा में उन के साथ थे। इस यात्रा के संस्मरणरूप कुछ पद्य हमारे संग्रह के एक हस्तलिखित में प्राप्त हुए। इन्हें हम ने भट्टारक संप्रदाय (पृ. ६०-६१) में प्रकाशित भी किया है तथा यहां उद्धृत कर रहे हैं। इन पद्यों में यात्रा की तिथियां तथा महत्त्व इस प्रकार बतलाया है–

(१) पौष शु. २, रविवार, शक १६५० गजपंथ पर्वत – नासिक तथा त्रिंवक के समीप, आठ कोटि मुनियों का मुक्तिस्थान ।

(२) पौष शु. १३, गुरुवार, शक १६५० मांगी तुंगी पर्वत – भागल देश में महेंद्रपुरी के समीप, कोटि मुनियों का मुक्तिस्थान तथा हलधर (वलराम) एवं माधव (कृष्ण) का मृत्युस्थान ।

(३) वैशाख कृष्ण १३, बुधवार, शक १६५१ धूलिया ग्राम – खडक देश (मेवाड) में ऋषभदेव (केशरियाजी) का मंदिर ।

(४) मार्गशिर शु. ५, शुक्रवार, शक १६५१, तारंगा पर्वत – गुर्जर देश में वरदत्त आदि साढे तीन कोटि मुनियों का मुक्तिस्थान, यहीं कोटिशिला है, जो कोटि मुनियों का मुक्तिस्थान है ।

(५) पौष कृष्ण १२, रविवार, शक १६५१ रेवतक (गिरनार) पर्वत – सोरठ देश में नेमिनाथ, कामदेव (प्रद्युम्न) आदि बहत्तर कोटि मुनियों का मुक्तिस्थान ।

(६) माघ कृष्ण ४, सोमवार, शक १६५१ अरिंजय (शंत्रुजय) पर्वत – सोरठ देश में तीन पांडव तथा लाड राजा एवं आठ कोटि मुनियों का मुक्तिस्थान, वहुत जिनबिंबों से विभूषित है ।

देवेंद्रकीर्ति धर्मचंद्र भट्टारक के शिष्य थे । उनकी ज्ञात तिथियां सन १७०० से १७३० तक हैं । कल्याणमन्दिरपूजा, विषापहार पूजा, व नंदीश्वर आरती ये उन की रचनाएं प्राप्त हैं । उन के शिष्य जिनसागर मराठी के अच्छे लेखक थे । उन की रचनाओं का एक संग्रह 'जिनसागर यांची समग्र कविता' जीवराज ग्रंथमाला द्वारा प्रकाशित हुआ है । इस की प्रस्तावना में तथा भट्टारक संप्रदाय (पृ. ७४–७५) में देवेंद्रकीर्ति के विषय में प्राप्त तथ्य हम ने एकत्रित प्रस्तुत किये हैं । उन की तीर्थयात्रा के संस्मरणपद्य मूल रूप में आगे दिये जाते हैं ।

षट्तीर्थवंदना

नासिक त्रिंवक गाम समीप महागजपंथ धराधर सारं ।
ध्यान बले वसु कोडि मुनीस गया जिह कर्म जिती भवपारं ॥
षोडश पन्नास पोस समुज्वल बीज तिथी दिननायकवारं ।
देवेंद्रकीर्ति नमे जिनरत्नचंद्रांबुधि रूपविद्यार्थी संवारं ॥ १ ॥

भागलदेस महेंद्रपुरी तस संनिधि मांगि गिरी तुंगि तुंगं ।
हलधर माधव कोडि तपोधन मुक्ति वरी करी कल्मषभंगं ॥
शून्यशरान्वितषड्विधु पौष त्रयोदश शुक्ल गुरुदिन चंगं ।
देवेंद्रकीर्ति नमे जिनरत्नचंद्रांबुधि रूपवीरादिक संगं ॥ २ ॥

देश खडक्कमे धूलियगाम युगादि जिनाधिप पुण्यपवित्रा ।
जाकी दिगंतर विश्रुत उज्वल कीर्ति जपे नर देव कलत्रं ॥
रूप शरान्वित षोडश वैशाख कृष्ण त्रयोदशि चंद्रमपुत्रं ।
देवेंद्रकीर्ति नमे जिनरत्नचंद्रांबुधि रूपजी वीरजि छात्रं ॥ ३ ॥

गुर्जर देश सुतारंग पर्वत कोडि शिलोपरि कोडि मुनीसा ।
कोडी अउट्ठ चली वरदत्त पुरःसर भेदि जवंजव खासा ॥
चंद्रशराधिक षोडश उज्वल पंचमि भार्गव मार्गक वासा ।
देवेंद्रकीर्ति भट्टारक संग समेत नमे करि भूतल सीसा ॥ ४ ॥

सोरट देश सुरेवतकाचल नेमि मुनीश बहत्तर कोडी ।
काम पुरोग अठ्यीशत योगी शिवंगय संसृतिवल्लरि तोडी ॥
पुष्परवी वद बारसि इंदुशरर्तु कलेश समा अतिरूडी ।
देवेंद्रकीर्ति भट्टारक संग समेत नमे करपंकज जोडी ॥ ५ ॥

सोरट देश अरिंजय भूधर भूरिजिनेश्वरबिंब अनूपा ।
पांडु सुत त्रय मोक्ष गया बहु कोडितथा वर लाड सुभूपा ॥
एक शरान्वित षोडश वत्सर कालिम माघ चतुर्थि उरूपा ।
देवेंद्रकीर्ति भट्टारक भावसमेत नमे शांतिसागर रूपा ॥ ६ ॥

---

३५. जिनसागर

कारंजा के भट्टारक देवेन्द्रकीर्ति का ऊपर उल्लेख किया है। जिनसागर उन्हीं के शिष्य थे। उन की मराठी, हिंदी तथा संस्कृत रचनाओं का संग्रह जीवराज ग्रन्थमाला के मराठी विभाग से प्रकाशित हुआ है। जिनसागर की ये रचनाएं शक १६४६ से १६६० = सन १७२४ से १७३८ तक की हैं। इन में से तीन उद्धरण आगे दिये जाते हैं। पहले में पावापुर से लव, कुश के निर्वाण का उल्लेख है। दूसरे में जिनदत्त राजा द्वारा पोंबुच्चनगर की स्थापना का तथा पद्मावती

देवी की प्रतिष्ठा का वर्णन है। एवं तीसरे में विपुलाचल से जीवंधर के मोक्ष का वर्णन है। इस के अतिरिक्त जिनागमकथा में कवि ने सभी तीर्थंकरों के जन्मनगरों का उल्लेख किया है वह उत्तरपुराण के अनुसार है। गुरु के साथ उन्हों ने छह तीर्थों की वंदना की थी उस का उल्लेख ऊपर किया ही है।

लहुअंकुश कथा श्लो. ७७

तेंव्हा दोघ कुमार राज्य करिता वैराग्यता पावले।
घेती पंचमहाव्रतासि वरवे संवोधता लाधले॥
केला भव्यजनासि वोध वहुधा पावापुरी लाधले।
गेले मोक्षपदासि भव्य कवि ते श्रोत्या जना दाविले॥

पद्मावती कथा श्लो. ४७, ४८, ५५

प्रधान प्रोहीत समस्त भेटे। कर्णाटकाचे वहु पुण्य मोठे॥
सेना मिळाली वहु वाद्य वाजे। प्रसिद्ध जाले जिनदत्त राजे॥
केली नवी पोंवुचपूरवस्ती। भृगुदिनी स्थापिलि देविमूर्ति॥
हे मात गेली मथुरा पुराला। साकार राजा सह गेहि आला॥
अद्रामध्ये कृष्णपाषाणमूर्ति। आणि स्थापी वृक्ष निर्गुंड व्यक्ती॥
नित्य नेमी दर्शनी अन्न घेई। त्या नेमाने संतती पुत्र होई॥

जीवंधरपुराण अ. १० पद्य १८२-८३, १८६

हे ऐकोनि जीवंधर। वैराग्य पावला दुर्धर॥
ऐकी राया हा विचार। म्या तुज साचार सांगितला॥
सुरम्य पर्वतावरी। महावीर येईल धर्मधुरंधरी॥
तेथे केवळज्ञान पावोनि एकसरी। लोकसिखरी जाईल॥
ते मोक्षस्थान जीवंधरासी। विपुलाचल पर्वत पुण्यरासी॥
हे सर्व सांगितले तुजपासी। धरी मानसी नृपराया॥

३६. राघव

इस कवि की मराठी रचना मुक्तागिरि आरती हमारे संग्रह के हस्तलिखित से यहां उद्धृत की जाती है। इस में १७ पद्य हैं। पद्य १ में इस क्षेत्र को पृथ्वीपर वैकुंठ की उपमा दी है तथा यहां के मूलनायक पासोवा (पार्श्वनाथ) का वर्णन किया है। पद्य, ४, ५ तथा १६, १७ में पार्श्वनाथ के जन्म, मातापिता तथा निर्वाण का उल्लेख है। पद्य १० – ११ में तीर्थंकरोंके निर्वाणक्षेत्रों – संमेदशिखर, चंपापुर, पावापुर, कैलास तथा गिरनेर – का उल्लेख है। पद्य १२ में मुक्तागिरि क्षेत्र पर एक मेंढा (बकरा) मृत्यु पाकर शुभगति को प्राप्त हुआ यह उल्लेख है तथा यहां से ३॥ कोटि मुनियों के मुक्ति काभी वर्णन है।

कवि राघव की एक अन्य रचना कारंजा के सेनगण के भट्टारक सिद्धसेन की प्रशंसा में है। इस से उनका समय सन १७७० से १८३० तक ज्ञात होता है (भट्टारक संप्रदाय पृष्ठ ३४ – ३५)। उन की कुछ हस्तलिखित कृतियों में पद्मकीर्ति, महतिसागर तथा विशालकीर्ति की प्रशंसा पाई जाती है।

मुक्तागिरि आरती

भूवैकुंठ पुरी मुगतागिरि क्षेत्र अमोलिक।
ओवाळु आरती पासोवा मुळनाईक ॥ १ ॥
रत्नजडित हेमथाळ घेउनि पानी जोडोनि हो।
ज्ञानदीप वैराग्य विवेक वाती लाउनि हो ॥ २ ॥
गाती गण गंधर्व किन्नर मुनिजन आनंद हो।
नाचती थइ थइ आलाप मंजुळ स्वर ध्वनि गर्जती हो ॥ ३ ॥
जन्मकल्यानिक कासि पिता अश्वसेन।
वामादेवी कुसी जन्मले चिंतामणि रत्न ॥ ४ ॥
एक शत वरुषे संख्या तुजला आयु प्रमान।
पद्म पाइ विराजित सुंदर पन्नग लांछन ॥ ५ ॥

तेजविराजित मूर्ति जसा कोमळ कर्दळि गाभा।
अष्ट प्रतिहार्य नी चवतिस अतिशय शोभा ॥ ६ ॥
ढाळित चामर सिरि तेजांकित इंदुप्रभा।
....॥ ७ ॥
घनद यक्ष स्वयं येउनी अपूर्व केली रचना।
निर्मुनिया जिनभुवन सुहावन हाटकमय गहना ॥ ८ ॥
रत्नजडित सिंहासन छत्र मध्य पीठ जान।
ध्वजापताका मंडित झळकति चुंबित उच गगन ॥ ९ ॥
सिखरबंद प्रासाद विशाळ पादुका जाण।
वीस तीर्थंकर मुक्तिपदासी गेले निर्वाण ॥ १० ॥
वासपूज्य चंपापुरि पावापुरी वर्धमान।
कैलासी आदिनाथ गिरनेरी नेमिजिन ॥ ११ ॥
औठ कोडि मुनि मुक्तिपदासी सिद्ध जाले जान।
उद्धरिला तो मेढा गिरिवर जाला पावन ॥ १२ ॥
सुमन सुवायु सुगंध परिमळ केशरादि पूर्ण।
स्वर्गाहुनि तव वचन प्रवृत्ति होती नित जाण ॥ १३ ॥
रमणि सहित शत शक्र मिळोनि पूजनासि येती।
मांडोनि सिंहासनी स्थापिलि जिनाधिपमूर्ति ॥ १४ ॥
जयजय शब्दे आनंद टाळि वदनि बोलती।
गर्जति अनहत वाद्य दुंदुभी ध्वनि अंबरि उठती ॥ १५ ॥
संमेदाचलि उग्र तप मांडिले दारुण।
थरारिले आसन सुरपति आला धाऊन ॥ १६ ॥
मोक्षकल्यानिक देवे केले पूजन।
वंदे राघव जिनशासनपद्र पावले निर्वान ॥ १७ ॥

---

३७. पंडित दिलसुख

इन की त्रैलोक्यस्थ – अकृत्रिमचैत्यालय जयमाला का कुछ भाग हमारे संग्रह के हस्तलिखित से यहां दिया जाता है। रचना अशुद्ध संस्कृत में है तथा इस में कुल ६२ पद्य हैं। इन में तीर्थोल्लेखसूचक पांच तथा समयादिसूचक दो पद्य आगे दिये हैं। लेखक द्वारा उल्लिखित

तीर्थ तथा वहां मुक्त हुए मुनियों के नामादि इस प्रकार हैं – कैलास–वृषभजिनेश; २ पावापुरी, ३ चंपापुरी; ४ रैवतकाचल; ५ शत्रुंजय–तीन पांडव; ६ मांगीतुंगी; ७ मुक्तागिरि; ८ सोनागिरि; ९ बडवानी; १० तारानगर – वरदत्त; ११ रेवातीर – आदिकुमार; १२ गजपंथ–बलभद्र; १३ वैभारगिरि – गौतम गणधर; १४ मथुरा – जंबूस्वामी; १५ कोटिशिला; १६ वंशस्थराम (गिरि)।

अन्तिम भाग में कवि ने अपने नाम का संस्कृत रूप चित्शर्म, दिया है तथा गुरुरूपमें पद्मनंदि के शिष्य देवेंद्रकीर्ति का उल्लेख किया है। ये देवेंद्रकीर्ति मूलसंघ – बलात्कारगण के कारंजा पीठ के भट्टारक थे। इस रचना की समाप्ति फणिपुर (नागपुर) में श्रावण शु. ७, मंगलवार, शक सं० १७५९ = सन १८३७ में वर्धासा नामक सज्जन के निवेदन पर की गई थी।

अकृत्रिम चैत्यालय जयमाला

अतः वक्ष्ये निर्वाणप्रदेशान्। यत्र यत्र मुनि सिवगत सेस्तान् ॥
कैलासे वृषभादिजिनेशा। सिवप्राप्ता वंदे हतरोषा ॥ ४७ ॥
सम्मेदाद्रौ विंसति जिनपा। मुक्तिगत अविचल सद्रूपा ॥
पावापुरि चंपापुरि वंद्या। रैवतकाचल नौमि अनिंद्या ॥ ४८ ॥
पांडु त्रिसुत सेत्रुंजय धीरा। मांगीतुंगी मुनीश्वरा प्रवरा ॥
मुक्तागिरि सोनागिरि सारा। वडवानी सन्मुनिमनहारा ॥ ४९ ॥
वरदत्तादि सुतारानगरे। आदिकुमर मुनि रेवातीरे ॥
गजपंथे बलभद्र प्रसिद्धं। वैभारे गौतमगणि सिद्धं ॥ ५० ॥
सन्मथुरायां जंबूस्वामी। सुअंतिम केवलि शिवगामी ॥
कोटिसिला वंसस्थारामं। इत्यादिक वंदे शिवधामं ॥ ५१ ॥
सद्ध्यानार्पितचित्तजातपरमाल्हादस्थितः सत्तमः
रागद्वेषपराङ्मुखोऽतिसुभगः श्रीपद्मनन्दी प्रभुः।
तत्पट्टाम्बरचन्द्रवत्परिलसद्देवेन्द्रकीर्तिप्रिये।
चित्शर्मेण कृता शुभा प्रजयसन्माला पठ्यं बुधाः ॥ ६१ ॥

नवशरमुनिचन्द्रे श्रावणे शुक्लपक्षे
फणिपुरशुभग्रामे सप्तमी भौमवारे।
वर वृषरतवर्यासाख्यवाक्याततन्द्रा
जिनगृहजयमाला निर्मिता प्रार्थसिद्धया ॥ ६२ ॥

इति श्रीत्रैलोक्यस्थाकृत्रिमचैत्यालयजयमाला संस्कृत पंडितदिलसुखविरचिता संपूर्णतामभजत् ॥

---

३८. ब्रह्म हर्ष

इन की रचना पार्श्वनाथजयमाला हमारे हस्तलिखित – संग्रह से आगे दी जाती है। इस में २५ पद्य हैं तथा इसकी भाषा हिंदीमिश्रित संस्कृत है। इस के पहले दस पद्यों में पार्श्वनाथ के जीवन का संक्षिप्त वर्णन किया है तथा बाद में निम्नलिखित क्षेत्रों का नामोल्लेख है – १ कारंजा – नवविधि पार्श्वनाथ, २ मुक्तागिरि, ३ श्रीपुर – अंतरिक्ष पार्श्वनाथ, ४ तवनिधि, ५ उज्जैन – अवंतिपार्श्वनाथ, ६ महुवा, ७ डभोई– लोडनपार्श्वनाथ, ८ अंकलेश्वर – चिन्तामणि पार्श्वनाथ, ९ वडाली – अमिझरो पार्श्वनाथ, १० खंडवा, ११ कसनेर, १२ येरुल – पर्वत-पार्श्वनाथ, १३ सेयलग्राम – कमठेश्वर पार्श्वनाथ, १४ रावणपार्श्वनाथ, १५ संखेश्वरपार्श्वनाथ, १६ मगसी, १७ गोडी (गुजरात में), १८ अवुयल ग्राम – अमिझरो पार्श्वनाथ, १९ वाणारसी, २० करकुंड।

ब्रह्म हर्ष ने अन्तिम पद्यों में नागपूर नगर में भट्टारक लक्ष्मीसेन का गुरुरूप में उल्लेख किया है। ये लक्ष्मीसेन कारंजा के सेनगण के पट्टाधीश थे जिन की ज्ञात तिथियां सन १८४३ से १८६६ तक हैं (भट्टारक संप्रदाय पृ. ३५)।

पार्श्वनाथ जयमाला

श्रीतीर्थंकर पार्श्वनाथपदकं पूजा च भव्यैः कृतं
श्रीजन्मोत्सव इंद्र मेरुशिखरे हर्षे सुरैः पूजितं।
क्षीराब्धिजलपूरितं सुकलशैः सहस्रवसुधारितं
जयजयकार करे च नृत्य करिता पार्श्वप्रभुनामकं ॥ १ ॥

जय जिन जन्म कृतं अभिषेकं । पारसनाथ महीयल मेकं ॥
इंद्र सुचंद्र नरेंद्र सुनागे । भानु खगेंद्र सुरकृत भागे ॥ २ ॥
पंचकल्याणिक सहु करे देवं । जयजयकार करे सेवं ॥ इंद्र० ॥ ३ ॥
वाणारसि पुरिवर संजातं । अश्वसेन राजा तुम तातं ॥ इंद्र० ॥ ४ ॥
वामादेवी मात विख्यातं । तस कुक्षे जन्मा प्रभु ख्यातं ॥ इंद्र० ॥ ५
काय उन्नत नव हस्त सुछाजं । कोटि दिवाकर तेज विराजं ॥ इंद्र० ॥६
तीस वरस कुवर पद छाजे । दीक्षा लेय तुम आतम काजे ॥ इंद्र० ॥७
कष्ट सह्या तुम कृत उपसर्ग । कमठासुर दैत्ये निजवर्ग ॥ इंद्र० ॥ ८
घातिया क्षय करि केवल पाम्या । जयजयकार करी सुरस्वाम्या ॥ इंद्र०
समवशरण उपदेश करीता । बत्तीस सहस्र विहार करीता ॥ इंद्र० ॥१०
नयर कारंजे नवनिधि पासं । मुगतागिरिमध्ये तव वासं ॥ इंद्र० ॥ ११
श्रीपुर अंतरिक्ष तुम्ह नामं । परतोपुरे यात्रा शुभ धामं ॥ इंद्र० ॥ १२ ॥
नवनिधि पास अवंति उजेनं । महुवा विघन हरे सहु धेनं ॥ इंद्र० ॥१३
उभोइ नयरे ढोलनपासं । अंकलेश्वर चिंतामणि पासं ॥ इंद्र० ॥ १४ ॥
नयर वडाली अमिझरो पासं । खंडवेपुरे सहुजन आसं ॥ इंद्र० ॥ १५ ॥
कसनेर ग्रामे महिमा सोहे । अभिषेक अष्टक आरति होवे ॥ इंद्र० ॥१६
येरुल ग्रामे पर्वत पासं । सेयल ग्राम कमठेश्वर पासं ॥ इंद्र० ॥ १७ ॥
रावणपार्श्व सुरकृतसेवं । संखेश्वर पूजित सहुदेवं ॥ इंद्र० ॥ १८ ॥
मगसिय पास करे सहु सेवं । गोडी पास गुजराते देवं ॥ इंद्र० ॥१९ ॥
अवुयलग्रामे अमिझरो पासं । वानारसि मध्ये महिमा बहु पासं ॥ इंद्र० ॥२०
इत्यादिक अतिसय बहुक्षेत्रं । करकुंडे मोमंय सुनेत्रं ॥ इंद्र० ॥ २१ ॥
श्रीनागपुरवर चैत्य बहु राजे । चिंतामणि गुरु पेठमा गाजे ॥ इंद्र० ॥२२
काष्टासंघ सेनगण मूलसंघ । ये प्रय मिलि पूजे भाव श्रीसंघ ॥ इंद्र० ॥
भट्टारक लक्ष्मीसेन विराजे । ब्रह्म हर्ष करे आतम काजे ॥ इंद्र० ॥२४॥
घत्ता ॥ जय जिन पासं पूरे आसं भक्तिभाव मन शुद्ध करे ।
ये पढे जयमालं पूजे त्रिकालं ते कर्म हनी फरि मुक्ति वरे ॥ २५ ॥

३९. कवीन्द्रसेवक

उन्नीसवीं सदी के मराठी जैन लेखकों में कवीन्द्रसेवक मुख्य हैं।
उन की तीर्थवन्दना ९ पद्यों की छोटीसी रचना है जिस पर्दे [illegible]—

संग्रहों में प्रकाशित हो चुकी है। इस में कैलास, शत्रुंजय, मांगीतुंगी, गिरनार, मुक्तागिरि, गजपंथ इन छहतीर्थों का उल्लेख किया है। कवीन्द्रसेवक की रचनाओं का एक संग्रह कोई ४० वर्ष पहले शोलापुर से प्रकाशित हुआ था।

तीर्थवंदना

भरत क्षेत्रांत पवित्र भूमिका। तिचे नांव घोका प्रातःकाळी ॥ १ ॥
आदिजिनेश्वर गिरि कइलास। तया पक्षी वास घडो मज ॥ २ ॥
शत्रुंजय तीर्थी चालता वाटेने। कर्ममळ धुने होत असे ॥ ३ ॥
मांगीतुंगी ठाई घालिजे साष्टांग। दळिद्र कुसंग ठाव सोडी ॥ ४
गिरनारीकडे करिता नमन। स्वर्गी शक्र मन उल्हासती ॥ ५ ॥
मुगतागिरि जागा मोक्षाचे मंदिर। पशु मेंढा थोर उद्धरिला ॥ ६ ॥
गजपंथावरी मनोपक्ष घाडी। सुध्यान आवडी जीवालागी ॥ ७ ॥
पंचकल्याणिक जाले शक्रमेळी। तेथीचीया धुळी स्पर्शो अंगा ॥८॥
कवींद्रसेवक गुरुपदी न्हाला। मनी संतोषला भक्तीसाठीं ॥ ९ ॥

---

४०. कमल कान्हासुत

इस लेखक की वलिभद्रविनंति यह रचना हमारे हस्तलिखित संग्रह से यहां दी जाती है। रचना गुजराती भाषा में है तथा इस में १९ पद्य हैं। पहले उद्धृत किये हुए अभयचंद्रकृत मांगीतुंगी गीत का यह संक्षिप्त रूपांतर प्रतीत होता है। इस की उल्लेख योग्य बातें हैं– पद्य २ में वलभद्र को राम तुंगी पति कहा है, पद्य ७ में कृष्ण के देहत्याग का स्थान भालिका भूमि कहा है; पद्य ११ में तुंगीगिरि के निकट जयतापुर का उल्लेख है; पद्य १६ – १७ में तुंगीगिरि से राम, सुग्रीव, हनुमान, नल, नील आदि ९९ कोटि मुनियों के मुक्ति का वर्णन है।

कवि कमल का परिचय अथवा समय या अन्य कुछ भी विवरण ज्ञात नहीं है। सिर्फ कान्हासुत इस विशेषण से उन के पिता का नाम कान्हा ज्ञात होता है।

वलिभद्रविनंति

श्री जिनवर रे चरणकमल हृदय धरूं ।
माता सरस्वती रे हात जोडी विनती करूं ॥ १ ॥

गुरु वांदु रे राम कीरति अति भावसुँ ।
मन हरखियो रे तुंगीपति गुण गावसुँ ॥ २ ॥

जादव वंशी रे श्रीवसुदेव वनपती ।
अति सुंदर रे रोहिणि तस घरनी सती ॥ ३ ॥

सुत जायो रे त्रिभुवनतिलक सोहामनो ।
नाम उत्तिम रे वलिभद्र नाम कोडावणो ॥ ४ ॥

लघु वंधव रे कृष्ण हवा त्रिखंडपति ।
राज्य भोगवे रे इंद्र निवासे द्वारावति ॥ ५ ॥

द्वीपायण रे कोपे द्वारापुर वालियुँ ।
हरी वलतनुँ रे संसारिक सुख टालियुँ ॥ ६ ॥

वेहु चालीया रे भालिका भूमि गया ।
तिहा कृष्णजिरे प्राण थकी अलगा थया ॥ ७ ॥

राम मृत्तिक रे लेइ छमासे रडवड्या ।
मोहनि करमे रे वलिभद्र फंदे पडया ॥ ८ ॥

सुर आविया रे प्रतिवोध्या तव अति घणा ।
समझाविया रे वहु परी मान स्वामि तम्ह तणा ॥ ९ ॥

वैराग्य रे अंत करम सहु गह गयुँ ।
लेइ दीक्षा रे महामुनि ध्यान समायुँ ॥ १० ॥

चरी करवा रे आविया जयतापुर भणि ।
वावि कुवा रे नीर भरे वहु कामिनि ॥ ११ ॥

देखि मुनिवर रे विफल हुई ते भामिनि ।
नीहाले रे व्याप्यो मोह महामुनि ॥ १२ ॥

घट मूकी रे निज वालक तेने फासीयुँ ।
रोवे वालक रे मुखकमल विमासियुँ ॥ १३ ॥

साधु सांभल्यो रे दयानिधान सहुकार ।
छोडयो रे जाऊं सुगति वनिता कुचि ॥ १४ ॥

निम लेधो रे भामिनि मुख जोवा तणुँ ।
वल्या पाछया रे करी अनशन सुहावणो ॥ १५ ॥
तुंगी गिरि रे सिद्धक्षेत्र रलियामणो ।
राम हनवंत रे नलनील सुग्रीव सुहावणो ॥ १६ ॥
एह आदि रे कोडि नव्हानउ जानिए ।
मुनि सिद्धा रे गुण तेहना वखनिए ॥ १७ ॥
स्वामी तारा रे दास तनी गनता नही ।
पन म्हारा रे म्हणे ठाकुर तू येक सही ॥ १८ ॥
थोडु मांगु रे तुझ पद मझ हियडे रहे ।
येह विनती रे कमल कान्हासुते करी ॥ १९ ॥

सारसंकलन – एक टिप्पण

अब तक जिन तीर्थों के ऐतिहासिक उल्लेखों का संग्रह किया उन का अब अकारादि क्रम से वर्णन करेंगे। इस सारसंकलन में सब से पहले पूर्वोक्त ऐतिहासिक उल्लेखों का सारांश दिया है, फिर उस क्षेत्र के वर्तमान स्थान तथा मार्ग की जानकारी दी है तथा अन्त में अन्य पुस्तकों, शिलालेखों आदि से प्राप्त जानकारी दे कर आवश्यक ऐतिहासिक बातों का संग्रह किया है। इस तुलनात्मक सामग्रीके लिए जिन मुख्य पुस्तकों का उपयोग हुआ है उन का संक्षिप्त परिचय इस प्रकार है –

(१) **विविधतीर्थकल्प** – खरतरगच्छ के आचार्य जिनप्रभसूरिने इस ग्रन्थ की रचना बादशाह मुहम्मद तुघलक के राज्यकाल में चौदहवीं सदी में की थी। मुनि जिनविजयजी द्वारा संपादित यह ग्रन्थ सिंघी जैन ग्रन्थमाला से सन १९३४ में प्रकाशित हुआ है।

(२) **प्राचीन तीर्थमाला संग्रह** – श्वेताम्बर परम्परा के मध्ययुगीन यात्रियों द्वारा रचित २५ तीर्थमालाओं का यह संग्रह विजयधर्मसूरिजी ने संपादित किया था तथा यशोविजय ग्रन्थमाला, भावनगर द्वारा सन १९२१ में प्रकाशित हुआ है। इस के पृष्ठों के उल्लेख पूर्वा

प्रदेश के क्षेत्रों के लिए प्रस्तावना के और अन्य क्षेत्रों के लिए मूल ग्रन्थ के दिये गये हैं।

(३) भारत के प्राचीन जैन तीर्थ – डॉ. जगदीशचन्द्र जैन द्वारा लिखित यह पुस्तक जैन संस्कृति संशोधन मंडल, हिन्दू विश्व-विद्यालय, वाराणसी द्वारा सन १९५२ में प्रकाशित हुई है। लेखक के विस्तृत प्रबन्ध 'लाइफ इन एन्शन्ट इन्डिया ॲज डेपिक्टेड इन दि जैन कॅनन' के एक प्रकरण का यह हिन्दी में संक्षिप्त रूपान्तर है।

(४) जैन तीर्थयात्रादर्शक – ब्रह्मचारी गेबीलालजी द्वारा लिखित इस पुस्तक की सन १९३० में श्री. मूलचन्द किसनदास कापडिया द्वारा प्रकाशित दूसरी आवृत्ति का उपयोग किया गया है।

(५) जैन तीर्थोनो इतिहास – मुनि ज्ञानविजय द्वारा लिखित इस पुस्तक का प्रकाशन जैन ज्ञानवर्धक शाला, वेरावल से सन १९२४ में हुआ था।

(६) जैन तीर्थोनो इतिहास–(न्या.)मुनि न्यायविजय द्वारा लिखित यह पुस्तक चारित्रस्मारक ग्रन्थमाला, अहमदाबाद, द्वारा प्रकाशित हुई है।

(७) जैन साहित्य और इतिहास – स्व. पं. नाथूरामजी प्रेमी के इतिहासविषयक निबन्धों का यह संग्रह है। हिन्दी ग्रन्थरत्नाकर, बम्बई द्वारा सन १९५६ में प्रकाशित दूसरे संस्करण का हम ने उपयोग किया है।

(८) जैनिझम इन साउथ इन्डिया – डॉ. देसाई द्वारा लिखित यह ग्रन्थ जीवराज जैन ग्रन्थमाला, शोलापुर द्वारा सन १९५७ में प्रकाशित हुआ है।

(९) जैन शिलालेख संग्रह भा. १, २, ३ – माणिकचन्द्र दि. जैन ग्रन्थमाला, बम्बई द्वारा प्रकाशित। प्रथम भाग में श्रवण बेलगोल के कोई ५०० लेख हैं। दूसरे तथा तीसरे भाग के लेख डॉ. गेरिनो की सन १९०८ की सूची के अनुसार श्री. विजयमूर्ति शास्त्री ने संकलित किये हैं, तीसरे भाग में डॉ. गुलाबचन्द्र चौधरी की विस्तृत प्रस्तावना है।

सारसंकलन

(पूर्वोल्लिखित तीर्थों का अकारादि क्रम से वर्णन तथा अन्य साधनों से प्राप्त तथ्यों का संकलन)

अग्गलदेव – धाराशिव देखिए।

अग्रमन्दर – चम्पापुर के समीप राजतमौलिका नदी के पास बारहवें तीर्थंकर श्रीवासुपूज्य का मुक्तिस्थान (गुणभद्र)। वर्तमान स्थान – विहार में भागलपुर के दक्षिण में ३० मीलपर मन्दारगिरि नाम से यह स्थान प्रसिद्ध है। भागलपुर से यहां तक रेल लाइन भी है और मोटर – रास्ता भी। पर्वत पर दो मन्दिर हैं। पर्वत की तलहटी में ग्राम में धर्मशाला और एक मन्दिर है। विशेष – अन्य लेखकों ने चम्पापुर को ही वासुपुज्य का निर्वाणस्थान माना है। इस समय पर्वत पर दि. मन्दिर है। यहां किसी समय श्वे. यात्री भी आते थे। देखिए– जैन तीर्थोनो इतिहास (न्या.) पृ. ४९६, भारत के प्राचीन जैन तीर्थ पृ. २५, प्राचीन तीर्थमाला संग्रह भा. १ पृ. २६, जैन तीर्थयात्रादर्शक पृ. १२९।

अचणपुर – यहां पूज्यपाद द्वारा वन्दित जिनबिम्ब था (जयसागर)। अन्य विवरण ज्ञात नहीं है।

अझारा – इस का उल्लेख सुमतिसागर ने किया है। यह तीर्थ सौराष्ट्र के दक्षिणी छोर पर पश्चिम रेलवे के उना स्टेशन से दो मील दूर है। यहां पार्श्वनाथ का मंदिर है तथा कई शिलालेख भी हैं जिन में एक सं. १०४२ का है (जैन तीर्थोनो इतिहास पृ. ५१) यह श्वेताम्बरों के अधिकार में है।

अष्टापद – कैलास देखिए।

अणिधो – वागड प्रदेश में, पार्श्वनाथ का मन्दिर है (जयसागर)। श्वे. साधु रत्नकुशल ने भी इस का उल्लेख किया है (प्राचीन तीर्थमाला-संग्रह भा. १ पृ. १७०)।

अबू – आबू देखिए।

अमरेश्वर – नर्मदा नदी के मध्य में पर्वत पर यह तीर्थ था जहां एक देव ने अपने पूर्वजन्म के गुरु का सम्मान किया था (हरिषेण)। वर्तमान में यह स्थान जैन तीर्थ के रूप में प्रसिद्ध नही है। इस का जो वर्णन आचार्य ने दिया है वह ओंकारेश्वर से मिलताजुलता है, ओंकारेश्वर पश्चिम रेलवे के खंडवा-अजमेर मार्ग पर ओंकारेश्वर रोड स्टेशन से सात मील पूर्व में है, यहां शिव का प्रसिद्ध मंदिर है।

अमीझरो – वडाली देखिए।

अयोध्या – नामान्तर साकेत, विनीता, कोशला, अवध्या। यह प्राचीन कोशल प्रदेश की राजधानी सरयू नदी के किनारे है। यहां ऋषभदेव, अजितनाथ, अभिनन्दन, सुमतिनाथ एवं अनन्तनाथ इन पांच तीर्थंकरों का जन्म हुआ था (यतिवृषभ, रविषेण, जटासिंहनन्दि, जिनसेन, गुणभद्र)। चक्रवर्ती भरत और सगर की यह राजधानी थी (पद्मपुराण सर्ग २०, हरिवंशपुराण सर्ग ६०, उत्तरपुराण सर्ग ४८)। गुणभद्र के कथनानुसार मघवा, सनत्कुमार और सुभौम चक्रवर्ती भी यहीं हुए थे *(उत्तरपुराण सर्ग ६१ व ६५)। दशरथ और रामचन्द्र यहीं राज्य करते थे। यहां बडे बडे मंदिर थे (ज्ञानसागर)। महावीर के नवम गणधर अचलभ्राता का जन्म यहीं हुआ था (जिनप्रभ – विविध-तीर्थकल्प पृ. २४), यहां के मन्दिर में चक्रेश्वरी और गोमुख यक्ष की मूर्तियां भी थीं (वहीं)। पार्श्वनाथवाटिका, सीताकुण्ड और सहस्रधारा यहां के दर्शनीय स्थान थे (वहीं)। राजा कुमारपाल के समय यहां से देवेन्द्रसूरि ने तीन मूर्तियां प्राप्त कर सेरीसय नगर में स्थापित की थीं (वहीं)। यह नगर इस समय भी समृद्ध है। उत्तरप्रदेश में लखनऊ – वाराणसी रेल मार्ग पर फैजाबाद के पास यह स्टेशन है। यहां धर्मशाला और सात मंदिर हैं। रामचन्द्र की राजधानी होने से यह तीर्थ हिन्दुओं में भी प्रसिद्ध है और उनके सैकडों मंदिर यहां हैं। अधिक विवरण

---

* पद्मपुराण सर्ग २० के अनुसार ये चक्रवर्ती क्रमशः श्रावस्ती, हस्तिनापुर और ईशावती में हुए थे।

के लिए द्रष्टव्य – प्राचीनतीर्थमाला संग्रह पृ. ३४, जैन तीर्थोनो इतिहास (न्या.) पृ. ४९९, भारत के प्राचीन जैन तीर्थ पृ. ३८, जैन तीर्थ यात्रा दर्शक पृ. १०७ ।

अर्गलदेव—धाराशिव देखिए ।

अर्बुदगिरि—आबू देखिए ।

अलवर—यहां का मन्दिर रावणपार्श्वनाथ के नाम से प्रसिद्ध था । भ. पद्मनन्दि ने इस का एक स्तोत्र लिखा था । अन्य उल्लेखकर्ता हैं – सुमतिसागर, जयसागर तथा हर्ष । इस समय यह मन्दिर श्वेताम्बर सम्प्रदाय के अधिकार में है । श्वेताम्बर परम्परा में इस के उल्लेखों पर श्री. अगरचंदजी नाहटा ने प्रकाश डाला है (अनेकान्त वर्ष ९ पृ. २२२) । अलवर शहर राजस्थान में है तथा जयपुर – दिल्ली रेलमार्ग पर स्टेशन है । रावणपार्श्वनाथ मंदिर शहर से ४ मील पर एक पहाडी की तलहटी में है । देखिए–जैन तीर्थोनो इतिहास पृ. ३९७ (न्या.)।

अवघापुर—यहां राय गुणधर ने सहस्रकूट जिनमन्दिर वनवाया था और वडे ठाठ से उस की प्रतिष्ठा की थी (ज्ञानसागर) । उक्त स्थान महाराष्ट्र के परभणी जिले में है तथा इस समय औंढा कहलाता है । उक्त सहस्रकूट मन्दिर जीर्ण दशा में अभी विद्यमान है । इसे पंच-कुमार मंदिर भी कहते हैं क्यों कि इस में वासुपूज्य, मल्लि, नेमि, पार्श्व तथा महावीर इन पांच कुमार तीर्थंकरों की सुन्दर खड्गासन मूर्तियां हैं । इस ग्राम में नागनाथ नामक प्रसिद्ध शिवमन्दिर भी है ।

अवन्ति पार्श्वनाथ—उज्जयिनी देखिए ।

अवन्ति शान्तिनाथ—गुणकीर्ति और सुमतिसागर ने इस क्षेत्र का उल्लेख किया है । वर्तमान मालवा का प्राचीन नाम अवन्ति था । अतः उदयकीर्ति द्वारा उल्लिखित मालव – शांतिनाथ भी यही प्रतीत होते हैं । उदयकीर्ति के अनुसार यहां की मूर्ति विश्वसेन राजाने निकाली थी । निकाली थी (कड्ढिउ) इस कथन का तात्पर्य मदनकीर्ति के वर्णन से स्पष्ट होता है – उनके कथनानुसार वेत्रवती (वर्तमान बेतवा) के हृदसे यह मूर्ति निकाली गई थी । किन्तु इन चारों लेखकोंने यह

मूर्ति किस नगरमें थी इस का कोई संकेत नही दिया है। विश्वसेन राजा का भी इतिहास में परिचय नही मिलता।*

अवरोधनगर—समुद्र से आश्रम में एक दिव्य शिला आई, उस पर ब्राह्मण ने सब देवों को रखा किन्तु केवल मुनिसुव्रतजिन की मूर्ति ही वहां रह सकी यह अद्भुत घटना अवरोधनगर में हुई (मदन-कीर्ति)। इस में उल्लिखित अवरोधनगर का अन्य विवरण अज्ञात है।*

---

*पं. दरबारीलालजीने इस श्लोक का अर्थ करते समय कहा है (शासनचतुस्त्रिंशिका पृ. ७ तथा ५१) जिस तरह तालाव से वेत्रवती निकली उस तरह समुद्र से शान्तिजिनमूर्ति निकली। किन्तु यह ठीक प्रतीत नही होता क्यों कि इस अर्थ में वेत्रवती का उल्लेख निरर्थक हो जाता है; वेत्रवती का उद्गम तालाव से हुआ यह कथन भी निरर्थक है। अतः हम ने यहां समुद्र के समान (गहरे) वेत्रवती के ह्रद से मूर्ति निकली ऐसा अर्थ किया है। उदयकीर्ति के 'मालवईं' शब्द का पं. दरबारीलालजी ने 'मालवर्ती' अनुवाद किया है यह भी ठीक नही। यह शब्द संस्कृत 'मालवे' के समान अपभ्रंश का सप्तम्यन्त शब्द है जिस का अर्थ 'मालव में' होता है।

*पं. दरबारीलालजी ने इस क्षेत्र को प्रतिष्ठान से अभिन्न मानते हुए इस श्लोक के 'सरितां नाथास्तु' शब्द का अर्थ 'वृहन्नद गोदावरी से' ऐसा किया है (शासनचतुस्त्रिंशिका पृ. २० तथा ५३), साथ ही आशारम्य से भी इसे अभिन्न बतलाया है। हमारी समझ में यह ठीक नही। उक्त श्लोक में 'सरितां नाथा' का गोदावरी यह तात्पर्य करना, कठिन है। इस के स्थान में 'सरितां नाथात् याने' समुद्र से यह अर्थ ठीक रहेगा। प्रतिष्ठान के विषय में जिनप्रभसूरि ने तीन कल्प लिखे हैं (विविधतीर्थकल्प पृ. ४७, ५९ व ६१) किन्तु उक्त दिव्य आश्रम की शिला का उस में कोई उल्लेख नही है। अतः सिर्फ इसलिए की अवरोधनगर, आशारम्य तथा प्रतिष्ठान तीनों में मुनिसुव्रत के मन्दिर थे उन्हें अभिन्न मानना ठीक नही। जिनप्रभसूरि ने भडोच, प्रतिष्ठान, अयोध्या, विन्ध्य एवं माणिक्यदंडक इन पांच स्थानों में मुनिसुव्रतमंदिरोंका उल्लेख किया है (विविधतीर्थकल्प पृ. ८६)। आगे आशारम्य का विवरण भी देखिए।

अष्टापद—कैलास देखिए।

अस्सारम्म—आशारम्य देखिए।

अहिच्छत्र—अहिच्छत्र के पार्श्वनाथ को निर्वाणकाण्ड (अतिशय-क्षेत्रकाण्ड) में वन्दन किया है। इस संग्रह के अन्य किसी लेखक एक इस का उल्लेख नहीं किया। जिनप्रभसूरि ने इस क्षेत्र के विषय में कल्प लिखा है (विविधतीर्थ-कल्प पृ. १४)। इस के अनुसार इसने नगर का नाम शंखावती था, पार्श्वनाथ पर कमठासुर का उपसर्ग दूर करने के लिए धरणेन्द्र ने नागफणा फैलाकर छत्र के रूप में धारण की अतः तब से इसे अहिच्छत्रा नगर कहने लगे। यहां के पार्श्वनाथमंदिर तथा नेमिनाथमूर्तिसहित अम्बादेवी की मूर्ति का एवं अनेक लौकिक तीर्थों का भी उन्हों ने वर्णन किया है। महाभारत के अनुसार यह नगर उत्तर पंचाल प्रदेश की राजधानी था तथा द्रोणाचार्य ने द्रुपद राजा को पराजित कर यहां अपना अधिकार स्थापित किया था। वर्तमान स्थान — उत्तर प्रदेश के बरेली जिले में रामनगर के समीप अहिच्छत्र के भग्नावशेष हैं। अधिक विवरण के लिए द्रष्टव्य — प्राचीन तीर्थमाला संग्रह पृ. ३९, जैन तीर्थोंनो इतिहास (न्या.) पृ. ५४९, भारत के प्राचीन जैन तीर्थ पृ. ४२।

अंकलेश्वर—गुजरात के इस नगर में चिन्तामणि पार्श्वनाथ का मन्दिर है (ज्ञानसागर, हर्ष)। दूसरी सदी में पुष्पदन्त और भूतबलि आचार्यों ने गिरनार में षट्खण्डागम का अध्ययन करने के बाद इस नगर में एक वर्षावास बिताया था (षट्खण्डागम टीका धवला भा. १ पृ. ७१)। सेनगण के भट्टारक श्रुतवीर इस नगर से भडौच गये थे जहां उन्हों ने अठारह वर्ष की आयु में ही सुलतान मुहम्मदशाह के दरबार में समस्यापूर्ति कर के सम्मान पाया था (भट्टारक सम्प्रदाय पृ. ३०)। इन का समय पन्द्रहवीं सदी है। इस नगर में सं. १६५७ = सन १६०० में मूलसंघ — बलात्कारगण के भट्टारक वादिचन्द्र ने संस्कृत में यशोधर चरित की रचना की थी (जैन साहित्य और इतिहास पृ. ३८८)। वर्तमान में भी अंकलेश्वर समृद्ध नगर है तथा पश्चिम रेलवे

के सूरत – वडौदा मार्ग पर स्टेशन है। हाल कुछ वर्षों में पेट्रोल की खोज से इस नगर का महत्त्व बहुत बढ गया है। चिन्तामणिपार्श्वनाथ के मन्दिर के अलावा तीन और मन्दिर भी यहां हैं और एक धर्मशाला भी है। देखिए – जैन तीर्थयात्रादर्शक पृ. ५७।

अंतरिक्षपार्श्वनाथ—श्रीपुर देखिए।

अंबापुर—यहां के मल्लिनाथ मन्दिर का उल्लेख जयसागर ने किया है। अन्यविवरण ज्ञात नहीं।*

आगलदेव—धाराशिव देखिए।

आबू—रूपान्तर अबू, अर्बुदगिरि। यहां के मन्दिरों का उल्लेख ज्ञानसागर और जयसागर ने किया है। यहां गुजरात के महामन्त्री विमल ने सं. १०८८ = सन १०३१ में आदिनाथमन्दिर बनवाया था तथा महामन्त्री तेजपाल ने सं. १२८८ = सन १२३१ में नेमिनाथमन्दिर बनवाया था। ये दोनों मन्दिर जैन शिल्पकला के सर्वोत्तम उदाहरणों के रूप में अब भी विद्यमान हैं। जिनप्रभसूरि ने इस के विषय में एक कल्प लिखा है (विविधतीर्थकल्प पृ. १५)। यहां के दिगम्बर जैन मन्दिर की स्थापना सं. १४९४ = सन १४३८ में भट्टारक सकलकीर्ति द्वारा की गई थी जिस की प्रशस्ति संघवी गोव्यंद ने लिखवाई थी (जैनमित्र ३-२-१९२१)। आबू के विषय में मुनि जयन्तविजय ने दो विस्तृत पुस्तकें लिखी हैं। यह स्थान हिन्दुओं का भी प्रसिद्ध तीर्थ है तथा राजस्थान के अग्निकुल के राजपूत वंशोंका उत्पत्तिस्थान माना जाता है। यह पर्वतीय विश्रामस्थान के रूप में भी प्रसिद्ध है तथा पश्चिम रेलवे के अहमदाबाद – अजमेर मार्ग के आबूरोड स्टेशन से २५ मील दूर है। द्रष्टव्य-जैनतीर्थयात्रादर्शक पृ. ३५, जैनतीर्थोनो इतिहास (न्या.) पृ. २७६।

---

*खंभात नगर का एक नाम अंबावती था। किंतु जयसागर ने अंबापुर का उल्लेख तवनिधि, सेलगाम, पैठन के साथ किया है अतः यह दक्षिण प्रदेश का नगर प्रतीत होता है। ज्ञानसागर द्वारा उल्लिखित आम्रपुरी संभवतः यही है। आम्रपुरी का विवरण आगे दिया है।

आम्रपुरी—दक्षिण देश में आम्रपुरी में चिन्तामणि और चूडामणि जिनराज के मन्दिर हैं (ज्ञानसागर)। यह आम्रपुरी महाराष्ट्र के बीड जिले में स्थित आंबा नामक ग्राम का ही संस्कृत रूपान्तर प्रतीत होता है। जयसागर द्वारा उल्लिखित अंबापुर यही प्रतीत होता है। यह ग्राम हिंदुओं का भी अच्छा तीर्थ है। यहां जोगाई देवी का मन्दिर है। मराठी के प्रसिद्ध ग्रन्थकार मुकुन्दराज ने यहीं विवेकसिन्धु नामक ग्रन्थ शक १११० = सन ११८८ में लिखा था।

आवापुर—यहां के चिन्तामणि जिनमन्दिर का जयसागर ने उल्लेख किया है। अधिक विवरण प्राप्त नहीं।

आशारम्य—इस नगर के मुनिसुव्रतदेव को निर्वाणकाण्ड (अतिशयक्षेत्रकाण्ड) में वन्दन किया है। उदयकीर्ति तथा गुणकीर्ति ने भी इस का उल्लेख किया है। किन्तु इन तीनों उल्लेखों से इस नगर के स्थान के बारे में कुछ संकेत नही मिलता।*

आंतरी—वागड प्रदेश के इस नगर में दो बडे मन्दिर हैं (ज्ञानसागर)। यहां के नौतनभद्र प्रासाद (मन्दिर) का उद्धार हूमड जाति के सं. भोजा ने कराया था ऐसा सं. १६८६ = सन १६३० के शत्रुंजय के शिलालेख से ज्ञात होता है (जैनमित्र २७-१-१९२०, भट्टारक संप्रदाय पृ. १५०)। काष्ठासंघ—लाडवागड गच्छ के भट्टारक नरेन्द्रकीर्ति ने यहां राजा रणमल्ल का सहयोग प्राप्त कर शान्तिनाथ-मन्दिर का उद्धार किया था। रणमल्ल ईडर के राजा थे तथा उन का राज्यकाल सन १३४५ से १४०३ तक है (भट्टारक संप्रदाय पृ. २५९)।

---

*पं. दरबारीलालजी ने इसे अवरोधनगर तथा प्रतिष्ठान से अभिन्न बतलाया है इस का कुछ विचार ऊपर अवरोधनगर के विवरण में किया है। उदयकीर्ति के 'आसरम्मि' शब्द का अनुवाद उन्हों ने 'आश्रम में' ऐसा किया है। यह ठीक नहीं प्रतीत होता। 'आश्रम में' के लिए अपभ्रंश शब्द अस्समे, अस्समि या अस्समम्मि होता है। 'आसरम्मि' यह 'आसरम्म' की सप्तमी का रूप है अतः उस का अनुवाद 'आशारम्य में' करना चाहिए।

उखलद—यहां नेमिनाथ का मन्दिर है (विश्वभूषण), यह पूर्णा नदी के किनारे है, यहां के नेमिनाथमूर्ति के अंगूठे में पारस पत्थर लगा हुआ था (ज्ञानसागर) । यह तीर्थ अब भी प्रसिद्ध है । महाराष्ट्र के परभणी जिले में मनमाड – पूर्णा रेलमार्ग पर मीरखेत स्टेशन है उस के उत्तर में चार मील पर उखलद है । देखिए – जैन तीर्थयात्रा-दर्शक पृ. १९९ ।

उज्जन्त, उज्जयन्त—ऊर्जयन्त देखिए ।

उज्जयिनी—रूपान्तर ऊजेनी, उज्जैन । यह मालव प्रदेश की राजधानी है जिसे प्राचीन समय में अवन्ति कहते थे । यहां अवन्ति-पार्श्वनाथ का मन्दिर है (सुमतिसागर, जयसागर, हर्ष) । यह वही स्थान है जहां सिद्धसेनाचार्य ने शिवलिंग से पार्श्वनाथ की प्रतिमा प्रकट कर के विक्रमादित्य राजा को प्रभावित किया था (ज्ञानसागर) । पुरातन कथाओं के अनुसार इसी नगर में अवन्तिसुकुमाल मुनि हुए थे । घोर उपसर्ग सहने के बाद जहां उन का देहावसान हुआ वहां उन की पत्नियों ने शोक से रुदन किया वह स्थान कलकलेश्वर नाम से प्रसिद्ध हुआ (हरिषेण) । काकंदी के राजा अभयघोष मुनि होकर तपस्या करते हुए इसी नगर के समीप मुक्त हुए (हरिषेण) । जिनप्रभसूरि ने सिद्धसेनाचार्य और विक्रमादित्य की कथा बतलाते हुए शिवलिंग से निकली हुई प्रतिमा को कुडुंगेश्वर नाभेयदेव यह नाम दिया है (विविध-तीर्थकल्प पृ. ८८) । यह नगर इस समय भी समृद्ध है । यह मध्यप्रदेश के उज्जैन जिले की राजधानी है, भोपाल – रतलाम रेलमार्ग पर प्रमुख स्टेशन है तथा विक्रम विश्वविद्यालय का मुख्य स्थान है । यह हिन्दुओं का भी प्रसिद्ध तीर्थ है । विवरण के लिए देखिए – जैन तीर्थोनो इतिहास (न्या.) पृ. ३९२, भारत के प्राचीन जैन तीर्थ पृ. ५६, जैन तीर्थयात्रा दर्शक पृ. ११ ।

ऊन—यह नमिआड प्रदेश में, सुन्दर मन्दिरों से सुशोभित नगर है (ज्ञानसागर) । इस समय यह छोटा गांव है तथा मध्यप्रदेश के पश्चिमी निमाड जिले की राजधानी खरगोन से दस मील दूर है । यहां

छह भग्न मन्दिर हैं जो ११ वीं १२ वीं–सदी के हैं। एक मन्दिर में एक खण्डित शिलालेख है। उस में परमार राजा उदयादित्य (११ वीं सदी) का उल्लेख है। यहां भ. महावीर की दो मूर्तियां मिलीं जो सं. १२१८ तथा सं. १२५२ में स्थापित की गईं थीं। यहां के मन्दिर बहुत जीर्णशीर्ण हुए थे। सन १९३५ में इन में से एक मन्दिर का जीर्णोद्धार किया गया। तीन साल बाद वहां एक नया मन्दिर और मानस्तम्भ बनवाया गया। सन १९४४ में मुनि हेमसागर का स्वर्गवास होने से उन की समाधि बनाई गई। सन १९४९ में इस समाधि के पास चार छोटे छोटे मन्दिर बनाये गये। इस जीर्णोद्धारकार्य के दौरान इस क्षेत्र को पावागिरि (सुवर्णभद्र आदि चार मुनियों का मुक्तिस्थान) यह नाम दिया गया जो कि इतिहास की दृष्टि से उचित नही है (आगे पावागिरि का विवरण देखिए)।

ऊर्जयन्त—रूपान्तर उज्जन्त, उज्जयन्त रैवतक, रेवन्त, गिरिनगर, गिरिनार, गिरनार, गिरनेर। इस पर्वत पर बाईसवे तीर्थंकर नेमिनाथ मुक्त हुए (समन्तभद्र, यतिवृषभ, पूज्यपाद, जटासिंहनन्दि, रविषेण, जिनसेन आदि)। इस पर्वत के तीन शिखरों से प्रद्युम्नकुमार (श्रीकृष्ण के पुत्र), अनिरुद्धकुमार (प्रद्युम्न के पुत्र) तथा शम्बुकुमार (श्रीकृष्ण के पुत्र) मुक्त हुए (गुणभद्र)।* इन के अतिरिक्त ७२ करोड ७ सौ मुनि भी यहां मुक्त हुए (निर्वाणकाण्ड, उदयकीर्ति, गुणकीर्ति, मेघराज आदि)। इस के शिखर पर इन्द्र द्वारा स्थापित लक्षण (पदचिह्न) हैं, (समन्तभद्र)। तथा इन्द्र द्वारा स्थापित निराभरण मूर्ति भी है (मदनकीर्ति)।† यहां सिंहवाहिनी अंबा देवी जैन उपासकोंके विघ्न दूर करती है

---

* श्वेताम्बर परम्परा में इन तीनों का निर्वाण शत्रुंजय से माना गया है (जिनप्रभसूरि-विविधतीर्थकल्प पृ. २)।

† यह मूर्ति वही प्रतीत होती है जो इस समय यहां के पांचवें शिखरपर नेमिनाथ के चरणचिन्हों के नीचे के पाषाण में उत्कीर्ण है। अतः पं. दरबारीलालजी ने यह मूर्ति अब नही है ऐसा जो कथन किया है (शासनचतुस्त्रिंशिका पृ. ३६) वह ठीक नही प्रतीत होता।

(जिनसेन)। श्रीकृष्ण के छोटे भाई गजकुमार यहां मुक्त हुए; यहां अंबादेवी के टोंक सहित सात टोंक हैं, भीमकुंड और ज्ञानकुंड हैं, सहसावन और लक्खावन हैं, राणी राजुल की गुहा है (ज्ञानसागर)। कारंजा के भ. जिनसेन और भ. देवेन्द्रकीर्ति के उल्लेख यात्रासंबंधी हैं। अन्य उल्लेख-कर्ता हैं – जयसागर, चिमणापंडित, सोमसेन, सुमतिसागर, कवीन्द्रसेवक तथा दिलसुख।

ऊर्जयन्त अथवा गिरनार अब भी सुप्रसिद्ध क्षेत्र है तथा सौराष्ट्र के मध्य में स्थित जूनागढ नगर से तीन मील दूर है। बाबू कामताप्रसादजी ने इस के बारे में गिरिनार – गौरव नामक विस्तृत पुस्तक लिखी है। इस की तलहटी में जैनों और हिन्दुओं की बडी बडी धर्मशालाएं हैं। २५०० सीढियां चढने पर पहले शिखर का दर्शन होता है, यहां तीन दिगम्बर मन्दिर और कई श्वेताम्बर मन्दिर हैं जिन में एक राजा कुमार-पाल के मंत्री सज्जन ने बारहवीं सदी में और दूसरा महामंत्री तेजपाल ने तेरहवीं सदी में बनवाया हुआ है। इस शिखर पर राजीमती की गुहा भी दर्शनीय है, इस में पाषाण में राजीमती की मूर्ति उत्कीर्ण है। यहां कुछ कुंड भी हैं जो अब हिन्दुओं के अधिकार में हैं। यहां से कुछ ऊंचाई पर दूसरा शिखर है, यहां अंबादेवी का पुरातन मंदिर है, यह अब हिन्दुओं के अधिकार में है। इस के समीप अनिरुद्ध कुमार के चरणचिन्ह हैं। यहां से कुछ ऊंचाई पर तीसरा शिखर है, इस पर शम्बुकुमार के चरणचिन्ह हैं। यहां हिन्दुओं का गोरक्षनाथ का मंन्दिर भी है। यहां से आगे चौथा शिखर है जहां प्रद्युम्नकुमार के चरणचिन्ह और एक जिनमूर्ति उत्कीर्ण है। इस शिखर का मार्ग सीढियां न होने से दुर्गम है। तीसरे शिखर से सीढियां पांचवे शिखर को जाती हैं। पांचवे शिखर पर श्रीनेमिनाथ की मूर्ति और चरणचिन्ह हैं। हिन्दू यात्री इन्ही चरणों को दत्तात्रेय का मान कर पूजते हैं – यहां दोनों का अधिकार है। पर्वत के उत्तर की ओर तलहटी में सहसावन (सहस्रा-म्रवन) है। इस के लिए पहले शिखर से सीढियां गई हैं। यहां नेमिनाथ के दीक्षाकल्याणक और केवलज्ञानकल्याणक के चरणचिन्ह हैं।

गिरनार के बहुत से उल्लेख जैन साहित्य में मिलते हैं। इनका विस्तृत परिचय बाबू कामताप्रसादजी के उपर्युक्त पुस्तक में देखना चाहिए। इन में कुछ प्रमुख इस प्रकार हैं। दूसरी सदी में इस पर्वत की चन्द्रगुहा में श्रीधरसेनाचार्य रहते थे। आपने परम्परागत श्रुतज्ञानकी रक्षा के लिए पुष्पदन्त और भूतबलि नामक शिष्यों को महाकर्मप्रकृतिप्राभृत अथवा षट्खण्डागम का उपदेश दिया था (इन्द्रनन्दिकृत श्रुतावतार श्लो. १०३ और आगे)। यहां के कई शिलालेख प्राप्त हैं जिनमें सबसे प्राचीन दूसरी सदी का है। इस क्षेत्र के अधिकार के लिए दिगम्बर और श्वेताम्बरों में अक्सर संघर्ष होता रहा है। इस का विवरण बाबू कामताप्रसादजी के उपर्युक्त पुस्तक से तथा पं. नाथूरामजी प्रेमी के जैन साहित्य और इतिहास (पृ. ४६८-७२)से प्राप्त हो सकता है। जूनागढ से पर्वत की ओर आते समय मार्ग में एक भव्य शिला पर सम्राट अशोक के लेख हैं। इसी शिला पर महाक्षत्रप रुद्रदामा का सन १५० का और सम्राट स्कन्दगुप्त का सन ४५८ का लेख भी है। इन लेखों में यहां सुदर्शननामक विशाल सरोवर के जीर्णोद्धार का वर्णन है। यह सरोवर सम्राट चन्द्रगुप्त मौर्य ने बनवाया था। यह अब नष्ट हो चुका है। जिनप्रभसूरि ने इस तीर्थ के विषय में चार कल्प लिखे हैं (विविधतीर्थकल्प पृ. ६-१०)।

ऋषभदेव—धुलेव देखिए।

ऋषिगिरि—राजगृह के समीप स्थित पांच पहाडियों में से यह पूर्व की ओर चौकोर आकार की पहाडी है (यतिवृषभ, जिनसेन)। पूज्यपाद ने इस का सिद्धक्षेत्रों में अन्तर्भाव किया है और इसे ऋष्यद्रि कहा है। पं. प्रेमीजी का अनुमान है कि निर्वाणकाण्ड में उल्लिखित सवणगिरि और रिस्सिंदगिरि भी इसी के नामान्तर होने चाहिएं (जैन साहित्य और इतिहास पृ. ४३६ और ४४९) अधिक विवरण के लिए राजगृह, सवणगिरि और रिस्सिंदगिरि का वर्णन भी देखिए।

एनूर—वेणूर देखिए।

एरंडवेल—यहां नेमिनाथ का मन्दिर है (ज्ञानसागर, जयसागर)। सं. १६४१ = सन १५८४ में यहां के धर्मनाथ चैत्यालय में मुनि देवेन्द्रकीर्ति ने अंबिका रास की एक प्रति लिखी थी (भट्टारक सम्प्रदाय पृ. ५१)। महाराष्ट्र के जलगांव (पूर्व खानदेश) जिले में स्थित एरंडोल ही पुरातन एरंडवेल है। यह धूलिया-जलगांव मुख्य मार्ग पर है और एरंडोल तालुके की राजधानी है।

एलूर—रूपान्तर एरुल, येरुल, वेरूळ, एलोरा। यह नगर दक्षिण देश में एयल राजा द्वारा स्थापित है, इसी ने पर्वत में बहुतसी गुहाएं और जिनमूर्तियां उत्कीर्ण कराईं, जिस से इन्द्रराज सन्तुष्ट हुए,* यहां कार्तिक पूर्णिमा को यात्रा होती है (ज्ञानसागर)। यहां की शिल्परचना आश्चर्यजनक है (सुमतिसागर)। यहां बहुत मूर्तियां हैं (विश्वभूषण)। यहां के मुख्य देव पर्वतपार्श्वनाथ कहलाते हैं (हर्ष)। एलोरा के गुहामन्दिर इस समय भी प्रसिद्ध हैं तथा महाराष्ट्र प्रदेश के औरंगाबाद नगर से १८ मील दूर स्थित हैं। यहां बौद्ध, हिन्दू और जैन तीनों के विशाल गुहामन्दिर हैं। थोडी दूर वेरूल ग्राम में घृष्णेश्वर नामक प्रसिद्ध शिवमन्दिर भी है। एलोरा की जैन गुहाओं में कुछ शिलालेख भी हैं। इन में से एक शक ११५६ = सन १२३५ का है जिस में चक्रेश्वर नामक सज्जन द्वारा पार्श्वनाथमंन्दिर के निर्माण का वर्णन है (जैन शिलालेख संग्रह भा. ३ पृ. ३३५)।

---

* इस वर्णन से प्रतीत होता है कि इंद्रराज सम्राट थे और एयलराज उन के सामन्त। राष्ट्रकूट सम्राट इन्द्रराज (तृतीय) का राज्यकाल सन ९१४–९२२ तक था और इन्द्रराज (चतुर्थ) इसी वंश के अन्तिम राजा (सन ९७३–७४) थे (दि एज ऑफ इम्पिरियल कनौज पृ. १२–१३, १६) इन में इन्द्रराज (तृतीय) के अधीन एल राजा होना अधिक संभव है क्यों कि इन्द्रराज (चतुर्थ) का राज्यकाल बहुत थोडा और संकटपूर्ण रहा है अतः उस समय एलोरा के गुहामंदिरों जैसा भव्य कार्य होना कठिन है। आगे श्रीपुर के वर्णन में भी एल राजा की चर्चा की गई है।

कचनेर—रूपान्तर कसनेर। यहां के पार्श्वनाथ मन्दिरका उल्लेख हर्ष ने किया है तथा चिमणापंडितने यहां के पार्श्वनाथ की आरती लिखी है। यह स्थान महाराष्ट्रमें औरंगाबाद से वीस मील पर स्थित है।

कणझरो—यह ग्राम वागड प्रदेश में है, यहां बावन मूर्तियों से सुशोभित मन्दिर है (ज्ञानसागर)।

कनकगिरि—कनकाद्रि, कनकाचल – सोनागिरि देखिए।

कमठपार्श्वनाथ—सेलग्राम देखिए।

कम्पिला—काम्पिल्य देखिए।

कलकलेश्वर—इस का उल्लेख उज्जयिनी के वर्णन में आ चुका है।

कलिकुंड—इस का उल्लेख सुमतिसागर ने किया है। हर्ष द्वारा उल्लिखित करकुंड भी संभवतः यही है। यहां के पार्श्वनाथ के मन्दिर का उल्लेख जिनप्रभसूरि ने किया है (विविधतीर्थकल्प पृ. २६) इन के कथनानुसार यह तीर्थ अंग प्रदेश में (वर्तमान विहार प्रदेश के पूर्व भाग में) कलि पर्वत के समीप कुण्ड नामक सरोवर के निकट राजा करकंडु ने स्थापित किया था। वर्तमान में यह तीर्थ विच्छिन्न हुआ है। कलिकुंड पार्श्वनाथ की एक पूजा श्रुतसागर ने लिखी है, किन्तु उस से यह स्थान कहां है इस का पता नही चलता।

कसनेर—कचनेर देखिए।

काकन्दी—इस नगर में नौवे तीर्थंकर पुष्पदन्त का जन्म हुआ था (यतिवृषभ, रविषेण, जटासिंहनन्दि, जिनसेन, गुणभद्र)। इस के वर्तमान स्थान के वारे में मतभेद हैं। दिगम्बर संप्रदाय में उत्तर प्रदेश में स्थित ग्राम खुकुन्द को प्राचीन काकन्दी मानते हैं। यहां तीन मंदिर हैं। गोरखपुर-वाराणसी रेलमार्ग के नौनखार स्टेशन से यह तीन मैल दूर है। श्वेताम्बर सम्प्रदाय में विहार में स्थित काकन ग्राम को प्राचीन काकन्दी मानते हैं। यह मुंगेर जिले में है। कल्पसूत्र में काकन्दिका नामक जैनश्रमणों की

शाखा का उल्लेख है। अधिक विवरण के लिए द्रष्टव्य — प्राचीन तीर्थमाला संग्रह पृ. २४, भारत के प्राचीन जैन तीर्थ पृ. २६, जैन तीर्थोंनो इतिहास (न्या) पृ. ४८९।

काम्पिल्य—रूपान्तर कम्पिल्ल, कंपिला। यह पुरातन पांचाल प्रदेश की राजधानी गंगा के तीर पर थी। यहां तेरहवें तीर्थंकर विमलनाथ का जन्म हुआ था (यतिवृषभ, रविषेण, जटासिंहनन्दि, जिनसेन, गुणभद्र)। इस समय यह छोटासा ग्राम है तथा उत्तरप्रदेश में फर्रुखाबाद जिले में कायमगंज रेलवेस्टेशन से छह मील दूर है। यहां दिगम्बर, श्वेताम्बर दोनों के मन्दिर हैं। पद्मपुराण के अनुसार दसवें चक्रवर्ती हरिषेण तथा बारहवें चक्रवर्ती ब्रह्मदत्त इसी नगर में हुए थे* (सर्ग २० श्लो. १८६, १९२)। महाभारतयुग में यही राजा द्रुपद की राजधानी थी तथा द्रौपदी का स्वयंवर यहीं हुआ था। चार प्रत्येकबुद्धों में एक राजा द्रुर्मुख का यही निवासस्थान था। जिनप्रभसूरि ने इस के विषय में एक कल्प लिखा है (विविधतीर्थकल्प पृ. ५०)। अधिक विवरण के लिए द्रष्टव्य प्राचीन तीर्थमाला संग्रह पृ. ३८, जैनतीर्थोंनो इतिहास (न्या.) पृ. ५२७, जैनतीर्थयात्रादर्शक पृ. ९७, भारत के प्राचीन जैन तीर्थ पृ. ४२।

कारकल—यहां नेमिनाथ मंदिर है तथा नौ धनुष ऊंची गोमटस्वामी की मूर्ति है (विश्वभूषण) यहां चतुर्मुख रत्नत्रय मन्दिर तथा नेमिनाथ मंदिर है, भैरसनेरडु राजा द्वारा स्थापित दश धनुष ऊंची गोमटस्वामी की मूर्ति है, यह नगर तुलराज प्रदेश में है (ज्ञानसागर)। इस समय भी यह नगर समृद्ध है। मैसूर प्रदेश के दक्षिण कनडा जिले के कारकल तालुके का यह मुख्य स्थान है। मंगलोर से यह ३२ मील दूर है। उपर्युक्त लेखकों द्वारा वर्णित मन्दिर तथा मूर्ति भी विद्यमान हैं। यहां के शिलालेखों से ज्ञात होता है कि बाहुबली स्वामी की यह ३४ फुट ऊंची मूर्ति भैरवेन्द्र के पुत्र पांड्यराज ने शक १३५३ = सन

---

* उत्तरपुराण में इन की राजधानियां भोगपुर और अयोध्या बतलाई हैं (सर्ग ६७ और ७२)।

१४३२ में निर्माण कराई थी तथा देशी गण – पनसोगेबलि के ललितकीर्ति मुनीन्द्र के उपदेश से यह कार्य सम्पन्न हुआ था (जैन शिलालेखसंग्रह भा. ३ पृ. ४७९) इसी राजा ने पांच वर्ष बाद वहां ब्रह्मदेवस्तम्भ की स्थापना की थी (उपर्युक्त पृ. ४८१)। राजा भैरवरस (द्वितीय) ने शक १५०८ = सन १५८६ में यहां रत्नत्रय चतुर्मुख मन्दिर बनवाया (उपर्युक्त पृ. ५४५) तथा उस के लिए कुछ दान दिया था। कारकल में पन्द्रहवीं सदी से भट्टारकपीठ रहा है, वहां के सब आचार्य ललितकीर्ति इस उपाधि को धारण करते थे। इन का शास्त्रभांडार बडा समृद्ध है। देखिए – जैनतीर्थयात्रादर्शक पृ. १६७।

कारंजा—यहां पार्श्वनाथमंदिर है (हर्ष) तथा चन्द्रनाथ मंदिर है। इस के भौंहरे में रत्नत्रय जिनमूर्तियां हैं (ज्ञानसागर)। इस समय भी यह समृद्ध नगर है। विदर्भ में मध्य रेलवे के मूर्तिजापुर–यवतमाल मार्ग पर यह स्टेशन है। यहां पन्द्रहवीं–सोलहवीं सदी से सेनगण, मूलसंघ – बलात्कारगण तथा काष्ठासंघ – लाडवागडगच्छ के भट्टारकपीठ रहे हैं। उपर्युक्त पार्श्वनाथमंदिर सेनगण से तथा चंद्रनाथमंदिर काष्ठासंघ से संबद्ध है। इन तीनों परम्पराओं के भट्टारकों का विस्तृत इतिहास हम ने 'भट्टारक सम्प्रदाय' में दिया है। इन के कारण यह नगर विदर्भ की जैन गतिविधियों का केन्द्रस्थान रहा है। इस समय उक्त तीनों पीठों पर कोई भट्टारक विद्यमान नही हैं। तथापि जैन ग्रंथों के उन समृद्ध भांडार विद्यमान हैं। यहां महावीर ब्रह्मचर्याश्रम नामक गुरुकुल संस्था भी है। शीलविजय ने यहां के संघपति भोज और उन के परिवार की समृद्धि का सुन्दर वर्णन अपनी तीर्थमाला में दिया है (जैन साहित्य और इतिहास पृ. ४५५-६)। जिस से सत्रहवीं सदी में इस स्थान के महत्त्व पर प्रकाश पडता है।

काशी—वाराणसी देखिए।

किष्किन्धपर्वत—यह तीर्थ दक्षिणापथ में है, यहां योगी कार्तिकस्वामी ने तपश्चर्या की थी उन के प्रभाव से यहां का पानी रोगनिवारक हो गया था (हरिषेण)। वर्तमान में यह तीर्थ ज्ञात नही है। रामायण

के अनुसार किष्किन्धानगर वानरराज सुग्रीव की राजधानी था। संभव है कि इसी नगर के समीप कहीं यह पर्वत रहा हो।

कुण्डपुर—रूपान्तर कुण्डग्राम, क्षत्रियकुण्डग्राम, कुण्डलपुर। यह विदेह (उत्तर विहार) प्रदेश की राजधानी वैशाली का एक उपनगर था। यहां अन्तिम तीर्थंकर भगवान महावीर का जन्म हुआ था (यतिवृषभ, पूज्यपाद, रविषेण, जटासिंहनंदि, जिनसेन, गुणभद्र)। इस समय वैशाली नगर के स्थान पर बसाढ नामक छोटा गांव है, यह उत्तर विहार में मुजफ्फरपुर शहर से २२ मील दूर है। कुण्डग्राम के स्थान को वहां वसुकुण्ड कहते हैं। यह बहुत वर्षों से उद्ध्वस्त पडा हुआ था। गत कुछ वर्षों में वहां भ. महावीर का स्मारक स्थापित किया गया है तथा वैशाली प्राकृत जैन विद्यापीठ का निर्माण चल रहा है (फिलहाल यह संस्था मुजफ्फरपुर में ही कार्य कर रही है)।

इस स्थान के विस्मृत हो जाने से आधुनिक समय में कुछ लोगों ने दक्षिण विहार के नालन्दा के समीप के वडगांव को कुण्डलपुर मान लिया था। मध्यप्रदेश के दमोह जिले के कुण्डलपुर का भी इस स्थान से कोई संबंध नही है। इस क्षेत्र के संबंध में विजयेन्द्रसूरिकृत 'वैशाली' तथा दर्शनविजयकृत 'क्षत्रियकुण्ड' ये स्वतन्त्र पुस्तकें प्रकाशित हो चुकी हैं। इस दूसरे पुस्तक में श्वेतांबर मध्ययुगीन परम्परा के अनुसार दक्षिण विहार में लछवाड ग्राम के निकट क्षत्रियकुण्ड होने का समर्थन किया है जो विशेष युक्तिसंगत नही है। अधिक विवरण के लिए द्रष्टव्य – प्राचीन तीर्थमाला संग्रह पृ. २२, जैन तीर्थोनो इतिहास (न्या.) पृ. ४८५।

कुण्डलगिरि—वर्तमान अवसर्पिणी युग के अन्तिम केवलज्ञानी श्रीधर का यह निर्वाणस्थान है (यतिवृषभ)। पूज्यपाद द्वारा उल्लिखित प्रवरकुण्डल भी संभवतः यही है। वर्तमान में यह तीर्थ प्रसिद्ध नहीं है। कुछ लोगों ने मध्यप्रदेश के दमोह जिले में स्थित कुण्डलपुर को पुरातन कुण्डलगिरि माना है किन्तु यह तर्क विशेष उचित प्रतीत नही होता।

पं. दरबारीलालजीने इसे राजगृह के समीप की पांच पहाडियों में से एक बतलाया है (अनेकान्त वर्ष ८ पृ. ११५) आगे राजगृह के वर्णन में इस का कुछ विचार किया गया है ।

कुन्थुगिरि—रूपान्तर कुंथलगिरि, वंशगिरि । वंशस्थलपुर के पश्चिम में कुंथुगिरि है, यहां से कुलभूषण तथा देशभूषण मुनि मुक्त हुए (निर्वाणकाण्ड) । मेघराज ने इस स्थान पर राम द्वारा देशभूषण – कुलभूषण का उपसर्ग दूर किये जाने का उल्लेख किया है । ज्ञानसागरने वंशस्थल के स्थान पर वांसिनयर यह रूपांतर दिया है । गुणकीर्ति, सोमसेन, जयसागर, चिमणा पंडित, सुमतिसागर, दिलसुख इन लेखकोंने कुंथुगिरि नाम का उल्लेख नही किया है, सिर्फ वंशस्थल से मिलते-जुलते वंशगिरि, वंशाचल और वांसिनयर जैसे नाम प्रयुक्त किये हैं । प्राचीन लेखकों में रविषेण और जिनसेन ने वंशगिरि पर देशभूषण – कुलभूषण की तपस्या का और राम द्वारा उन के उपसर्ग दूर किये जाने का वर्णन किया है, इन मुनियों का मुक्तिस्थान उन्हों ने नही बतलाया है । उन के कथनानुसार राम ने इस पर्वत पर बहुत से जैन मंदिर बनवाये जिस से उस का नाम बदल कर रामगिरि हो गया । उन्हों ने कुंथुगिरि नाम का कोई उल्लेख नही किया है । इस समय यह क्षेत्र महाराष्ट्र में है । मध्य रेलवे के कुर्डुवाडी – लातूर मार्गपर बारसी टाउन स्टेशन है, उस से २२ मील दूर यह पहाडी है । पहले यहां केवल चरणपादुकाएं थीं । संवत् १९३२ में ईडर के भ. कनककीर्ति ने इस का जीर्णोद्धार करवाया । अब तक वहां दस मन्दिर बन चुके हैं । कई वर्षों से वहां एक ब्रह्मचर्याश्रम चल रहा है । कुछ वर्ष पहले आचार्य शान्तिसागर का यहीं स्वर्गवास हुआ था ।

प्रो. ज्योतिप्रसाद जैन ने वंशगिरि = रामगिरि के रविषेण – जिनसेनकृत वर्णन का विचार कर अनुमान किया है कि आन्ध्रप्रदेश के विजगापट्टम जिले में विजयानगरम् के समीप का रामकोण्ड पर्वत ही रामगिरि होना चाहिए क्यों कि वहां अनेक जैन गुहामन्दिरों के अवशेष विद्यमान हैं (जैन सिद्धान्त भास्कर भा. २० अंक १) । पं. प्रेमीजी ने

भी इस का उल्लेख करते हुए कहा है कि उग्रादित्य आचार्य ने कल्याण-कारक नामक वैद्यक ग्रन्थ जिस रामगिरि पर बनाया था वह यही हो सकता है क्यों कि उग्रदित्य ने वेंगी के राजा के अधिकार में स्थित त्रिकलिंग प्रदेश के ऊंचे रामगिरि पर अपना ग्रंथ लिखा था, यह वर्णन आन्ध्रस्थित रामकोण्ड के लिए ही संभव है (जैन साहित्य और इतिहास पृ. ४४६–७) अतः उन्हों ने वर्तमान कुंथलगिरि की प्रसिद्धि ८०-९० वर्ष से ही है ऐसा निष्कर्ष निकाला है ।

इस में सन्देह नही कि उग्रादित्य के ग्रंथ का रचनास्थान आन्ध्रस्थित रामगिरि ही हो सकता है* किन्तु मध्ययुगीन लेखकों की दृष्टिमें वंशगिरि = कुंथुगिरि उस के वर्तमान स्थान परही था ऐसा प्रतीत होता है । जयसागर तथा ज्ञानसागर ने तेर तथा धाराशिव के साथ इस का उल्लेख किया है जिस से प्रतीत होता है कि यह भी महाराष्ट्र में होना चाहिए । इन लेखकों ने वंशस्थल के लिए वांसीनयर शब्द का प्रयोग किया है । यह शब्द बारसी से मिलता जुलता है । यह ऊपर बताया ही है कि बारसी कुंथलगिरि से २२ मील पर ही है । अतः यह बहुत संभव है कि इन लेखकों ने वर्तमान कुंथुगिरि का ही उल्लेख किया हो । इस कुंथलगिरि के समीप रामकुंड नामक स्थान भी है इस का उल्लेख प्रेमीजी ने ही किया है ।

प्रो. ज्योतिप्रसाद और पं. प्रेमीजी ने आन्ध्रस्थित रामकोण्ड के पक्ष में एक कारण यह भी बताया है कि वह दण्डकारण्य के समीप है और यह बात रविषेण – जिनसेन के वर्णन से मिलती है । इस संबंध में यह ध्यान रखना चाहिए कि दण्डकारण्य शब्द का प्रयोग बहुत व्यापक क्षेत्र के लिए होता रहा है । महाराष्ट्र की परम्परा के अनुसार गोदावरी और कृष्णा के तीर का पूरा प्रदेश रामायण – युग में दण्डकारण्य कहलाता

* कलिंग और आंध्र की सीमा पर स्थित इस रामगिरि का उल्लेख हरिषेण के बृहत्कथाकोष मे (कथा ५६ श्लो. १९६) भी है, किन्तु वहां वंशगिरि या कुंथुगिरि का संबंध नहीं है ।

था। वर्तमान नासिक नगर इसी प्रदेश में था जिस से रामसंबंधी कई कथाएं संबद्ध हैं। अतः वर्तमान कुंथलगिरि भी दण्डकारण्य से असंबद्ध नहीं है।

पद्मप्रभ का यमकाष्टक स्तोत्र भी रामगिरि के पार्श्वनाथ की स्तुति के लिए लिखा गया है। यह रामगिरि कहां था यह जानने का कोई साधन नही है।

कालिदास के मेघदूत में उल्लिखित रामगिरि भी विवाद का विषय रहा है। कुछ विद्वान नागपुर के निकट २५ मील पर स्थित रामटेक को रामगिरि मानते हैं, तो अन्य विद्वान मध्यप्रदेश में सरगुजा के निकट स्थित रामकोण्ड को। किन्तु इस का वर्तमान विषय पर खास प्रभाव नही पडता। द्रष्टव्य—जैनतीर्थयात्रादर्शक पृ. १८२।

कुलपाक—रूपान्तर कुल्यपाक, कुल्लपाक, कोल्लपाक, कुल्लपाख्य। यहां की आदिनाथमूर्ति माणिकस्वामी, माणिक्यस्वामी अथवा माणिकदेव नाम से प्रसिद्ध है। इस का उल्लेख उदयकीर्ति, गुणकीर्ति, सुमतिसागर, जयसागर, ज्ञानसागर तथा भ. जिनसेन ने किया है। सिंहनंदि ने इस के विषय में गीत लिखा है। इस गीत के अनुसार यह मूर्ति भरत राजा ने इन्द्रनील रत्न से बनवाई थी, बहुत समय बाद रावण ने इसे प्राप्त किया तथा मन्दोदरी ने इस की पूजा की, फिर बहुत समय तक यह समुद्र में पडी रही तथा बाद में शंकर राजा ने इसे प्राप्त कर वर्तमान मन्दिर बनवाया। जिनप्रभसूरि ने विविधतीर्थकल्प में इस के विषय में एक कल्प लिखा है (पृ. १०१–२), वही कथा इस गीत में है। जिनप्रभसूरि ने कहा है कि उपर्युक्त शंकर राजा कर्णाटक प्रदेश के कल्याण नगर में राज्य करता था। इतिहास से पता चलता है कि कल्याण के कलचुरि राजाओं में संकम (द्वितीय) ने सन ११७७ से ११८० तक राज्य किया था (दि स्ट्रगल फॉर एम्पायर पृ. १८१–२)।

हो सकता है कि उसी के समय में यह मन्दिर बना हो*। शीलविजय के कथनानुसार शंकर राजा तो शैव था – उस ने ३६० शिवमन्दिर बनवाये – किन्तु उस की रानी जिनभक्त थी, उस ने यह मन्दिर बनवाया था (जैन साहित्य और इतिहास पृ. ४५८)।

यह क्षेत्र आन्ध्र प्रदेश में सिकन्दराबाद वरंगल रेलमार्ग के आलेर स्टेशन के पास से ४ मील दूर है। जैन तीर्थों नो इतिहास (पृ. ५८) के कथनानुसार यहां के मंदिर का जीर्णोद्धार सं. १७६७ में केशर-कुशलगणी ने करवाया था। श्वेताम्बर और दिगम्बर दोनों इस तीर्थ की यात्रा करते हैं। देखिए – जैन तीर्थो नो इतिहास (न्या.) पृ. ४१२; जैन तीर्थयात्रा दर्शक पृ. २००।

कुशाग्रपुर—राजगृह देखिए।

कुसुमपुर—पाटलिपुत्र देखिए।

केशरियाजी—धुलेव देखिए।

कैलाश—रूपान्तर कैलास, कइलास, कविलास, अष्टापद, अट्ठावय। इस पर्वत पर पहले तीर्थंकर श्रीऋषभदेव का निर्वाण हुआ (पूज्यपाद, रविषेण, जटासिंहनंदि, जिनसेन आदि)। इस पर्वत के समीप भगीरथ ने गंगा के तीर पर दीर्घकाल तपस्या की तथा वहीं उन का निर्वाण हुआ (गुणभद्र)। नागकुमार, व्याल, महाव्याल आदि का निर्वाण यहीं हुआ (निर्वाणकाण्ड, गुणकीर्ति, मेघराज, ज्ञानसागर आदि)‡। यहां सुवर्ण वर्ण की दिव्य जिनमूर्तियां हैं (मदनकीर्ति)।

---

* यहां यह नोट करना जरूरी है कि जिनप्रभसूरि इस राजा को बहुत प्राचीन मानते थे – उन के कथनानुसार मन्दिर बनने के बाद विक्रम संवत् ६८० तक यह मूर्ति अधर रही थी, बाद में सिंहासन से उस का स्पर्श होने लगा। किन्तु इतने प्राचीन समय में कल्याण नगर का अस्तित्व ही नहीं था। अतः यह कथन विचारणीय हो जाता है।

‡ पुष्पदन्त और मल्लिषेण के नागकुमारचरितों में उन के निर्वाणस्थान का उल्लेख नहीं है।

पुराणकथाओं के अनुसार ऋषभदेव के पुत्र पहले चक्रवर्ती राजा भरत ने यहां दिव्य मन्दिर बनवाये थे, दूसरे चक्रवर्ती सगर के पुत्रों ने इस पर्वत के चारों ओर दण्डरत्न से गहरी खाई बनाई जिस से साधारण मनुष्यों के लिए इस पर्वत पर चढना असंभव हो गया (उत्तर पुराण पर्व ४८)। इस समय भी हिमालय के पश्चिमी भाग में कैलाश एक प्रसिद्ध शिखर है और गंगा के उद्गमस्थल से कुछ उत्तर की ओर स्थित है। हिन्दुओं की मान्यता के अनुसार यह पर्वत शिव का निवासस्थान है अतः वे इस की प्रदक्षिणा के लिए बराबर जाते रहे हैं। जैनों में यह परम्परा टूट सी गई है। हाल के कुछ वर्षों में चीनियों के अधिकार के कारण अब कोई भी भारतीय वहां नही जा पाता। इस के विषय में जिनप्रभसूरि ने एक कल्प लिखा है (विविधतीर्थकल्प पृ. ९१)। कुछ वर्ष पहले स्वामी सत्यदेव परिव्राजक ने इस के विषय में 'मेरी कैलाशयात्रा' नामक विस्तृत पुस्तक लिखी थी। कैलाश की केवल प्रदक्षिणा ही की जा सकती है, उस पर चढना संभव नही क्यों कि आठों दिशाओं में इस के तट काटे हुएसे कोई दो हजार फुटतक ऊंचे हैं। इसी लिए इस को अष्टापद यह नाम प्राप्त हुआ है। इसी पर्वत के समीप सुप्रसिद्ध मानस सरोवर तथा रावणह्रद नामक विशाल झीलें हैं। देखिए जैन तीर्थोनो इतिहास (न्या.) पृ. ५२३।

कोटितीर्थ—पूर्वदेश में वरेन्द्र प्रदेश में देवकोट नगर के पास सोमशर्मा मुनि का उपसर्ग दूर करने के लिए देवोंने कोटि रत्नों की वर्षा की तब से वह स्थान कोटितीर्थ नाम से प्रसिद्ध हुआ (हरिषेण)। वर्तमान समय में यह तीर्थ ज्ञात नही है। श्वेताम्बर परम्परा के ग्रन्थों में राढ (बंगाल का उत्तर भाग) की राजधानी के रूप में कोटिवर्ष नगर का उल्लेख आता है। यहां से निकली हुई जैन श्रमणों की एक शाखा कोडिवरिसिया का उल्लेख कल्पसूत्र में आता है। कोटिवर्ष के स्थान पर इस समय वानगढ गांव है, यह बंगाल के दिनाजपुर जिले में है। शायद कोटिवर्ष और कोटितीर्थ एकही हैं। देखिए—भारतके प्राचीन जैन तीर्थ पृ. ३२। मत्स्यपुराण (अध्याय १०१) में एक कोटितीर्थ का वर्णन है

जो नर्मदा के तीर पर था। किन्तु यह हरिषेण द्वारा वर्णित कोटितीर्थ नही हो सकता क्यों कि इस का वरेन्द्र प्रदेश से सम्बन्ध नही जोडा जा सकता।

कोटिशिला—इस पर कई कोटि मुनि मुक्त हुए अतः इसे कोटिशिला कहते हैं, इसे श्रीकृष्ण ने चार अंगुल ऊंचा उठाया था (जिनसेन)। यह शिला पीठगिरि पर है, लक्ष्मण ने इसे उठाया था (गुणभद्र)। यह शिला कलिंगदेश में है, इस पर यशोधर राजा के पांचसौ पुत्र और अन्य कोटि मुनि मुक्त हुए (निर्वाणकाण्ड, गुणकीर्ति, मेघराज)। सुमतिसागर, ज्ञानसागर तथा देवेन्द्रकीर्ति ने इसे तारंगा पर्वत पर बतलाया है। चिमणापंडित ने कलिंगदेश और तारंगा दोनों का एकत्रित उल्लेख कर दिया है। श्रुतसागर ने सिर्फ कोटिकशिलागिरि नाम का उल्लेख किया है। जिनप्रभसूरि ने इस के विषय में एक कल्प लिखा है (विविधतीर्थकल्प पृ. ७८-७९) वे इसे मगध में बतलाते हैं। किन्तु उन्हों ने पूर्वाचार्यों की जो गाथा उद्धृत की है उस में इसे दशार्ण पर्वत के समीप बतलाया है। दशार्ण नदी (वर्तमान धसान) मध्यप्रदेश में विन्ध्य के एक भाग से निकलती है, संभवतः वही दशार्ण पर्वत है।* इस तरह कोटिशिला के स्थान के बारे में बहुत से मत हैं। कलिंग (वर्तमान उडीसा) में इस समय एक ही जैनतीर्थ – खंडगिरि–उदयगिरि – है अतः कुछ लोगों ने वहीं कोटिशिला होने का अनुमान किया है (जैन तीर्थयात्रा दर्शक पृ. १४७)।

कोल्लपाक–कुलपाक देखिए।

कौशाम्बी–यह पुरातन वत्सदेश की राजधानी थी। यहां छठवे तीर्थंकर श्रीपद्मप्रभ का जन्म हुआ था (यतिवृषभ, रविषेण, जिनसेन, जटासिंहनंदि, गुणभद्र) इस समय इस के स्थानपर कोसम नाम का छोटा गांव है। यह कानपुर–इलाहाबाद रेलमार्ग के भरवारी स्टेशन से १५ मील दूर यमुना के किनारे है। यहां दो मंदिर और धर्मशाला हैं। इस

* जिनप्रभसूरि ने तारण (तारंगा) में भी विश्वकोटिशिला का उल्लेख किया है (विविधतीर्थकल्प पृ. ८५)।

के समीप पभोसा नामक पहाड है। इस पर प्राचीन गुहाएं हैं जो ईसवी पूर्व दूसरी सदी में राजा आषाढसेन ने बनवाई थीं। यहां एक मंदिर सन १८२४ में भ. ललितकीर्ति के उपदेश से साह हीरालाल अग्रवाल द्वारा बनवाया गया था (जैनशिलालेख संग्रह भा. २ लेखांक ६–७ तथा भा. ३ लेखांक ७५६)। उत्तरपुराण (सर्ग ६९) के अनुसार ग्यारहवें चक्रवर्ती जयसेन की यही राजधानी थी। जिनप्रभसूरि ने इस के विषय में एक कल्प लिखा है (विविधतीर्थकल्प पृ. २३)। उन्हों ने यहां चन्दनबाला द्वारा भगवान महावीर को आहार दिये जाने की घटना का वर्णन किया है तथा पांडवों के वंश के प्रसिद्ध राजा उदयन का यहां राज्य होने का भी उल्लेख किया है। कौशाम्बी बौद्धों काभी प्रसिद्ध क्षेत्र था। घोषिताराम आदि कई बौद्ध विहार यहां थे। श्वेताम्बर तीर्थमालाओं में इस के उल्लेखों के लिये देखिये–प्राचीन तीर्थमाला संग्रह भा. १ पृ. ६–९, जैन तीर्थोनो इतिहास (न्या.) पृ. ५४३, जैन तीर्थ यात्रादर्शक पृ. १०३।

क्रौञ्चपुर—यह नगर वनवास (कर्णाटक) प्रदेश में है, चाणक्य मुनि यहां घोर उपसर्ग सहन कर सिद्ध हुए (हरिषेण)। वर्तमान में यह तीर्थ अज्ञात है।

क्षत्रियकुंड—कुण्डपुर देखिए।

खड्गवंशपर्वत—यहां मेदज्ज मुनि मुक्त हुए (हरिषेण)। वर्तमान में यह स्थान ज्ञात नहीं है। श्वेताम्बर परम्परा के अनुसार मेदज्ज भगवान महावीर के दसवें गणधर थे तथा उन का निर्वाण राजगृह के समीप वैभार पर्वत पर हुआ (विविधतीर्थकल्प पृ. ७७)। जयसेन ने धर्मरत्नाकर नामक ग्रन्थ की प्रशस्ति में कहा है कि मेदार्य ने खंडिल्लक पत्तन के समीप तपश्चर्या की थी (अनेकान्त वर्ष ८ पृ. १०३)। यह खंडिल्लक खड्गवंश से मिलताजुलता नाम है। जैनों और हिन्दुओं में खंडेलवाल जाति है। उस का स्थापनास्थान खंडिल्ल नगर ही माना जाता है। यह राजस्थान में है।

खण्डवा—रूपांतर खंडेवो, खेडवा। यहां पार्श्वनाथ का मंदिर है (ज्ञानसागर, जयसागर, हर्ष)। यह इस समय भी समृद्ध नगर है। यह मध्यप्रदेश के पूर्व निमाड जिले की राजधानी है और मध्य रेलवे तथा पश्चिम रेलवे का प्रमुख जंकशन है।

खम्भात—रूपान्तर स्तम्भतीर्थ, स्तम्भन, खम्बायत, कॅम्बे, अम्बावती। यहां विमलनाथ का मंदिर है और भट्टपुरा जाति के श्रावक हैं (ज्ञानसागर)। यह गुजरात का प्रसिद्ध शहर है। श्वेतांबरों का यह बडा तीर्थ है। यहां के चिन्तामणि पार्श्वनाथ की प्रतिष्ठापना अभयदेवसूरि ने ग्यारहवीं सदी में की थी। इस की कथा जिनप्रभसूरि ने विविधतीर्थकल्प में दी है (पृ. १०४)। धनपालकृत अपभ्रंश बाहुबलिचरित से ज्ञात होता है कि तेरहवीं सदी में मूलसंघ-बलात्कारगण के भट्टारक प्रभाचंद्र इस नगर में आये थे (अनेकान्त वर्ष ७ पृ. ८३)। विवरण के लिए देखिए-जैन तीर्थोनो इतिहास (न्या.) पृ. २४२।

खाधुनगर—यहां के शीतलनाथमंदिर का उल्लेख जयसागर ने किया है। अधिक विवरण ज्ञात नही है।

गजपंथ—रूपान्तर गजपथ, गयवह, गजध्वज। इस पहाडी के समीप पहले बलभद्र श्रीविजय का समवशरण हुआ जिस का दर्शन करने से राजा अमिततेज और अशनिघोष का वैर शान्त हुआ (गुणभद्र)।* यहां से सात बलभद्र और आठ कोटि यादव राजा मुक्त हुए (निर्वाणकाण्ड, उदयकीर्ति, गुणकीर्ति, मेघराज, चिमणा पंडित, दिलसुख, ज्ञानसागर)। जिन लेखकों ने इस क्षेत्र का सिर्फ नामोल्लेख किया है वे हैं पूज्यपाद, सुमतिसागर, जयसागर, सोमसेन व कवीन्द्रसेवक। श्रुतसागर और देवेन्द्रकीर्ति के उल्लेख यात्रासंबंधी हैं। उन्होंने इसके समीप नासिक नगर का भी उल्लेख किया है। इस समय नासिक से तीन मील दूर म्हसरूल गांव

---

* गुणभद्र का यह श्लोक कुछ दुरूह है, गजध्वज का इस में नाभेयसीम के साथ उल्लेख है। असग कवि के शांतिनाथ चरित में इसी प्रसंग में नासिक्य के समीप गजध्वज का उल्लेख है (जैन साहित्य और इतिहास पृ. ४३१)। असग दसवीं सदी के कवि थे।

है उस के समीप गजपंथ की पहाडी है। तलहटी में धर्मशाला और मंदिर है। पहाडी पर गुहाओं जैसे कुछ मंदिर थे। जीर्णोद्धार और लेप होने से इन मंदिरों आर मूर्तियों में नवीनता आ गई है जिस से उनका पुरातन स्वरूप ज्ञात नही होता। इस जीर्णोद्धारकार्य का प्रारंभ नागोर के भट्टारक क्षेमेन्द्रकीर्ति ने सन १८८३ में किया था। इस अवसर पर उन के शिष्य पं. शिवजीलालद्वारा रचित गजपंथाचल मंडल पूजा उपलब्ध है। शिवजीलाल ने अपने पुस्तक के आधार के रूप में विश्वभूषण का उल्लेख किया है (जैन साहित्य और इतिहास पृ. ४३१-३४)।* द्रष्टव्य-जैन तीर्थयात्रादर्शक पृ. १८८।

गजपर्वत-यह कलिंग प्रदेश में दन्तिपुर के समीप है, यहां गजकुमार मुनि मुक्त हुए (हरिषेण)। वर्तमान समय में यह तीर्थज्ञात नही है। खंडगिरि की हाथीगुफा (जिस में महाराजा खारवेल का प्रसिद्ध शिलालेख है) का नाम इस से मिलता जुलता है।

गजपुर-गयउर-हस्तिनापुर देखिए।

गयदह-गजपंथ देखिए।

गया-यहां अकलंकस्वामी ने बौद्धों को वाद में जीता तथा संभवनाथ, नेमिनाथ और सुपार्श्वनाथ के मंदिर बनवाये (ज्ञानसागर)। दक्षिण बिहार का यह शहर अब भी समृद्ध है तथा बनारस-आसनसोल और पटना-टाटानगर रेलमार्गों पर प्रमुख जंक्शन है। यह हिन्दुओं और बौद्धों का प्रसिद्ध भी तीर्थ है। दि. जैन मंदिर अब भी विद्यमान हैं (जैन तीर्थयात्रादर्शक पृ. १२२)

गिरनार-ऊर्जयंत देखिए।

---

* श्वेतांबर साहित्य में गजाग्रपद नामक तीर्थ का उल्लेख आता है, यह दशार्ण प्रदेश में (वर्तमान मध्यप्रदेश के भिलसा और उत्तरप्रदेश के झांसी विभाग में) कहीं था। इस का विवरण मुनि कल्याणविजयजी ने भिक्षु स्मृतिग्रन्थ में एक लेख में दिया है। इस का नाम यद्यपि गजपथ से मिलताजुलता है तथापि स्थान और कथा उस से बहुत भिन्न है।

गिरसोपा–रूपान्तर गिरसप्पा, गेरसोपा, गेरुसोप्पे। यहां पार्श्वनाथमंदिर है (विश्वभूषण), पार्श्वनाथ के तीन मंदिर हैं, एक मंदिर चारमंजिला चतुर्मुख दोसौ खंभों से सुशोभित है, यहां जैन रानी भैरवदेवी का राज्य है (ज्ञानसागर)। यह नगर मैसूर प्रदेश में पश्चिम समुद्र के किनारे है।

गिरिव्रज–राजगृह देखिए।

गुरवाडी–वागड प्रदेश के इस ग्राम में बड़ा जिनमंदिर है (ज्ञानसागर)। अधिक विवरण ज्ञात नही है।

गेरसोपा–गिरसोपा देखिए।

गोडी–यहां पार्श्वनाथ मंदिर है, यह गुजरात में है (हर्ष)। यह श्वेताम्बरों का अच्छा तीर्थ रहा है।

गोपाचल–रूपान्तर गोपगिरि, गोवायल, ग्वालियर। यहां बावनगज ऊंची जिनमूर्ति है (सुमतिसागर, जयसागर, ज्ञानसागर)। ग्वालियर इस समय भी समृद्ध शहर है। यह मध्यप्रदेश का प्रमुख नगर और मध्य रेलवे का प्रमुख स्टेशन है। यहां के दुर्ग में तोमरवंश के राजाओं के समय–पन्द्रहवीं–सोलहवीं सदी में कई भव्य जिनमूर्तियों की स्थापना हुई थी। काष्ठासंघ–माथुर गच्छ के भ. गुणकीर्ति, यशःकीर्ति, मलयकीर्ति तथा गुणभद्र का यहां अच्छा प्रभाव था। इस के विस्तृत विवरण के लिए पं. परमानन्दशास्त्री की जैन ग्रन्थ प्रशस्तिसंग्रह भा. २ की प्रस्तावना (पृ. १०७ और आगे) देखनी चाहिए जिस में यहां के कवि रइधू का विस्तृत परिचय भी दिया है। हमारे 'भट्टारक संप्रदाय' में इन भट्टारकों के बारे में प्राप्त सामग्री भी संकलित की गई है। इस समय ग्वालियर शहर तथा दुर्ग में कुल २२ मंदिर हैं। यहां के दो शिलालेख सन १४४० तथा १४५४ के मूर्तिप्रतिष्ठा से सम्बन्धित हैं (जैन शिलालेखसंग्रह भा. ३ पृ. ४८३ और ४८७)। सोलहवीं सदी में श्वेताम्बर आचार्य हीरविजय ने यहां की बावनगज मूर्ति के दर्शन किये थे (जैन साहित्य और इतिहास पृ. ४७४)। जैन तीर्थयात्रादर्शक पृ. ९१।

गोम्मटस्वामी–श्रवणबेलगोल देखिए।

गोत्रजपर्वत—यह दिव्यपुरी के निकट है, यहां मुनि धनद मुक्त हुए (हरिषेण)। वर्तमान में यह स्थान ज्ञात नही है।

चन्दवाड—रूपान्तर चन्द्रवाट, चन्द्रपाटक। यह नगर यमुना के तीर पर है, यहां चन्द्रप्रभ का मन्दिर है जिस में बहुत मूर्तियां हैं (ज्ञानसागर)। इस के विषय में पं. परमानन्द शास्त्रीने एक लेख लिखा है (अनेकान्त वर्ष ८ पृ. ३४५) जिस से ज्ञात होता है कि आगरा के निकट फिरोजाबाद के दक्षिण में चार मील पर चन्दवाड के अवशेष विद्यमान हैं। इसे जैन राजा चन्दपाल ने सं. १०५२ = सन ९९६ में बसाया था। उस के द्वारा स्थापित चन्द्रप्रभ की स्फटिकमूर्ति अभी विद्यमान है। लक्ष्मण कवि के अणुव्रतरत्नप्रदीप (सं. १३१३) में यहां चौहान वंश के राजा आहवमल्ल के शासन का उल्लेख है। धनपाल कवि के बाहुबलिचरित (सं. १४५४) में यहां चौहान वंश के राजा सारंग तथा उन के जैन मंत्री वासाधर का वर्णन है। अमरकीर्ति के षट्कर्मोपदेश की एक प्रति सं. १४६८ में इस नगर में राजा रामचन्द्र के राज्य में लिखी गई थी वह प्राप्त हुई है। कवि रइधू ने पुण्यास्रव कथाकोष की प्रशस्ति में यहां के राजा प्रतापरुद्र का उल्लेख किया है। सं. १५३० में कवि श्रीधर ने यहां के साहु सुपट्ट की प्रेरणासे भविष्यदत्त चरित लिखा। सं. १६७१ में कवि ब्रह्मगुलाल ने कृपणजगावनचरित में यहां राजा कीर्तिसिंधु का उल्लेख किया है।

चन्द्रगिरि—इस नाम की दो पहाडियां हैं—हाडोली और श्रवणबेलगोल के वर्णन में इन का उल्लेख देखिए।

चन्द्रपुरी—यह आठवें तीर्थंकर श्रीचन्द्रप्रभ का जन्मस्थान है (यतिवृषभ, रविषेण, जटासिंहनंदि, जिनसेन, गुणभद्र)। यह स्थान वाराणसी से १४ मील दूर गंगा के तीर पर है। यहां दो मन्दिर और धर्मशाला हैं। जिनप्रभसूरि ने इस का उल्लेख किया है (विविधतीर्थकल्प पृ. ७४) और इसे वाराणसी से २॥ योजन दूर बतलाया है। इसे चन्द्रावती या चन्द्रावटी भी कहते हैं। देखिए—जैन तीर्थानो इतिहास

(न्या.) पृ. ४४३, भारत के प्राचीन जैन तीर्थ पृ. ३६, जैन तीर्थयात्रा-दर्शक पृ. ११४, प्राचीन तीर्थमाला संग्रह भा. १ पृ. १४।

चन्नपुर–यहां वासुपूज्य का मन्दिर है (विश्वभूषण)। यह चन्नपटन कहलाता है तथा मैसूर के पास दक्षिण रेल्वे का स्टेशन है।

चम्पापुर–यह पुरातन अंग प्रदेश की राजधानी थी। यहां बारहवें तीर्थंकर श्रीवासुपूज्य का जन्म हुआ और यहीं वे मुक्त हुए* (यतिवृषभ, रविषेण, जटासिंहनंदि, जिनसेन, गुणभद्र आदि)। जिनसेन ने वसुदेव की कथा में यहां नगर के बाहर वासुपूज्यमन्दिर का और प्रचंड मानस्तंभ का उल्लेख किया है। मानस्तंभ का उल्लेख ज्ञानसागर ने भी किया है। अन्य उल्लेख कर्ता हैं– मदनकीर्ति, निर्वाणकाण्ड, उदयकीर्ति, गुणकीर्ति, श्रुतसागर, मेघराज, सुमतिसागर, चिमणापंडित, सोमसेन, जयसागर व दिलसुख। बिहार के पूर्व भाग में गंगा के तीर पर भागलपुर शहर से छह मील दूर चम्पापुर है। भागलपुर तथा चम्पापुर दोनों स्थानों पर धर्मशाला और मन्दिर हैं। जिनप्रभसूरि ने इस के विषय में एक कल्प लिखा है (विविधतीर्थकल्प पृ. ६५)। उन्हों ने इस नगर से संबद्ध अशोक–रोहिणी, राजा करकंडु, श्रेणिक का पुत्र राजा कूणिक–अजातशत्रु, राजा कर्ण, श्रेष्ठी सुदर्शन आदि की कथाओं का उल्लेख किया है। इसी नगर में शय्यम्भवसूरि ने दशवैकालिकसूत्र का संकलन किया। भगवान महावीर ने तीन चातुर्मास-वर्षावास यहां बिताये थे। यहां मंदिर में एक चरणपादुका पर शिलालेख है जिस में भ. धर्मचन्द्र द्वारा सं. १६९३ = सन १६३७ में इस की प्रतिष्ठापना का उल्लेख है (जैन सिद्धान्त भास्कर भा. १९ पृ. ५९)। इसी समय के लगभग कारंजा के सेनगण के भ. नरेन्द्रसेन ने भी यहां एक वाद में विजय प्राप्त किया था भट्टारक (संप्रदाय पृ. ३४)। विवरण के लिए देखिए–जैन तीर्थोनो इतिहास (न्या.) पृ. ४९१, भारत के प्राचीन

---

* गुणभद्र के अनुसार वासुपूज्य का निर्वाणस्थान अग्रमन्दरपर्वत है यह पहले बतला चुके है।

भागलपुर से दस कोस दूर है (प्राचीन तीर्थमाला संग्रह भा. १ पृ.८१)। इसे अब सुलतानगंज कहते हैं। गंगा के मध्य में जो मंदिर है उस में अब शिवलिंग की पूजा होती है (जैन तीर्थोनो इतिहास (न्या.) पृ.४९७)।

जामनेर—जांबुनेर – यहां के जिनमंदिर में आदिनाथ की जटासहित मूर्ति है (सुमतिसागर, जयसागर)। यह नगर महाराष्ट्र के जलगांव (पूर्व खानदेश) जिले में है। मध्य रेलवे के पाचोरा जंक्शन से यहां तक रेलमार्ग है।

जीरापल्ली—रूपान्तर जीराउल, जीरावल। यहां के पार्श्वनाथ के स्तोत्र भ. पद्मनन्दी और श्रुतसागर ने लिखे हैं। मेघराज ने भी इस का उल्लेख किया है। यह श्वेताम्बरों का प्रसिद्ध तीर्थ है तथा राजस्थान के सिरोही जिले में है। पश्चिम रेलवे के अबूरोड स्टेशन से यहां तक मार्ग है। अधिक विवरण के लिए देखिए – प्राचीन तीर्थमाला संग्रह भा. १ पृ. ५३, ७०, १०५, १३८, १४४ आदि, जैनतीर्थानो इतिहास (न्या.) पृ. २०४, जैन तीर्थोनो इतिहास पृ. ६५।

जृम्भिकाग्राम—ऋजुकूला नदी के तीर पर इस ग्राम के निकट भगवान महावीर को केवलज्ञान प्राप्त हुआ (पूज्यपाद)। अन्य पुराणों में भी इस का वर्णन मिलता है। दिगम्बर समाज में यह तीर्थ अब प्रसिद्ध नही है। श्वेताम्बर परम्परा में गिरिडीह से सम्मेदशिखर जाते समय दस मील पर यह स्थान माना जाता है। विजयधर्मसूरि इस स्थान को सही नहीं मानते। उन के मत से सम्मेदशिखर से दक्षिणपूर्व में ५० मील दूर आजी नदी के किनारे जमग्राम है वही पुरातन जृम्भिकाग्राम होना चाहिए*। कुछ विद्वान क्विल नदी के तीर के जम्हुईनगर को जृम्भिकाग्राम मानते हैं। द्रष्टव्य – जैनतीर्थोनो इतिहास (न्या.) पृ. ४६५।

जैनपुर—जैनवेदरी – श्रवणबेलगोल देखिए।

---

* प्राचीन तीर्थमाला संग्रह पृ. ३२–३३.

डभोई—वडभोई – यह लाट प्रदेश में है, यहां कोट में लोडन पार्श्वनाथ का मंदिर है तथा मानसरोवर है (ज्ञानसागर)। डभोई में लोडनपार्श्वनाथ का उल्लेख मेघराज तथा हर्ष ने भी किया है। जयसागर सिर्फ लोडनपार्श्वनाथ का उल्लेख करते हैं। डभोई इस समय भी समृद्ध नगर है। गुजरात में पश्चिम रेलवे का यह जंकशन है। प्रसिद्ध श्वेताम्बर साहित्यिक उपाध्याय यशोविजयजी का यह समाधिस्थान है (जैनतीर्थोनो इतिहास (न्या.) पृ. २३३)।

डूंगरपूर—डोंगरपुर – यहां मल्लिनाथ का मंदिर है (जयसागर), जटासहित आदिनाथ की शामल मूर्ति है (सुमतिसागर), यह वागड प्रदेश में है, यहां बहुत मूर्तियों से सुशोभित मंदिर और मानसरोवर हैं (ज्ञानसागर), डूंगरपुर इस समय भी समृद्ध नगर है और राजस्थान के दक्षिण भाग में स्थित है। राजस्थान में उदयपुर से और गुजरात में हिंमतनगर से यहां तक मोटर-मार्ग है। यह इसी नाम के जिले की राजधानी है। काष्ठासंघ के भट्टारकों का यह प्रमुख स्थान रहा है। सोलहवीं सदी में भ. विश्वसेन का पट्टाभिषेक यहीं हुआ था (भट्टारक संप्रदाय पृ. २९४)।

णिवडकुंडली—इस का उल्लेख निर्वाणकाण्ड में है। किन्तु अन्य कुछ भी विवरण ज्ञात नही है।

तवनिधि—स्तवनिधि–यहां पार्श्वनाथ मंदिर है (ज्ञानसागर, जयसागर, हर्ष)। यह नगर कर्णाटक में निपाणी से २ मील दूर है। इस के विषय में डॉ. उपाध्ये ने एक विस्तृत लेख लिखा है (जैन सिद्धान्त भास्कर भा. ११ किरण २)। जैन शिलालेख संग्रह भा. ३ में यहां के छह लेख संगृहीत हैं जो तेरहवीं–चौदहवीं सदी के समाधिलेख हैं।
द्रष्टव्य–जैनतीर्थयात्रादर्शक पृ. १७५।

तामलिंद्री—इस नगर के समीप विद्युच्चर मुनि घोर उपसर्ग सहन कर मुक्त हुए (हरिषेण)। तामलिंद्री ताम्रलिप्ति का ही रूपान्तर प्रतीत

* शिलालेखों के शीर्षकों में स्थान का नाम तवनन्दी दिया गया है जो गलत प्रतीत होता है।

होता है। बंगाल के दक्षिणभाग में रूपनारायण नदी के किनारे स्थित तामलुक ही प्राचीन ताम्रलिप्ति है। यह पुरातन समय में प्रसिद्ध बन्दरगाह था तथा कुछ समय तक वंग प्रदेश की राजधानी था। जैन श्रमणों की तामलित्तिया शाखा का उल्लेख कल्पसूत्र में आता है। इस समय यह नगर तीर्थरूप में प्रसिद्ध नही है। अधिक विवरणार्थ द्रष्टव्य–भारत के प्राचीन जैन तीर्थ पृ. ३२।

तारंगा—रूपान्तर–तारापुर, तारउर, तारणगढ। तारापुर नगर के निकट वरदत्त, वरांग तथा सागरदत्त और साढेतीन कोटि मुनि मुक्त हुए (निर्वाणकाण्ड, उदयकीर्ति, मेघराज, गुणकीर्ति, दिलसुख)। चिमणापंडित, ज्ञानसागर, तथा सुमतिसागर ने यहां कोटिशिला का उल्लेख किया है, वरदत्त आदि का नहीं। देवेंद्रकीर्ति वरदत्त और कोटिशिला दोनों का उल्लेख करते हैं। जयसागर, सोमसेन और श्रुतसागर ने केवल नामोल्लेख किया है। तारंगा पर्वत गुजरात के उत्तर भाग में है। पश्चिम रेलवे के मेहसाणा जंकशन से तारंगा हिल स्टेशन तक रेलमार्ग है। स्टेशन के समीप धर्मशाला है। यहां से ३ मील दूर पहाड है। पहाड पर धर्मशाला और १६ मंदिर हैं जिन में दो दिगम्बर संप्रदाय के हैं, एक सं. १६११ का और दूसरा सं. १९२३ का है। सोमप्रभ के कुमारपालप्रतिबोध (पृ. ४४३) के अनुसार तारापुर नाम का कारण यह है कि यहां वत्सराज ने तारा देवी का मंदिर बनवाया था। उसी ने वहां सिद्धायिका का मंदिर बनवाया, यह दिगम्बरों के अधिकार में था, तब राजा कुमारपाल के आदेश से दण्डनायक अभयदेवने अजितनाथ का बडा मंदिर बनवाया। इस से स्पष्ट है कि तारापुर यह नाम वत्सराज के समय से अर्थात आठवीं सदी से रूढ हुआ है। जटासिंहनंदि के अनुसार वरदत्त का निर्वाणस्थान मणिमान पर्वत पर था, वहीं वरांग का स्वर्गवास हुआ था। वे मणिमान पर्वत को सरस्वती नदी और आनर्तपुर के समीप बतलाते हैं। आनर्तपुर इस समय वडनगर कहलाता है (भारत के प्राचीन जैन तीर्थ पृ. ५२), यह तारंगाहिल स्टेशन से १६ मील दूर स्टेशन है। सरस्वती नदी भी यहां से बहुत दूर नहीं है। अतः वर्तमान तारंगा को

यही प्राचीन नाम मणिमान था ऐसा प्रतीत होता है*। द्रष्टव्य—जैनतीर्थयात्रादर्शक पृ. ३९, जैन तीर्थोनो इतिहास (न्या.) पृ. १९२।

तिलकपुर—यहां चन्द्रप्रभ का मंदिर है (मेघराज, गुणकीर्ति), यह चन्द्रप्रभमंदिर पश्चिम समुद्र के तीर पर है (उदयकीर्ति)। पश्चिम समुद्र के तीर के चन्द्रप्रभ की प्रशंसा मदनकीर्ति ने भी की है यद्यपि वे तिलकपुर नाम का उल्लेख नही करते। मदनकीर्ति का यह श्लोक इस चन्द्रप्रभ मंदिर के जीर्णोद्धार का वर्णन करनेवाले शिलालेख में उद्धृत मिलता है। यह शिलालेख सौराष्ट्र में वेरावल के समीप प्रभासपाटन से प्राप्त हुआ है जो वस्तुतः पश्चिमसमुद्र के तीरपर है। अतः तिलकपुर इसी का नामान्तर प्रतीत होता है। उक्त शिलालेख विक्रम की तेरहवीं सदी का है। इस का हमने कुछ वर्ष पहले संपादन किया था (एपिग्राफिया इन्डिका भा. ३३ पृ. ११७) तथा इस का परिचय अन्यत्र भी हमने दिया है (अनेकान्त वर्ष १६ पृ. ७३)। इस समय प्रभासपाटन में एक बडा श्वेतांवर मंदिर है; सोमनाथ के प्रसिद्ध मंदिर से यह कोई एक फर्लांग दूर है। यह मन्दिर चन्द्रप्रभ का ही है (जैन तीर्थोनो इतिहास (न्या.) पृ. १३२।

तुंगी—रूपान्तर मांगीतुंगी, तुंगिका। इस पर्वत पर बलभद्र मुक्त हुए (पूज्यपाद)। श्रीकृष्ण की मृत्यु के बाद बलराम ने यहां उन

---

* पं. प्रेमीजीने तारंगा तथा आनर्तपुर का कोई मेल नही बैठता यह निष्कर्ष निकाला था क्यों कि आनर्त की मुख्य नगरी द्वारका है इस भागवत के कथन पर उन का ध्यान केन्द्रित था (जैन साहित्य और इतिहास पृ. ४२६), आनर्तपुर = वडनगर की एकता पर उन का ध्यान नही गया था। वरांगचरित के अनुसार वरांग का स्वर्गवास हुआ और निर्वाणकांड के अनुसार उन का निर्वाण हुआ इस विरोध पर भी उन्हों ने जोर दिया है। किन्तु स्वर्गवास और निर्वाण का यह विरोध इतना महत्त्व का प्रतीत नही होता। कुछ अन्य कथाओं में भी इस तरह के परस्पर भिन्न कथन मिलते हैं। उदाहरणार्थ—हरिषेण ने चाणक्य की सिद्धि का वर्णन किया है (बृहत्कथाकोश कथा १४३), अन्य लेखक उन का स्वर्गवास हुआ यह मानते हैं।

का दाहसंस्कार किया, कुछ वर्ष बाद यहीं बलराम दीर्घ तपस्या कर के स्वर्गवासी हुए (जिनसेन, हरिषेण, अभयचन्द्र, कमल)। राम, हनुमान, सुग्रीव, गवय, गवाक्ष, नील, महानील आदि ९९ कोटि मुनि यहां मुक्त हुए (निर्वाणकाण्ड, उदयकीर्ति, गुणकीर्ति मेघराज, आदि)*। श्रुतसागर, गंगादास, देवेंद्रकीर्ति तथा मेरुचंद्र के उल्लेख यात्रासंबंधी हैं। अभयचन्द्र और कमल कान्हासुत के गीतों में राम आदि की मुक्ति का भी उल्लेख है, किन्तु श्रीकृष्ण के मृत्यु और बलराम के स्वर्गवास की कथा ही उन्हों ने विस्तार से बताई है। यह पर्वत घने जंगल में है इसलिए इस के प्रदेश के नाम के बारे में मतभेद है। श्रुतसागर इसे आभीरदेश में बतलाते हैं, तो देवेन्द्रकीर्ति भागलदेश में। अभयचन्द्र और कमल ने इस के समीप जैतापुर का उल्लेख किया है; तो देवेंद्रकीर्ति ने महेन्द्रपुरी का। अन्य उल्लेखकर्ता हैं– ज्ञानसागर, चिमणापंडित, सोमसेन, जयसागर, सुमतिसागर, दिलसुख व कवींद्रसेवक। यह पर्वत महाराष्ट्र के धूलिया (पश्चिम खानदेश) जिले में है। यह पश्चिम रेलवे के सूरत –भुसावल मार्ग के चिंचपाडा स्टेशन से ३५ मील दूर है तथा मध्य रेलवे के मनमाड जंकशन से ५४ मील दूर है। चिंचपाडा से पीपलनेर हो कर मार्ग है और मनमाड से मालेगांव–सटाणा हो कर मार्ग है। धूलिया से साकरी होकर भी एक मार्ग है। यहां मांगी और तुंगी नाम के दो पहाड पासपास हैं। तुंगी कुछ ऊंचा है। दोनों में कई मुनियों के चरणचिन्ह व लेख आदि हैं। एक लेख सं. १४४३ = सन १३८७ का है (जैन साहित्य और इतिहास पृ. ४३४–३६)। द्रष्टव्य– जैनतीर्थयात्रादर्शक पृ. १०१।

तूर्णीगति—इस महान पर्वत पर जम्बुमाली मुनि का स्वर्गवास हुआ (रविषेण)। अन्य विवरण अज्ञात है।

तेर—यहां के वर्धमान (महावीर) जिन को मेघराज, ज्ञानसागर तथा जयसागर ने वंदन किया है। महाराष्ट्र के उस्मानाबाद जिलेमें

---

* उत्तरपुराण के अनुसार राम आदि का निर्वाण सम्मेद शिखर से हुआ यह आगे बताया है।

मध्य रेलवे के लातूर-कुर्डुवाडी मार्ग पर यह स्टेशन है। स्टेशन से २ मील पर गांव है। महावीर का उपर्युक्त मन्दिर अभी विद्यमान है। करकंडु राजा द्वारा धाराशिव के गुहामंदिरों के निर्माण की जो कथा है उस में तेर नगर में करकंडु के राज्य का भी उल्लेख आता है (बृहत्कथाकोष कथा ५६)। इस का प्राचीन नाम तगरपुर था। महाराष्ट्र के नौवीं – ग्यारहवीं सदी के शिलाहारवंशीय राजा तगरपुर-वराधीश्वर कहलाते थे। द्रष्टव्य – जैनतीर्थयात्रादर्शक पृ. १८४।

तोणिमत्—द्रोणगिरि देखिए।

त्रिपुरी—तिउरी – यहां के त्रिलोकतिलक नामक ऊंचे जिन-बिम्ब को उदयकीर्ति ने वन्दन किया है। अन्य किसी लेखक ने इस का उल्लेख नही किया है। त्रिपुरी पुरातन नगर था। पहली – दूसरी सदी से तेरहवीं सदी तक यह संपन्न था। डाहल प्रदेश के कलचुरि-वंश के राजाओं की यह राजधानी थी। इस के ध्वंसावशेष मध्यप्रदेश में जबलपुर शहर से सात मील पर हैं, इस समय इस ग्राम का नाम तेवर है। यहां से कलचुरियुग की – ११ वीं – १२ वीं सदी की कई सुन्दर जिनमूर्तियां प्राप्त हुई हैं जिनमें से कुछ जबलपुर के मन्दिरों में और कुछ वहां के संग्रहालय में रखी गई हैं।

दण्डात्मक—इस का उल्लेख पूज्यपाद ने किया है। अन्य विवरण ज्ञात नहीं है। यह नाम दण्डकारण्य से मिलताजुलता अवश्य है।

दत्तारो—यहां के पार्श्वनाथमन्दिर का उल्लेख ज्ञानसागर ने किया है। भद्रिलपुर के वर्णन में आगे दंतारा ग्राम का उल्लेख किया है। संभवतः दत्तारो और दंतारा एकही है।

दिलोद—यह राय देश में है, यहां नवखंडपार्श्वनाथ का मन्दिर है (ज्ञानसागर)।

देवावतार—यह तीर्थ पूर्वमालव प्रदेश में है। राजकुमार लोह-जंघ श्रीकृष्ण और जरासंध के बीच सन्धि कराने के लिए जाते समय यहां रुका था, तब तिलकानंद और नन्दक नाम के मुनियों को उस ने आहारदान दिया, दान का अभिनन्दन करने के लिए देवगण वहां

उपस्थित हुए अतः वह स्थान देवावतार तीर्थ के नाम से प्रसिद्ध हुआ (जिनसेन)। वर्तमान समय में यह प्रसिद्ध नही है।

द्रोणगिरि—फलहोडी ग्राम के पश्चिम में द्रोणगिरि के शिखर से गुरुदत्त आदि मुनि मुक्त हुए (निर्वाणकाण्ड)। श्रुतसागर ने द्रोणीगिरि का नामोल्लेख किया है। गुणकीर्ति द्रोणगिरि और गुरुदत्त का उल्लेख नहीं करते किंतु फलहोडी ग्राम में ३।। कोटि मुनियों की मुक्ति बतलाते हैं। चिमणापंडित ने द्रोणगिरि और गुरुदत्त का उल्लेख किया है किन्तु फलहोडी के स्थान पर बडग्राम लिखा है। शिवार्य ने दोणिमंत पर्वत पर गुरुदत्त के घोर उपसर्ग सहन कर मुक्त होने का उल्लेख किया है। हरिषेण इस दोणिमंत शब्द का अनुवाद तोणिमत् करते हैं तथा इसे लाट प्रदेश में चन्द्रपुरी के दक्षिणपश्चिम में बतलाते हैं। हमारा अनुमान है कि निर्वाणकाण्ड का द्रोणगिरि ही यह दोणिमंत है क्यों कि दोनों में गुरुदत्त का उल्लेख है*। पूज्यपाद द्वारा उल्लिखित द्रोणीमत् भी यही हो सकता है। हरिषेण के कथनानुसार यह पर्वत लाट प्रदेश में अर्थात वर्तमान गुजरात के दक्षिण भाग में होना चाहिए। किंतु वहां ऐसे किसी तीर्थ की प्रसिद्धि नही है। फलहोडी नाम से मिलता जुलता एक तीर्थ फलोधी राजस्थान के दक्षिण-पश्चिम में स्थित है, यहां पार्श्वनाथ का श्वताम्बर मंदिर प्रसिद्ध है, किन्तु इस के समीप भी द्रोणगिरि की प्रसिद्धि नही है। अतः यह तीर्थ वर्तमान में विलुप्त समझना चाहिए। आधुनिक समय में द्रोणगिरि नामक एक तीर्थ मध्यप्रदेश में सेंदपा ग्राम के निकट है, सागर शहर से दौलतपुर होते हुए अथवा टीकमगढ से हटापुर-भगवा होते हुए यहां तक मार्ग है। यहां ग्राम में एक और पहाडी पर २४ मंदिर हैं। इस का निर्वाणकाण्ड अथवा हरिषेण द्वारा वर्णित द्रोणगिरि से कोई संबंध प्रतीत नहीं होता। अधिक विवरणार्थ द्रष्टव्य–जैन साहित्य और इतिहास पृ. ४४२–४३, जैनतीर्थयात्रादर्शक पृ. ७६।

द्वारावती—द्वारका – गुणभद्र के उत्तरपुराण के अनुसार यहां

---

* हरिषेण की इस कथा पर टिप्पण में डॉ. उपाध्ये सूचित करते हैं कि प्रभाचंद्र के गद्यकथाकोष में दोणिमंत का अनुवाद द्रोणीमत् ही किया गया है।

बाईसवे तीर्थंकर श्रीनेमिनाथ का जन्म हुआ था[§]। यह प्राचीन नगर सौराष्ट्र की राजधानी था। जरासंध के भय से यादव गण जब मथुरा – शूरसेन प्रदेश छोडने को विवश हुए तब उन्होंने देशत्याग कर यहां अपनी राजधानी बनाई। श्रीकृष्ण और बलराम ने यहीं दीर्घकाल राज्य किया*। वर्तमान द्वारका नगर सौराष्ट्र के पश्चिमी छोर पर है, वहां हिंदुओं के कई कृष्णमंदिर प्रसिद्ध हैं। किंतु पुरातन ग्रन्थों के वर्णनानुसार द्वारका रैवतक पर्वत (गिरनार) और प्रभासपाटन (वेरावल) के बीच अवस्थित थी और द्वीपायन के मुनि क्रोध से श्रीकृष्ण के जीवनकाल में ही यह नष्ट हो गई थी। वर्तमान द्वारका में जैनों के कोई स्थान नहीं हैं। प्राकृत में इस के लिए बारवई शब्द का प्रयोग होता था। द्रष्टव्य– जैनतीर्थयात्रादर्शक पृ. ४२, जैनतीर्थोनो इतिहास (न्या.) पृ. ११६।

धारा—यहां के नवखण्ड पार्श्वनाथ का मदनकीर्ति ने वर्णन किया है। इस समय यह नगर मध्यप्रदेश में इन्दौर से ४० मील दूर स्थित है। यहां एक मंदिर विद्यमान है। परमार राजा भोजदेव के समय से – ग्यारहवीं सदी से कोई पांच सदियों तक यह मालव प्रदेश की राजधानी रही है। देवसेन, माणिक्यनंदि, प्रभाचंद्र, श्रीचंद्र, नयनंदि, आदि आचार्यों ने यहां कई ग्रन्थों की रचना की थी। तेरहवीं सदी में पं. आशाधर ने यहां अध्ययन किया था। चौदहवीं सदी में भ. प्रभाचंद्र यहां गये थे। द्रष्टव्य-जैनतीर्थयात्रादर्शक पृ. २०५, जैन साहित्य और इतिहास पृ. २४४, जैनतीर्थोनो इतिहास (न्या.) पृ. ४०७।

धाराशिव—यहां की गुहामंदिर – स्थित पार्श्वनाथमूर्ति आगलदेव, अग्गलदेव या अर्गलदेव के नाम से प्रसिद्ध थी। निर्वाणकाण्ड, और विश्वभूषण ने केवल अग्गलदेव नाम का उल्लेख किया है।

---

§ जिनसेन और रविषेण ने नेमिनाथ का जन्मस्थान शौरिपुर बतलाया है।

*गुणभद्र ने दूसरे, तीसरे और चौथे अर्धचक्रवर्ती द्विपृष्ठ, स्वयंभू और पुरुषोत्तम की राजधानी में द्वारावती बतलाई है (उत्तरपुराण सर्ग ५८, ५९,६०)। रविषेण–जिनसेन ने इस के स्थान में हस्तिनापुर का उल्लेख किया है। जिनसेन के हरिवंशपुराण से प्रतीत होता है कि द्वारावती की स्थापना श्रीकृष्णने ही की थी।

गुणकीर्ति, ज्ञानसागर और जयसागर ने धाराशिव और अग्गलदेव दोनों का एकत्रित उल्लेख किया है। उदयकीर्ति अग्गलदेव को करकंडराज-निर्मित वतलाते हैं। हरिषेण ने अग्गलदेव नाम नही वतलाया है किन्तु धाराशिव के निकट पहाडी में करकंडु राजा द्वारा गुहामंदिरों के निर्माण की कथा विस्तार से वतलाई है। कनकामर मुनि के अपभ्रंश करकंडचरिउ में भी यह कथा विस्तार से आती है। इस के अनुसार ये गुहामंदिर बहुत प्राचीन समय में विद्याधर राजा नील और महानील ने वनवाये थे, करकंडु राजा ने पार्श्वनाथ का दर्शन किया। जव उसने मूर्ति के पादपीठ में स्थित एक गांठ तोडने का प्रयत्न किया तव उस से जलधारा निकली जिस से पूरी गुहा डूव गई। तव राजा ने उस गुहा को वंद कर तीन नये गुहामंदिर वनवाये। धाराशिव इस समय भी अच्छा नगर है – अव इस का नाम उस्मानावाद है, महाराष्ट्र प्रदेश के इसी नाम के जिले का यह मुख्य स्थान है। मध्य रेलवे के एडसी स्टेशन से यहां तक मोटर मार्ग है। उक्त गुहामंदिर भी धाराशिव के निकट विद्यमान हैं*। धाराशिव नगर में भी मंदिर है। द्रष्टव्य – जैनतीर्थयात्रादर्शक पृ. १८२।

धुलेव–धूलिया—यहां के ऋषभदेवमंदिर का उल्लेख सुमतिसागर जयसागर और ज्ञानसागर ने किया है। देवेंद्रकीर्ति ने शक १६५१ में यहां का दर्शन किया था। यहां ऋषभदेव की पूजा में केशर का विशेष प्रयोग किया जाता है जिस से इस मूर्ति को और स्थान को केशरियाजी कहते हैं। ग्राम का नाम इन दिनों धूलिया से वदल कर ऋषभदेव कर दिया गया है। यह स्थान राजस्थान में उदयपुर के दक्षिण में ४० मील पर है। गुजरात के हिम्मतनगर से डूंगरपुर होकर भी यहां जा सकते हैं। यहां ऋषभदेव के मुख्य मंदिर में कई शिलालेख हैं, इन का विवरण साप्ताहिक 'वीर' वर्ष २ में प्रकाशित हुआ था। इन में सं. १५७२ = सन १५१६ में भ. यशःकीर्ति का, सं. १८३२ में भ. चंद्रकीर्ति का तथा सं. १८६३ में भ. यशःकीर्ति का उल्लेख करनेवाले लेख भी हैं।

---

* कनकामरकृत करकंडचरिउ की प्रस्तावना में डॉ. हीरालाल जैन ने इन मंदिरोंका सचित्र वर्णन विस्तार से दिया है।

इस समय भी यहां काष्ठासंघ के भ. यशःकीर्ति का मठ है, यहां एक चैत्यालय तथा हस्तलिखित ग्रंथों का संग्रह भी है। इस क्षेत्र के अधिकार के संबंध में दिगम्बर और श्वेताम्बरों में विवाद चलता रहा है, अब इस की व्यवस्था राजस्थान राज्यसरकार का देवस्थान विभाग देखता है। यहां मुख्य मंदिर से आधा मील दूर वह स्थान है जहां सर्व प्रथम धूलियानामक भील को भूमि में यह ऋषभदेव की मूर्ति मिली थी। वहां चरणपादुका स्थापित है। जैनेतर लोग भी उत्साह से इस तीर्थ का दर्शन करते हैं। द्रष्टव्य–जैनतीर्थयात्रादर्शक पृ. ४, जैनतीर्थोंनो इतिहास (न्या.) पृ. २७६।

नर्मदातट—रेवातट देखिए।

नलोड़—गुजरात के इस ग्राम में पद्मावती का महिमायुक्त मंदिर है (ज्ञानसागर)। श्वे. साधु सौभाग्यविजय की तीर्थमाला में नडोर पद्मावती का उल्लेख है। (प्राचीन तीर्थमाला संग्रह भा. १ पृ. ९७)। इसे अब नरोडा कहते हैं। यह अहमदाबादसे छह मील दूर है। मन्दिर इस समय श्वेताम्बर अधिकार में है (जैनतीर्थोंनो इतिहास (न्या.) पृ. १८६।

नागद्रह—नागह्रद–नागेंद्र–यहां के पार्श्वनाथमंदिर का उल्लेख निर्वाणकाण्ड, मदनकीर्ति, उदयकीर्ति, गुणकीर्ति तथा मेघराज ने किया है। यह तो स्पष्ट ही है कि नागद्रह का देशभाषाओं में रूपान्तर नागदा हुआ होगा। किन्तु नागदा नाम के कई स्थान हैं। एक नागदा पश्चिम रेलवे के रतलाम कोटा मार्ग पर जंकशन है, यह मध्यप्रदेश में है। एक नागदा ग्राम सौराष्ट्रमें भावनगर के समीप है। तीसरा नागदा उदयपुर से तेरह मील दूर है।

मदनकीर्ति के वर्णन में नागद्रह के पार्श्वनाथ को अलक्ष्यमूर्ति कहा है तथा ब्राह्मणों, वैष्णवों, बौद्धों और माहेश्वरों द्वारा अपने अपने देव के रूप में उनकी पूजा का कथन है। इस से प्रतीत होता है राजस्थान में उदयपुर के समीप एकलिंगजी का जहां देवस्थान है वह नागदा ही नागद्रह होगा। अलक्ष्यमूर्ति विशेषण से प्रतीत होता है कि यहां पार्श्वनाथ की शरीराकृति मूर्ति न होकर चरणचिन्ह या उस जैसा दूसरा कोई प्रतीक रहा होगा। श्वेताम्बर तीर्थमालाओं में भी इस का उल्लेख है

(प्राचीन तीर्थमालासंग्रह भा. १ पृ. १११,१९९, १५१, ७१,५५)। इस में पहला (पृ. १११ का) उल्लेख शीलविजय की तीर्थमाला का है, इस में नागद्रह के साथ एकलिंग महादेव का स्पष्ट उल्लेख है। वर्तमान समय में यहां एक श्वे. मन्दिर है। यह स्थान अदबदजी (अद्भुतजी) नाम से भी जाना जाता है । अन्य कई मन्दिरों के अवशेष यहां पाये जाते हैं (जैनतीर्थोनो इतिहास (न्या.) पृ. ३८४)।

नागपंथ—इस का उल्लेख सुमतिसागर ने किया है। नाग और गज एकार्थक शब्द हैं अतः यह गजपंथ का पर्याय हो सकता है किन्तु सुमतिसागर ने गजपंथ का भी अलग उल्लेख किया है। वैसे नागपंथ का अन्य कोई विवरण प्राप्त नही है।

नागपुर—हस्तिनापुर देखिए।

नागफणी—मदनकीर्ति के वर्णनानुसार यह ग्राम मेदपाट (मेवाड) प्रदेश में है तथा यहां एक वृद्ध अर्जिका के स्वप्न के अनुसार मल्लिनाथ की मूर्ति प्राप्त हुई थी। यह स्थान ईडर से केशरियाजी के मार्ग पर मेवाड के दक्षिण-पश्चिमी कोने में चूंडावाडा से एक मील दूर आगलाघाट की पहाडी में है, यहां धरणेन्द्र-सहित पार्श्वनाथ का मंदिर राणा प्रतापसिंह का बनवाया हुआ है। – जैनतीर्थोनो इतिहास (न्या.) पृ. २३१ ।

निर्वाणगिरि—रविषेण के कथनानुसार यह श्रीशैल (हनूमान) का निर्वाणस्थान है। पं. प्रेमीजी इसे सम्मेदशिखर का नामान्तर मानते हैं (जैन साहित्य और इतिहास पृ. ४३५) जो गुणभद्र के उत्तरपुराण के कथन के अनुकूल है। निर्वाणकाण्ड में हनूमान का निर्वाण तुंगीगिरि से कहा है यह ऊपर बताया ही है।

पइट्ठाण—प्रतिष्ठान देखिए।

पंचशैल—राजगृह देखिए।

पर्वतपार्श्वनाथ—एलूर देखिए।

पाटलिपुत्र—रूपान्तर – पाडलिपुर, कुसुमपुर, पुष्पपुर। यहां सुदर्शन श्रेष्ठी ने घोर उपसर्ग सहन कर केवलज्ञान प्राप्त किया था

(ज्ञानसागर) यहां जमीन से पुष्पदन्तजिन की मूर्ति प्राप्त हुई थी (मदनकीर्ति)। बिहार की राजधानी पटना ही प्राचीन पाटलिपुत्र है। यहां के गुलजार बाग नामक विभाग में मंदिर है जहां सुदर्शन श्रेष्ठी की चरणपादुकाएं स्थापित हैं। शहर में अन्य पांच मंदिर० भी हैं। पाटलिपुत्र नगर की स्थापना ईसापूर्व पांचवीं सदी में राजा कूणिक — अजातशत्रु ने की थी तथा उस के पुत्र उदायी के समय से यह मगध के साम्राज्य की राजधानी रही है। मौर्य और गुप्त वंश के विख्यात सम्राटों ने यहीं निवास किया था। जैन आगमों की पहली वाचना स्थूलभद्र आचार्य के नेतृत्व में यहीं हुई थी। आचार्य उमास्वाति ने तत्त्वार्थाधिगमभाष्य की रचना भी यहीं की थी। जिनप्रभसूरि ने इस के विषय में एक कल्प लिखा है (विविधतीर्थकल्प पृ. ७०)। अधिक विवरण के लिए देखिए — प्राचीन तीर्थमाला संग्रह भाग १, पृ. १५, भारत के प्राचीन जैन तीर्थ पृ.२१-२२, जैनतीर्थयात्रादर्शक पृ. ११८।

पाण्डुकगिरि— राजगृह के समीप की पांच पहाडियों में यह एक है। यह नगर के ईशान्य में वृत्ताकार अवस्थित है (यतिवृषभ, जिनसेन)। यहां गन्धमादन नामक मुनि मुक्त हुए थे (हरिषेण)। अधिक विवरण राजगृह के वर्णन में देखिए।

पाली—यह चंदेरी के पास है, यहां शांतिनाथ का मंदिर है (ज्ञानसागर), इस शांतिनाथमंदिर में पूज्यपाद का नेत्ररोग दूर हुआ था (सुमतिसागर), यहां आदिनाथमंदिर है (जयसागर)। मध्य रेलवे के ललितपुर स्टेशन से चंदेरी तथा पाली तक मार्ग है। यह झांसी जिले में है।

पावागढ—पावागिरि—रामचंद्र के दो पुत्र तथा लाट के पांच कोटि राजा यहां से मुक्त हुए (निर्वाणकाण्ड, उदयकीर्ति, गुणकीर्ति, मेघराज, जिनसागर)*। श्रुतसागर ने लाट देश में पावागिरि का नामोल्लेख किया है। ज्ञानसागर ने गुज्जरदेश में पावागढ की वंदना की है।

---

* रविषेण ने या गुणभद्र ने रामके पुत्रों की कथाओं में उन के निर्वाण स्थान का कोई उल्लेख नही किया है।

चिमणापंडित के कथनानुसार यहां गंगादास ने मंदिर बनवाये थे। पश्चिम रेलवे के बडोदा-गोधरा मार्ग पर चांपानेर रोड जंकशन है, यहां से पानी तक छोटा रेलमार्ग है, उस पर पावागढ स्टेशन है। पावागढ विशाल दुर्ग है। दुर्ग में चार मंदिर अच्छी स्थिति में हैं और अन्य कई भग्न स्थिति में है। सब से ऊंचे स्थान पर कालिका-अंबिका देवी का एक प्रसिद्ध मंदिर हैं जो हिंदुओं का मुख्य यात्रास्थान है। श्वेताम्बरों में भी किसी समय यह प्रसिद्ध तीर्थ था। महामंत्री तेजपाल ने तेरहवीं सदी में यहां सर्वतोभद्रमंदिर बनवाया था। किंतु अब यहां श्वेताम्बर मंदिर नहीं हैं। यहां के मूर्तिलेखों में सं. १६४३ में भ. वादिभूषण, सं. १६४५, सं. १६६२ और सं. १६६५ के लेख भी हैं (जैन साहित्य और इतिहास पृ. ४२७-२८)। द्रष्टव्य-जैनतीर्थयात्रादर्शक पृ. ५५, जैन तीर्थोनो इतिहास (न्या.) पृ. २५९।

पावागिरि—चलना नदी के तीरपर पावागिरि से सुवर्णभद्र आदि चार मुनि मुक्त हुए (निर्वाणकाण्ड, चिमणापंडित)। श्रुतसागर तथा गुणकीर्ति ने चलनानदीतीर का उल्लेख किया है किन्तु वे पावागिरि या सुवर्णभद्र का उल्लेख नही करते। पूज्यपाद ने नदीतट से सुवर्णभद्र की मुक्ति का उल्लेख किया है किन्तु चलना अथवा पावागिरि का नाम नही दिया है। आधुनिक समय में ऊन ग्राम को पावागिरि मान लिया गया है किन्तु यह मान्यता निराधार है क्यों कि इस ग्राम के पास कोई नदी नहीं है। ऊन का वर्णन पहले कर चुके हैं। पं. प्रेमीजी ने अनुमान किया है कि मध्यप्रदेश में टीकमगढ से तीन मील दूर स्थित पपौरा अथवा तालबेट स्टेशन (ललितपुर – झांसी मार्ग पर स्थित) से छह मील दूर पवा ये दो क्षेत्र हैं, शायद इन में कोई पुरातन समय में पावागिरि कहलाता हो (जैन साहित्य और इतिहास पृ. ४३०)। पपौरा में ८२ मंदिर हैं, यहां की दो प्रतिमाएं संवत् १२०२ की चंदेल राजा मदनवर्मा के समय की हैं। पवा में भूमिगृह में मंदिर है, इस में सं. १३४२ की सात प्रतिमाएं हैं (जैन तीर्थयात्रा दर्शक पृ. ८५-८६)। इन दोनों स्थानों के समीप नदियाँ हैं, यद्यपि चलना नाम की अब प्रसिद्धि नही है।

पावापुर—यह भगवान महावीर का निर्वाणस्थान है। इस के उल्लेखकर्ता हैं – यतिवृषभ, पूज्यपाद, जटासिंहनंदि, रविषेण, जिनसेन, गुणभद्र, मदनकीर्ति, निर्वाणकाण्ड, उदयकीर्ति, श्रुतसागर, गुणकीर्ति, जयसागर, ज्ञानसागर, मेघराज, सुमतिसागर, सोमसेन, चिमणापंडित, व दिलसुख। पूज्यपाद, गुणभद्र, चिमणापंडित और ज्ञानसागर ने यहां के सरोवर का भी उल्लेख किया है। ज्ञानसागर इसे मगध देश में बतलाते हैं। वर्तमान पावापुर विहार के दक्षिण भाग में विहार – शरीफ स्टेशन से ८ मील दूर है। पटना-भागलपुर रेलमार्ग के बखतियारपुर जंकशन से विहार-शरीफ तक छोटा रेलमार्ग है। विहार – शरीफ से नवादा तक के मोटरमार्ग से पावापुर दो मील दूर पडता है। यहां एक बडे तालाब के बीच मंदिर है, यहां भगवान महावीर, गणधर गौतम और सुधर्म स्वामी के चरणचिन्ह स्थापित हैं। तालाब के निकट ग्राम में दिगम्बर और श्वेताम्बर दोनों की धर्मशालाएं व मंदिर हैं। पावापुर के विषय में जिनप्रभसूरि ने एक कल्प लिखा है (विविधतीर्थकल्प पृ. ३४) तथा अन्य श्वेताम्बर यात्रियों ने भी विविध उल्लेख किये हैं (प्राचीन तीर्थमाला संग्रह भा. १ पृ. १६)।

यद्यपि जैन यात्रियों में इस स्थान के बारे में एकमत है तथापि इतिहासज्ञ इसे वास्तविक नहीं मानते। प्राचीन ग्रन्थों में भगवान महावीर के निर्वाणस्थान को मल्ल और लिच्छवि गणराजाओं के प्रदेश में, बुद्ध के निर्वाणस्थल कुशीनगर के समीप बतलाया है। अतः प्राचीन पावापुर उत्तर प्रदेश के पूर्वी छोर पर गोरखपुर जिले में पपउर ग्राम से अभिन्न जान पडता है, यह कुशीनगर से १२ मील दूर है (जैन साहित्य और इतिहास पृ. ४२४, दि एज ऑफ इम्पीरियल यूनिटी पृ. ८)। द्रष्टव्य—जैन तीर्थयात्रादर्शक पृ. ११९, जैन तीर्थोनो इतिहास (न्या.) पृ. ४५९, भारत के प्राचीन जैन तीर्थ पृ. २३।

पिठरक्षत—नर्मदा के तीर पर इस स्थान पर कुम्भकर्ण मुक्त हुए (रविषेण)। वर्तमान समय में यह स्थान ज्ञात नहीं है। निर्वाणकाण्ड के अनुसार कुम्भकर्ण का निर्वाणस्थान चूलगिरि है यह पहले बता चुके हैं।

पुष्पपुर—पाटलिपुत्र देखिए।

पृथुसारयष्टि—इस का उल्लेख पूज्यपाद ने किया है। अन्य विवरण ज्ञात नही। यदि यष्टि का वांस यह अर्थ करें तो शायद वंशस्थल से इस को अभिन्न माना जा सकता है। वंशगिरि = कुंथुगिरि के बारे में पहले चर्चा कर चुके हैं।

पैठन—प्रतिष्ठान देखिए।

पोदनपुर—पोयणपुर, पोयनाउर–यहां बाहुबली स्वामी की ५२५ धनुष ऊंची मूर्ति थी (निर्वाणकाण्ड)। पोदनपुर के बाहुबली की वंदना मदनकीर्ति, उदयकीर्ति, गुणकीर्ति व मेघराज ने भी की है। पूज्यपाद ने सिद्धक्षेत्रों में इस का समावेश किया है। बाबू कामताप्रसादजी ने तथा पं. दरबारीलालजीने आंध्र प्रदेश के निजामाबाद जिले में स्थित बोधन नगर को प्राचीन पोदनपुर बतलाया है (शासनचतुस्त्रिंशिका पृ. २९, जैन ॲन्टीक्वेरी भा. ४ किरण ३)। इस में सन्देह नही कि दक्षिण में एक पोदनपुर था और वह वर्तमान बोधन हो सकता है। किन्तु बाहुबली से संबद्ध पोदनपुर यह नही हो सकता। श्वेताम्बर परम्परा में तक्षशिला (जो उत्तरपूर्वी सीमा प्रदेश में सिन्धु नदी के समीप अटक शहर के पास थी) नगर को प्राचीन पोदनपुर माना है*। विख्यात चीनी यात्री ह्यू एन त्सांग ने तक्षशिला के समीप सिंहपुर नामक स्थान का वर्णन करते हुए बतलाया है कि जैनों के प्रथम तीर्थंकर के ज्ञानप्राप्ति की स्मृति में वहां शिलालेख स्थापित किया था (बुद्धिस्ट रेकॉर्ड्स ऑफ दि वेस्टर्न वर्ल्ड भा. १ पृ. १४४)। उत्तरापथ के पोदनपुर का उल्लेख हरिषेण के बृहत्कथाकोष में भी मिलता है†, अतः इसे केवल श्वेताम्बरों की मान्यता नही कहा जा सकता। चामुण्डराय ने जब दसवीं सदी में श्रवणबेलगुल में बाहुबली की विशाल मूर्ति स्थापित की तब पोदनपुर बहुत दूर, दुर्गम था (जैन शिलालेख संग्रह भा. १ प्रस्तावना पृ. २३) यह बात उत्तरापथ

---

* विविधतीर्थकल्प पृ. २७– बाहुबलिणो तक्खसिला दिण्णा।

† कथा २५ श्लो. ३ तथोत्तरापथे देशे पोदनाख्ये पुरेऽभवत्। सिंहनादो नृपः श्रीमान् वैर्यनेकपकेसरी॥

के पोदनपुर के लिए ही सही हो सकती है, दक्षिण के बोधन के लिए नहीं। जैन दृष्टि में तक्षशिला का महत्त्व जिनप्रभसूरि के समय तक ज्ञात था (विविधतीर्थ कल्प पृ. २७ व ८५)। अतः प्राचीन ग्रन्थकारों की दृष्टि में तक्षशिला और बाहुबली का संबंध अधिक स्पष्ट प्रतीत होता है।

पोम्बुच्च—रूपान्तर होम्बुज, हुम्मच, हुमचा, हुंवस, पट्टिपोम्बुर्च। यहां पार्श्वनाथ और पद्मावती का प्रसिद्ध मंदिर है, पद्मावती की मूर्ति निर्गुंड वृक्ष के नीचे है (ज्ञानसागर, विश्वभूषण), यह मंदिर जिनदत्त राजा द्वारा स्थापित है (जिनसागर), पद्मावती की मूर्ति अम्बा और अम्बिका की मूर्तियों के बीच है, सिद्धान्तकीर्ति यहां के प्राचीन आचार्य थे (तोपकवि)। हुम्मच इस समय छोटासा गांव है, तथा मैसूर प्रदेश में शिमोगा जिले के नगर तालुके में स्थित है, शिमोगा से यहां तक मोटरमार्ग है। पद्मावती के प्राचीन मंदिर का जीर्णोद्धार कुछ ही वर्ष पूर्व संपन्न हुआ है। इस के अतिरिक्त दो विशाल मंदिर अच्छी स्थिति में हैं और अन्य कई भग्न मंदिर भी हैं। प्राचीन समय में नौवीं सदी से बारहवीं सदी तक यह सान्तर वंश के राजाओं की राजधानी थी जो अपने लिए पद्मावतीलब्धवरप्रसाद और पट्टिपोम्बुर्चपुरवरेश्वर विशेषणों का प्रयोग करते थे। यहां देवेन्द्रकीर्ति स्वामी का विशाल मठ है, इन का ताडपत्रीय शास्त्रभांडार समृद्ध है। यहां के १९ शिलालेख जैन शिलालेख संग्रह भा. २ व ३ में संकलित हैं, ये लेख नौवीं सदी से सोलहवीं सदी तक के हैं तथा इन से यहां के राजाओं, आचार्यों और मन्दिरों के बारे में विस्तृत जानकारी मिलती है (जैन शिलालेख संग्रह भा. ३ प्रस्तावना पृष्ठ १६१–६२)। द्रष्टव्य—जैनतीर्थयात्रादर्शक पृ. १६९।

प्रतिष्ठान—रूपान्तर पइट्ठाण, पैठण। यहां मुनिसुव्रत का प्रसिद्ध मंदिर है (सुमतिसागर, जयसागर)। यह मंदिर गौतमगंगा (गोदावरी) नदी के तीर पर है तथा मुनिसुव्रतजिन की स्थापना यहां राजा रामचंद्र ने की थी (ज्ञानसागर)। इस मंदिर को बारह दरवाजे हैं, यहां आदिनाथ और चंद्रप्रभ की मूर्तियां भी हैं (चिमणापंडित)।

पैठन इस समय भी अच्छा नगर है तथा महाराष्ट्र प्रदेश के औरंगाबाद जिले की इसी नाम की तहसील का मुख्य स्थान है, औरंगाबाद से यहां तक मोटरमार्ग है। उपर्युक्त मंदिर भी विद्यमान है। जिनप्रभसूरि ने इस के विषय में तीन कल्प लिखे हैं (विविधतीर्थकल्प पृ. ४७, ५९, ६१) जिन में यहां के प्राचीन राजा शालिवाहन की कथाएं दी हैं। यहां पादलिप्त आचार्य ने शालिवाहन की शिरोवेदना दूर की थी, यहीं शालिवाहन के आग्रह पर आचार्य कालक ने सांवत्सरिक पर्व की तिथि भाद्रपद शु. ५ के स्थान पर शु. ४ की थी, यह आचार्य भद्रबाहु का जन्मस्थान है, सिद्धसेन आचार्य का यहां स्वर्गवास हुआ ऐसी कथाएं भी श्वेताम्बर साहित्य में प्राप्त हैं (भारत के प्राचीन जैन तीर्थ पृ. ६४, प्रभावकचरित प्रकरण ८) श्वे. साधु शीलविजय ने भी इस का उल्लेख किया है (प्राचीन तीर्थमाला संग्रह भा. १, पृ. १२१)*।

प्रयाग—गंगा और यमुना के संगम पर स्थित इस नगर में एक पुरातन वटवृक्ष है, यहीं भगवान ऋषभदेव ने छह मास तक ध्यानसाधना की थी (ज्ञानसागर)। प्रयाग नगर का नाम मुगल बादशाहों के समय बदल कर इलाहाबाद रखा गया है। उपर्युक्त वटवृक्ष अक्षयवट कहलाता है तथा इस की अब भी हिन्दू पूजा करते हैं। किसी समय यहां ऋषभदेव की चरणपादुकाएं थीं किन्तु सोलहवीं सदी में राय कल्याण नामक सूबेदार ने उन्हें हटाकर वहां शिवलिंग स्थापित कर दिया (प्राचीन तीर्थमाला संग्रह भा. १ पृ. १०-११)। अति प्राचीन समय में प्रयाग का नाम प्रतिष्ठान था। श्वे. ग्रन्थों में इसे ही पुरिमताल नगर माना है जहां भगवान ऋषभदेव को केवलज्ञान प्राप्त हुआ था। जिनप्रभसूरि ने यहां शीतलनाथमंदिर का उल्लेख किया है (विविध तीर्थकल्प पृ. ८५) तथा यहां गंगा पार करते समय नौका डूबने से आचार्य एणिकापुत्र के उपसर्ग का और मुक्ति का भी उल्लेख किया है (वही पृ. ६८)। एणिकापुत्र की कथा हरिषेण के बृहत्कथाकोष में भी पाई जाती है। प्रयाग में

* प्रयाग का भी अतिप्राचीन नाम प्रतिष्ठान था, वह इस दक्षिण के प्रतिष्ठान से भिन्न है।

अब ४ दि. जैन मंदिर विद्यमान हैं। द्रष्टव्य– जैन तीर्थयात्रादर्शक पृ. १०८, जैन तीर्थोनो इतिहास (न्या.) पृ. ५४७।

बटकल— भटकल देखिए।

बडवानी—चूलगिरि देखिए।

बलाहक—राजगृह के समीप की पांच पहाडियों में यह एक है, यह नगर के वायव्य की ओर है। पूज्यपाद ने सिद्धक्षेत्रों में इस का भी अंतर्भाव किया है। अधिक विवरण के लिए राजगृह का वर्णन देखिए।

बारकूर—बारकुल इस रूप में ज्ञानसागर ने इस नगर का उल्लेख किया है तथा यहां सोलह मंदिर हैं ऐसा कहा है। यह नगर मैसूर प्रदेश के दक्षिण कनडा जिले में मंगलोर के उत्तर की ओर ५४ मील पर तथा उडिपि से ९ मील दूर है। यहां अब जैन लोग नही हैं किन्तु मन्दिरों के अवशेष हैं।

बावनगज—इस नाम से तीन स्थानों पर विशाल मूर्तियों को संबोधित किया जाता है—चूलगिरि (बडवानी), ग्वालियर तथा श्रवणबेलगोल। इन तीनों का अलग अलग वर्णन अन्यत्र दिया है।

बांसवाडा—जयसागर ने यहां वासुपूज्यजिन का उल्लेख किया है। यह नगर राजस्थान के दक्षिण भाग में है, इस भाग को पहले बागड कहा जाता था। डूंगरपुर तथा रतलाम से वहां तक मोटर-मार्ग हैं।

बिदुरे—मूडबिद्री देखिए।

बृहत्पुर—चूलगिरि देखिए।

बेदरी—मूडबिद्री देखिए।

बेलतंगडि—विश्वभूषण ने यहां के शान्तिनाथ जिन का उल्लेख किया है। यह नगर मैसूर प्रदेश के दक्षिण कनडा जिले की इसी नाम की तहसील का मुख्य स्थान है।

भटकल—पश्चिम समुद्र के तीर पर स्थित इस नगर में कई मंदिर हैं (ज्ञानसागर), यहां शान्तिनाथ का मंदिर है (विश्वभूषण)।

यह नगर मैसूर प्रदेश के उत्तर कनडा जिले की इसी नाम की तहसील का मुख्य स्थान है। यहां सन १५४५ तथा १५५६ के शिलालेख प्राप्त हुए हैं जिन में रानी चेन्नदेवी द्वारा दान तथा रानी भैरवदेवी के सेनापति नारणनायक द्वारा एक मंदिर के निर्माण का वर्णन है (जैनिज्म इन साउथ इण्डिया पृ. ३९५)। यहां तिम्मनायक ने रत्नत्रय मंदिर बनवाया था तथा देवराय द्वारा निर्मित चतुर्मुख मंदिर का जीर्णोद्धार किया था।

भद्रिका—भद्रिलपुर, भद्दिला, भद्दिया। इस नगर में दसवें तीर्थंकर श्रीशीतलनाथ का जन्म हुआ था (यतिवृषभ, जटासिंहनंदि, रविषेण, जिनसेन, गुणभद्र)। यह स्थान बिहार प्रदेश में गया शहर से ३८ मील दूर है, जीदापुर-ढोबीगांव-हटरगंज-हटवरिया हो कर इस का मार्ग है। इस के समीप कुलुहा पहाड नामक स्थान पर कई प्राचीन मंदिर और मूर्तियों के अवशेष हैं। ग्राम का नाम इस समय दंतारा कहा जाता है। *अधिक विवरण के लिए देखिए – प्राचीन तीर्थमाला संग्रह भा. १ पृ. २७–२८, जैन तीर्थयात्रादर्शक पृ. १२३–१२४, भारत के प्राचीन जैनतीर्थ पृ. २६।

मगसी—मक्सी–यहां पार्श्वनाथका प्रसिद्ध मंदिर है। सुमतिसागर, जयसागर, ज्ञानसागर तथा हर्ष ने इस का उल्लेख किया है। यह ग्राम मालवा में उज्जैन – भोपाल रेलमार्ग पर स्टेशन है, स्टेशन से २ मील पर मंदिर है। स्टेशन के पास तथा मंदिर के पास धर्मशालाएं हैं। यहां श्वेताम्बर और दिगम्बर दोनों यात्री आते हैं। श्वेताम्बर तीर्थमालाओं के उल्लेखों के लिए देखिए – प्राचीन तीर्थमाला संग्रह भा. १ पृ. ७१, ९८, ११२, १५१ आदि। जैनतीर्थयात्रादर्शक पृ. १२।

मंगलपुर—मंगलावती – यहां के अभिनन्दनजिन को मदनकीर्ति, निर्वाणकाण्ड, उदयकीर्ति तथा गुणकीर्ति ने वंदन किया है।

---

* ज्ञानसागर द्वारा वर्णित दत्तारो भी संभवतः यही है। कुछ लोगों ने मध्यप्रदेशस्थित भिलसा (विदिशा) नगर को भद्रिलपुर बतलाया है किन्तु यह निराधार कल्पना है।

जिनप्रभसूरि ने इस विषय में एक कल्प लिखा है (विविधतीर्थकल्प पृ. ५७) जिस से ज्ञात होता है कि यह स्थान मालवा में धाराउ ग्राम के पास था। वइज नामक वणिक ने पहले यहां वेदी बनवाई थी, अभयकीर्ति तथा भानुकीर्ति यहां मठाधीश थे, बाद में साहु हालाक ने यहां बडा मंदिर बनवाया तथा चौलुक्य राजा जयसिंह ने स्वयं इस के के दर्शन कर इसे २४ हल की भूमि दान दी थी। वर्तमान समय में यह स्थान प्रसिद्ध नहीं है।

मणिमान्—जटासिंहनंदि के कथनानुसार इस पर्वत पर वरदत्त का निर्वाण तथा वरांग का स्वर्गवास हुआ था। पहले बताया है कि यह स्थान संभवतः वर्तमान तारंगा ही है।

मथुरा—ज्ञानसागर तथा दिलसुख के कथनानुसार इस नगर में अन्तिम केवली जम्बूस्वामी का निर्वाण हुआ था। राजमल्ल के वर्णनानुसार जम्बूस्वामी का निर्वाण तो विपुलाचल से हुआ था, किन्तु उन के पांचसौ शिष्य मथुरा में घोर उपसर्ग सहन कर दिवंगत हुए थे। उन की स्मृति में वहां साहु टोडर ने ५१४ स्तूपों की स्थापना भी की थी। निर्वाणकाण्ड में मथुरा के महावीरजिन को वंदन किया है। जिनप्रभसूरि के कथनानुसार (विविधतीर्थकल्प पृ. १७) यहां एक प्राचीन स्तूप सातवे तीर्थंकर श्रीसुपार्श्वनाथ के समय का था जिस का जीर्णोद्धार श्रीपार्श्वनाथ के समय तथा बाद में आठवीं सदी में वप्पभट्टि सूरि के समय किया गया था*। उन्हों ने इस नगर में आर्य रक्षित, आर्य स्कन्दिल तथा जिनभद्रक्षमाश्रमण के आगमसंबंधी कार्यों का भी उल्लेख किया है। श्रीकृष्ण की जन्मभूमि होने से यह नगर हिंदुओंका भी प्रसिद्ध तीर्थ है। यहां नगर में एक जिनमंदिर है और नगरके बाहर चौरासी नामक विभाग में एक जिनमंदिर है जिस में जम्बूस्वामी की चरणपादुकाएं भी हैं। यहीं अ. भा. दिगम्बर जैन संघ तथा ऋषभ ब्रह्मचर्याश्रम भी हैं। मथुरा के कंकाली टीला नामक भाग से खुदाई करने पर ईसवी सन के पहले दो सदियों की महत्त्वपूर्ण पुरातत्त्व सामग्री प्राप्त हुई है। जैन शिलालेख

* इस स्तूप के अवशेष इस समय लखनऊ म्यूजियम में हैं।

संग्रह भाग ३ प्रस्तावना पृ. ६ से २१ तक इस सामग्री का विस्तृत परिचय दिया गया है। द्रष्टव्य–जैनतीर्थ यात्रादर्शक पृ. २२, जैन तीर्थोनो इतिहास (न्या.) पृ. ५१६।

मन्दारगिरि—अग्रमंदर देखिए।

मलयखेड—ज्ञानसागर ने यहां के जिनमंदिर में जयधवल–महाधवल के पठन का उल्लेख किया है। विश्वभूषण भी यहां सिद्धान्त का उल्लेख करते हैं, उन्हों ने नेमिनाथजिन का और जतिसिंहासन (भट्टारकपीठ) का भी उल्लेख किया है। यह स्थान इस समय मलखेड कहलाता है तथा मैसूर प्रदेश के गुलबर्गा जिले में है। यहां अब देवेंद्रकीर्ति नामक भट्टारक हैं। कारंजा के बलात्कारण के भट्टारक भी मलयखेड सिंहासनाधीश्वर कहलाते थे क्यों कि उन की परम्परा इसी स्थान से सम्बद्ध थी (भट्टारक संप्रदाय पृ. ५२, ५०, ६१, ७१)। यह ग्राम ही राष्ट्रकूट सम्राटों की पुरातन राजधानी मान्यखेट का अवशिष्ट रूप है। यहां सन १३९३ का एक लेख नेमिनाथ मंदिर में है, इस में विद्यानन्दस्वामी की समाधि का वर्णन है (जैनिजम इन साउथ इन्डिया पृ. ४२२) (यहां की विस्तृत जानकारी के लिए इसी पुस्तक के पृ. १९२–१९७ देखिए)।

महुखेड—यहां श्रीपाल नृप *द्वारा पूजित शान्तिनाथ जिन का मंदिर है (ज्ञानसागर)।

महुवा—मधूकनगर – यहां विघ्नहर पार्श्वनाथ का प्रसिद्ध मंदिर है (ज्ञानसागर, हर्ष)। यह ग्राम गुजरात प्रदेश में सूरत–भुसावल रेलमार्ग के बारडोली स्टेशन से १० मील दूर है। मूलसंघ के भ. वादिचन्द्र ने इसी स्थान पर ज्ञानसूर्योदय नामक संस्कृत नाटक की रचना सं. १६४८ में की थी (जैन साहित्य और इतिहास पृ. ३८५)।

मांगीतुंगी—तुंगीगिरि देखिए।

---

* श्रीपुर के अंतरिक्ष पार्श्वनाथ मंदिर के स्थापक राजा श्रीपाल–एल ही शायद यहां उल्लिखित हैं।

मांडवगढ—यहां महावीर जिनका मंदिर है (सुमतिसागर, जयसागर)। यह पुरातन किला पहले मंडपदुर्ग कहलाता था, अब इसे मांडव, मांडो या मांडू कहते हैं। यह मध्यप्रदेश में इन्दौर से ६० मील और धार से २० मील दूर स्थित है। यहां का पुरातन दि. जैन मंदिर तो नष्ट हो गया है, अभी १९६१ में एक नया मंदिर बनवाया गया है। यहां सुपार्श्वनाथ और शांतिनाथ के दो श्वेताम्बर मंदिर भी हैं। श्वे. यात्रियोंने भी इस के उल्लेख किये हैं (प्राचीन तीर्थमाला संग्रह भा. १ पृ. ९८, ११२, १४४ आदि)। यह किला मालवाके सुलतानों की राजधानी रहा है। उन के बनवाये हुए कई दर्शनीय महल, मस्जिद, मकबरे आदि यहां विद्यमान हैं। प्राकृतिक सौन्दर्य की दृष्टि से भी यह किला दर्शनीय है। द्रष्टव्य–जैनतीर्थयात्रा दर्शक पृ. २०९। जैनतीर्थोनो इतिहास (न्या.) पृ. ३९९।

माणिकस्वामी—कुलपाक देखिए।

मालवशांतिनाथ—अवंतिशांतिनाथ देखिए।

मिथिला—इस नगर में मल्लिनाथ तथा नमिनाथ इन दो तीर्थंकरों का जन्म हुआ था (यतिवृषभ, रविषेण, जटासिंहनंदि, जिनसेन, गुणभद्र)। यह नगर पुरातन विदेह प्रदेश (उत्तर बिहार) की राजधानी था। सीता का जन्मस्थान होनेसे यह हिन्दुओं का भी अच्छा तीर्थ रहा है। मिथिला के वर्तमान स्थान के बारे में कुछ मतभेद रहा है। सीतामढी, जनकपुर तथा जगदीशपुर ये तीन स्थान बिहार के मुजफ्फरपुर जिले में हैं जिन्हें मिथिला के वर्तमान स्थान कहा जाता है। सीतामढी दरभंगा जंकशन से ४२ मील दूर है, सीतामढी से ७ मील पर जगदीशपुर और २८ मील पर जनकपुर है (प्राचीन तीर्थमाला संग्रह भा. १ पृ. २६–२७)। जिनप्रभसूरिने एक कल्प में इस स्थान से संबद्ध कथाओं का उल्लेख किया है (विविधतीर्थकल्प पृ. ३२) कि यही नगर प्रत्येकबुद्ध महाराज नमि की राजधानी था, यहीं भगवान महावीर ने ग्यारहवां वर्षावास चातुर्मास बिताया, उन के नौवे गणधर अकंपित का यहीं जन्म हुआ था तथा वीरनिर्वाण सं. २२० में अश्वमित्र ने यहीं चौथे

निन्हव की स्थापना की थी। उन्हों ने यहां दो मंदिर होने का भी उल्लेख किया है, मध्ययुगीन श्वे. यात्रियों ने भी यहां मंदिरों का उल्लेख किया है। किन्तु वर्तमान समय में यहां जैन यात्री नहीं जाते, मंदिर आदि का भी अब पता नहीं चलता। अधिक विवरण के लिए देखिए भारतके प्राचीन जैन तीर्थ पृ. २७-२८, जैन तीर्थयात्रा दर्शक पृ. १४२ जैन तीर्थोनो इतिहास (न्या.) पृ. ५४०।

मुक्तागिरी—रूपांतर मेंढगिरि, मेंढ़क—अचलपुर के ईशान्य में मेढगिरि से ३॥ कोटि मुनि मुक्त हुए (निर्वाणकाण्ड, गुणकीर्ति, मेघराज)। पूज्यपाद और श्रुतसागर द्वारा उल्लिखित मेंढ़क-मेढ़गिरि भी संभवतः यही है। सुमतिसागर, सोमसेन, जयसागर, चिमणापंडित, ज्ञानसागर, दिलसुख, हर्ष, कवींद्रसेवक और धनजी इसे मुक्तागिरि कहते हैं—यही नाम इस समय भी प्रसिद्ध है। चिमणापंडित और ज्ञानसागर ने यहां की प्राकृतिक विशेषता—मंदिरों के बीच बहती हुई जलधारा-नदी-का भी उल्लेख किया है। धनजी, राघव और हर्ष ने यहां के मुख्य मंदिर के मूलनायक पार्श्वनाथ का उल्लेख किया है। ज्ञानसागर ने यहां मंदिरों की दो पंक्तियों का तथा पांच रात्रियों की यात्रा का वर्णन किया है। चिमणापंडित, राघव और कवींद्रसेवक ने (मेढगिरि नाम का स्पष्टीकरण देने के लिए संभवतः) कहा है कि यहां एक मेंढा (मराठी शब्द जिसका अर्थ बकरा होता है) मृत्यु पाकर अच्छी गति को प्राप्त हुआ। जैसा कि ऊपर कहा है, यह क्षेत्र अचलपुर के ईशान्य में है। महाराष्ट्र प्रदेश के अमरावती जिले में अचलपुर एक तहसील का मुख्य स्थान है। मध्य रेलवे के मुर्तिजापुर जंकशन से अचलपुर तक रेलमार्ग है। अचलपुर-बैतूल मोटरमार्ग पर स्थित खरपीग्रामसे ४ मील दूर मुक्तागिरि है। यहां तलहटी में धर्मशाला और मंदिर है। यहां से कोई एक मील चढाव के बाद पहाड के मध्य में मंदिरों की दो पंक्तियां हैं जिन में कुल ५२ मंदिर हैं। दोनों पंक्तियों के बीच एक बरसाती नदी का पात्र है तथा इन पंक्तियों की पार्श्वभूमि में इस नदी का सुंदर जलप्रपात है। प्रपात के एक ओर पहाड काट कर बनाया हुआ पुरातन गुहामंदिर है। यहां से कोई ५०० सीढियां चढकर प्रपात के ऊपरी हिस्से तक जाने पर कुछ

मुनियों के चरणचिन्ह स्थापित मिलते हैं। इस तरह यह क्षेत्र प्राकृतिक सौन्दर्य की दृष्टि से भी दर्शनीय है। श्वे. साधु शीलविजय ने १७ वीं सदी में इस की यात्रा करते हुए इसे शत्रुंजय की उपमा दी थी (प्राचीन तीर्थमाला संग्रह भा. १ पृ. ११५)। द्रष्टव्य–जैन तीर्थयात्रादर्शक पृ. ६४, जैन साहित्य और इतिहास पृ. ४४३।

मूडबिद्री—रूपान्तर मूलवद्री, विदुरे, वेदरी। ज्ञानसागर ने यहां चन्द्रप्रभ और पार्श्वनाथ के मंदिरों का तथा सोने और रत्नों की मूर्तियों का उल्लेख किया है। विश्वभूषण ने यहां चन्द्रप्रभमंदिर का उल्लेख किया है। मूडबिद्री मैसूर प्रदेश के दक्षिण कनडा जिले में मंगलोर से २२ मील दूर स्थित नगर है। वहां उपर्युक्त दो मंदिरों के अलावा २० अन्य मंदिर भी हैं। सोने और रत्नों की मूर्तियों के अलावा यहां धवला-जयधवला इन सिद्धान्तग्रन्थों की प्राचीन ताडपत्र-प्रतियां भी दर्शनीय हैं। यहां भट्टारक चारुकीर्तिजी के मठ में अन्य अनेक ताडपत्रीय ग्रन्थों का समृद्ध संग्रह है। यहां के कई शिलालेख जैनशिलालेख संग्रह के चतुर्थ भाग में संकलित हैं जो शीघ्र ही प्रकाशित होने जा रहा है। १७ वीं सदी में श्वे. साधु शीलविजय ने यहां का विस्तृत वर्णन लिखा है (प्राचीन तीर्थमाला संग्रह भा. १ पृ. ११९)। द्रष्टव्य–जैनतीर्थयात्रादर्शक पृ. १६४।

मेघरव—विन्ध्य पर्वत के महान वन में जहां मेघनाद के साथ इन्द्रजित मुक्त हुए वह मेघरव तीर्थ है (रविषेण)। निर्वाणकाण्ड की एक प्रक्षिप्त गाथा भी इसी अर्थ की है,* चिमणापंडित ने इस का

---

* प्रक्षिप्त कहने का कारण यह है कि एक तो निर्वाणकाण्ड की बहुतसी प्रतियों में यह गाथा नहीं है, दूसरे, निर्वाणकाण्ड की पहली एक गाथा में इन्द्रजित और कुम्भकर्ण का निर्वाणस्थान चूलगिरि बताया जा चुका है। यहां एक बात नोट करनेयोग्य है कि रविषेण ने इन्द्रजित का निर्वाणस्थान विन्ध्य के अरण्य में माना है, और चूलगिरि भी विन्ध्य की ही पर्वतमाला में है। इसी प्रकार रविषेण ने पिठरक्षत तीर्थ नर्मदातीर पर कहा है तथा चूलगिरि से भी नर्मदा बहुत दूर नहीं है— चूलगिरि के शिखर से देखी जा सकती है। प्रश्न यही रहता है कि चूलगिरि को मेघरव से अभिन्न माना जाए या पिठरक्षत से।

अनुवाद किया है। वर्तमान समय में यह तीर्थ विस्मृत है।

मेंढूक-मेढगिरि—मुक्तागिरि देखिए।

मोरुम—मौलापुर – ज्ञानसागर के कथनानुसार इस नगर में चन्द्रप्रभ का मंदिर है।

मौण्डिल्यगिरि—हरिषेण के वर्णनानुसार इस स्थान पर सुकोशल और कीर्तिधर का निर्वाण हुआ। शिवार्य ने भी सुकोशल का निर्वाण-स्थान मोग्गिल्लगिरि बतलाया है। वर्तमान में यह स्थान ज्ञात नहीं है।

येनूर—वेणूर देखिए।

येरुल—एलूर देखिए।

रत्नगिरि—श्रुतसागर ने इस का उल्लेख किया है। अधिक विवरण राजगृह के वर्णन में देखिए।

रत्नपुर—इस नगर में पन्द्रहवे तीर्थंकर श्रीधर्मनाथ का जन्म हुआ था (यतिवृषभ, रविषेण, जटासिंहनन्दि, जिनसेन, गुणभद्र)। यह स्थान उत्तर प्रदेश में अयोध्या से १४ मील दूर है। फैजाबाद–लखनऊ रेलमार्ग के सोहावल स्टेशन से दो मील पर नौराई या रुनाई नामक ग्राम है – यही रत्नपुर का अवशिष्ट रूप है। यहां ३ मंदिर दिगम्बरों के और दो श्वेताम्बरों के हैं, धर्मशाला भी है। जिनप्रभसूरि ने इसे रत्नवाहपुर कहा है (विविधतीर्थकल्प पृ. ३३) तथा नागमूर्ति से युक्त धर्मनाथ मंदिर यहां था उस की कहानी बतलाई है। अधिक विवरण के लिए देखिए – जैनतीर्थयात्रादर्शक पृ. ११०, प्राचीन तीर्थमाला संग्रह भा. १ पृ. ३७, भारत के प्राचीन जैनतीर्थ पृ. ३९, जैनतीर्थोनो इतिहास (न्या.) पृ. ५०४।

राजगृह—रूपान्तर रायगिह, राजगिर, कुशाग्रपुर, गिरिव्रज, धर्मारण्य, पंचशैलपुर। इस नगर में बीसवे तीर्थंकर श्रीमुनिसुव्रत का जन्म हुआ था (यतिवृषभ, रविषेण, जटासिंहनंदि, जिनसेन, गुणभद्र)। यहां राजा मेघरथ, उनके श्रेष्ठी धनदत्त तथा उनके गुरु सुमन्दर ने निर्वाण प्राप्त किया था (जिनसेन)। धनदत्त के निर्वाण का उल्लेख ज्ञानसागर ने भी किया है। इसी नगर के समीप भगवान महावीर ने अपना पहला

धर्मोपदेश दिया था (यतिवृषभ, जिनसेन, गुणभद्र, ज्ञानसागर)। यह नगर प्राचीन समय में मगध (दक्षिण बिहार) प्रदेश की राजधानी था, नौवें प्रतिनारायण जरासंध ने यहीं राज्य किया था तथा भगवान महावीर के श्रेष्ठ उपासक राजा श्रेणिक भी यहीं हुए थे। इस नगर के समीप पांच पहाड हैं जिन से यह पंचशैलपुर कहलाता है। यतिवृषभ ने इन पांच पहाडों के नाम इस प्रकार दिये हैं – पूर्व में ऋषिगिरि, दक्षिण में वैभारगिरि, नैऋत्य में विपुलगिरि, वायव्य में छिन्नगिरि तथा ईशान्य में पाण्डुकगिरि। पूज्यपाद ने ये नाम इस तरह दिये हैं – वैभार, सिद्धकूट, ऋष्यद्रि, विपुलाद्रि और बलाहक। वीरसेन द्वारा धवला तथा जयधवला के मंगलाचरण – विवरण में ये नाम यतिवृषभ के समान दिये हैं – केवल छिन्न के स्थान में चन्द्रगिरि कहा है। जिनसेन ने भी वे ही नाम दिये हैं – किन्तु वे छिन्न के स्थान पर बलाहक लिखते हैं। महाभारत के अनुसार ये नाम हैं – वैहार, वराह, वृषभ, ऋषिगिरि तथा चैत्यक। मध्ययुगीन श्वे. यात्रियों ने वैभार, विपुल, उदय, सुवर्ण तथा रत्नगिरि ये नाम दिये हैं। श्रुतसागर ने प्रायः यही नाम दिये हैं, केवल उदय के स्थान पर वे रूप्यगिरि लिखते हैं। इस तरह प्राचीन समय से ही इन पर्वतों के नामों के बारे में मतभेद रहा है। किन्तु इन सबकी पवित्रता को सभी ने स्वीकार किया है।* इस समय राजगृह नगर को राजगिर कहा जाता है। पटना – भागलपुर रेलमार्ग के बखतियारपुर जंकशन से यहां तक छोटा रेलमार्ग है और मोटरमार्ग भी है। ग्राम में धर्मशाला और मंदिर है तथा पांच पहाडों पर कुल १८ मंदिर हैं। इन में वैभारगिरि के प्राचीन मंदिरों के अवशेष विशेष दर्शनीय हैं। इस पहाड की तलहटी में सोनभंडार नाम की गुहा है जिसे मुनि वैरदेव ने चौथी सदी में निर्माण कराया था। पांच पहाडों के मध्यवर्ती स्थानों में गरम पानी के कई कुंड हैं जो प्राचीन समय से ही

---

* इन में ऋषिगिरि, छिन्नगिरि, पांडुकगिरि, बलाहक, रत्नगिरि के बारे में पहले लिख चुके हैं, वैभारगिरि, विपुलगिरि, सुवर्णगिरि और रूप्यगिरि का अधिक विवरण आगे दिया है।

आकर्षण के केन्द्र रहे हैं। यहां बुद्ध ने कई वर्षावास बिताये थे इस लिए यह बौद्धों का भी प्रसिद्ध यात्रास्थल है तथा दक्षिणपूर्व एशिया के देशों द्वारा बनवाये गये कई विशाल विश्रामगृह यहां हैं। यहां से दो मील दूर नालंदा के प्राचीन विश्वविद्यालय के अवशेष हैं। श्वे. परम्परा के अनुसार इस ग्राम में भ. महावीर ने १४ वर्षावास — चातुर्मास बिताये थे। अधिक विवरण के लिए देखिए — जैनतीर्थयात्रादर्शक पृ. १२०–२१, प्राचीन तीर्थमालासंग्रह भा. १ पृ. १७–२०, जैन साहित्य और इतिहास पृ. ४३६–३८ तथा ४४९, भारत के प्राचीन जैनतीर्थ पृ. २०–२१।

रामगिरि—कुंथुगिरि देखिए।

रामटेक—यहां शान्तिनाथ का प्रसिद्ध मन्दिर है, इस के निर्माण कार्य आदि के बारे में मकरन्द ने अपने गीत में विस्तृत जानकारी दी है। ज्ञानसागर ने भी इस का उल्लेख किया है। भ. जिनसेन ने यहां साह-कान्हा को संघपति पद दिया था। रामटेक नागपुर शहर से २८ मील दूर है। नागपुर से यहां तक मोटारमार्ग भी है और रेलमार्ग भी। यहां शांतिनाथ की मुख्य मूर्ति १२ फुट ऊंची है। इस मुख्य मंदिर के पास दस मंदिर और हैं। कुछ वर्ष पहले मानस्तंभ भी स्थापित हो चुका है। यहां से कुछ ही दूर एक पहाडी पर राम-लक्ष्मण आदि के प्रसिद्ध मंदिर हैं जिन के कारण यह हिन्दुओं का भी पुरातन तीर्थ रहा है। विद्वानों का अनुमान है कि महाकवि कालिदास के काव्य मेघदूत में उल्लिखित रामगिरि संभवतः यही पहाडी है। यहां की एक दूसरी पहाडी पर नागार्जुन की गुहा भी दर्शनीय है, इस के समीप रामसागर नाम का बडा तालाब है। द्रष्टव्य—जैनतीर्थयात्रा दर्शक पृ. ६८।

रावण पार्श्वनाथ—अलवर देखिए।

रूप्यगिरि—श्रुतसागर ने इस का नामोल्लेख किया है। यह संभवतः राजगृह के समीप के पांच पहाडों में से एक का नाम है। राज-गृह का वर्णन देखिए।

रिस्सिदगिरि—रेसिंदीगिरि—निर्वाणकाण्ड के अनुसार इस पर्वत

से पार्श्वनाथ के समवसरण के वरदत्त आदि पांच मुनि मुक्त हुए। इस का अनुवाद मेघराज और चिमणापंडित ने किया है। इस समय रेसिंदीगिरि का नाम नैनागिरि भी है, यह मध्यप्रदेश में है, सागर शहर से दौलतपुर होते हुए यहां तक मार्ग है। यहां का मुख्य मंदिर श्रेयांसनाथ का है और सं. १७०८ का बना हुआ है। इस के अतिरिक्त पर्वतपर २५ मंदिर और तलहटी में ६ मंदिर और हैं। रिसिंद शब्द का संस्कृत रूप ऋषीन्द्र होता है अतः पं. प्रेमीजीने अनुमान किया है रिसिंदगिरि वही ऋषिगिरि होना चाहिए जो राजगृह के समीप की पांच पहाड़ियों में से एक है (जैन साहित्य और इतिहास पृ. ४४९-५०)। वर्तमान नैनागिरि के लिए देखिए–जैन तीर्थयात्रा दर्शक पृ. ७६।

रेवातट—रेवा अथवा नर्मदा नदी के तीर पर रावण के पुत्र तथा ५।। कोटि मुनियों का निर्वाण हुआ (निर्वाणकाण्ड, उदयकीर्ति, गुणकीर्ति, मेघराज, चिमणापंडित)। नर्मदा नदी अमरकंटक से भडौच तक कोई १७०० मील लम्बी है, इसलिए उपर्युक्त वर्णन से किसी विशिष्ट स्थान का अर्थ लेना कठिन है। निर्वाणकाण्ड की ही एक और गाथा में रेवातीर पर सिद्धवरकूट तीर्थ का वर्णन है, इस का आगे अलग वर्णन किया है। निर्वाणकाण्ड की एक प्रक्षिप्त गाथा में रेवातीर पर संभवनाथ को केवलज्ञान प्राप्त हुआ ऐसा कथन है, इस का अनुवाद चिमणापंडित ने किया है, इस में भी किसी विशिष्ट स्थान का निर्देश नही है। पहले बता चुके हैं कि रविषेण के कथनानुसार कुंभकर्ण का निर्वाणस्थल पिटरक्षत नर्मदा के ही तीर पर था, किन्तु इस समय यह ज्ञात नहीं है। द्रष्टव्य–जैन साहित्य और इतिहास पृ. ४४०।

रेवन्त, रैवत, रैवतक—ऊर्जयन्त देखिए।

रोहेटकपुर—हरिषेण के कथनानुसार इस नगर में महायोगी कार्तिकेय मुनि का देहान्त हुआ था। इस समय यह स्थान प्रसिद्ध नहीं है अतः यह कहना कठिन है कि यह पंजाब के वर्तमान शहर रोहतक का पुरातन नाम है या महाराष्ट्र में सह्याद्रि पर्वतमाला में स्थित रोहिडा का।

लक्ष्मेश्वर—रूपान्तर पुलगेरे, हुलगेरे, हुलगिरि, होलागिरि,

पुरिकर। इस नगर में शंखजिनेन्द्र नामक प्रसिद्ध मूर्ति का मंदिर है। निर्वाणकाण्ड में इसे होलागिरि के शंखदेव कहा है, मदनकीर्ति ने इस की कथा संक्षेप में बतलाई है कि पुरातन समय में किसी व्यापारी की गोनी के एक शंख से यह प्रतिमा प्रकट हुई थी। ज्ञानसागर ने भी इस की कथा का उल्लेख किया है, किन्तु वे व्यापारी की गोनी के स्थान पर राजदरबार में एक विवाद में शंख से मूर्ति प्रकट हुई ऐसा कहते हैं। उन्हों ने और मेघराज ने स्थान का नाम लक्ष्मीश्वर बतलाया है। सुमति-सागर, जयसागर और विश्वभूषण ने भी इस क्षेत्र का उल्लेख किया है। उदयकीर्ति के वर्णनानुसार बिज्जण राजा इस मूर्ति को नहीं तोड सका था*। यह स्थान मैसूर प्रदेश के धारवाड जिले में है। जैन शिलालेख संग्रह भा. २ में यहां के पांच शिलालेख सातवीं सदी से दसवीं सदी तक के संगृहीत हैं। इन में सेन्द्रकवंश के राजा दुर्गशक्ति, चालुक्य वंश के राजा विनयादित्य, विजयादित्य तथा विक्रमादित्य एवं गंगवंश के राजा मारसिंह द्वारा इस तीर्थ के लिए दान आदि दिये जानेका वर्णन है (लेख क्र. १०९, १११, ११३, ११४ तथा १४९)। इस से पता चलता है कि सातवीं सदी में ही यह तीर्थ प्रसिद्ध हो चुका था।

यहां यह नोट करना जरूरी है कि हुलगिरि अथवा लक्ष्मेश्वर के इस शंखजिनेन्द्र से भिन्न शंखेश्वर नाम का दूसरा तीर्थ गुजरात में है जिस का वर्णन आगे दिया है। नाम की समानता के कारण पं. दरबारी-लालजीने शासनचतुस्त्रिंशिका (पृ. ४३-४७) में इन दोनों को एक मान लिया है। विवरण के लिए देखिए—जैन साहित्य और इतिहास पृ. ४६३। यहां बारह जिनमंदिर थे जिनमें से कई गंगवंशीय राजाओं द्वारा निर्मित थे (जैनिजम इन साउथ इण्डिया पृ. ३८८)।

लोडनपार्श्वनाथ——डभोई देखिए।

---

* बिज्जण अथवा बिज्जल कल्याण के कलचुरि वंश का प्रसिद्ध राजा था जिस ने ११५६–११६८ ई. तक राज्य किया। यह पहले जैनधर्म का समर्थक था किन्तु बाद में वीरशैव हो गया था[?] और तब इस के राज्य में जैनों पर बहुत अत्याचार हुए थे।

वडगाम—भगवान महावीर के प्रथम गणधर गौतमस्वामी इस ग्राम में निर्वाण को प्राप्त हुए (ज्ञानसागर)। यह ग्राम विहार के दक्षिण भाग में विहारशरीफ नगर से दो मील पर है। प्राचीन नालन्दा ग्राम का ही यह मध्ययुगीन नाम है। श्वेताम्बर यात्रियों ने इस का उल्लेख गौतमस्वामी के जन्मस्थान के रूप में किया है (प्राचीन तीर्थमाला संग्रह भा. १ पृ. १९)। अन्यत्र गौतमस्वामी का निर्वाणस्थान विपुलाचल, वैभार-पर्वत अथवा गुणावा माना गया है (उत्तरपुराण सर्ग ७६, विविधतीर्थ-कल्प पृ. ७७, जैन तीर्थयात्रा दर्शक पृ. १२२)।

वडभोई—डभोई देखिए।

वडवानी—चूलगिरि देखिए।

वडवाल—विश्वभूषण ने यहां के शांतिनाथ मंदिर का उल्लेख किया है। मैसूर प्रदेश के दक्षिण कनडा जिले की एक तहसील का यह मुख्य नगर अब बंटवाल कहलाता है।

वडाली—यहां अमीझरो पार्श्वनाथ का प्रसिद्ध मन्दिर है (सुमति-सागर, ज्ञानसागर, जयसागर, हर्ष)। यह स्थान गुजरात में है, अहमदा-बाद – खेडब्रह्मा रेलमार्ग पर यह स्टेशन है। इसी नगर में भट्टारक सकलकीर्ति ने सं. १४८१ में मूलाचारप्रदीप नामक संस्कृत ग्रन्थ की रचना की थी (जैनग्रन्थ प्रशस्तिसंग्रह भा. १ प्रस्तावना पृ. १०)। इस समय यह मंदिर श्वेताम्बरों के अधिकार में है (जैनतीर्थयात्रादर्शक पृ. ५४)।

वंशगिरि, वंशस्थल—कुंथुगिरि देखिए।

वाडवजिनेन्द्र—उदयकीर्ति तथा गुणकीर्ति ने कर्णाटक के वाडवजिनेन्द्र को वन्दन किया है। अधिक विवरण नही मिल सका।

वाराणसी—वाणारसी, बनारस, काशी – इस नगर में सातवे तीर्थंकर श्रीसुपार्श्व तथा तेईसवे तीर्थंकर श्रीपार्श्वनाथ का जन्म हुआ (यतिवृषभ, जटासिंहनंदि, रविषेण, जिनसेन, गुणभद्र)। निर्वाणकाण्ड, उदयकीर्ति, श्रुतसागर, गुणकीर्ति, जयसागर व हर्ष ने भी यहां के पार्श्वनाथ को वन्दन किया है। ज्ञानसागर ने यहां गंगा के तीर पर दो

मंदिरों का उल्लेख किया है। वाराणसी इस समय भी उत्तर प्रदेश का समृद्ध नगर है। यहां भेलूपुरा में दो और भदैनी घाट पर तीन मंदिर हैं। विश्वनाथ के नाम से प्रसिद्ध शिवमंदिर और अन्य सैंकडों मंदिरों के कारण यह हिन्दुओं का भी प्रख्यात तीर्थ है। जिनप्रभसूरि ने इस का वर्णन किया है (विविधतीर्थकल्प पृ. ७२)। श्वेताम्बर यात्रियों के उल्लेखों के लिए देखिए – प्राचीन तीर्थमाला संग्रह भा. १ पृ.११-१२। स्याद्वाद महाविद्यालय तथा भारतीय ज्ञानपीठ यहां की प्रमुख जैन संस्थाएं हैं। द्रष्टव्य – जैनतीर्थयात्रादर्शक पृ. ११५, जैन तीर्थोनो इतिहास (न्या.) पृ. ४३४, भारतके प्राचीन जैनतीर्थ पृ. ३५।

वांसिनयर—कुंथुगिरि देखिए।

विघ्नेश्वर—विघ्नहर – महुवा देखिए।

विन्यातटपुर—हरिषेण के कथनानुसार वराट (विदर्भ) प्रदेश के वैराकर के पश्चिम में विन्या नदी के किनारे यह स्थान था, यहां शिवशर्मा अमरनाम वारत्र मुनि मुक्त हुए थे। इस समय यह स्थान ज्ञात नही है। विदर्भ में चान्दा जिले में ब्रह्मपुरी के पास वैरागड नामक स्थान है, इस इलाके में वैनगंगा नदी भी है। शायद इस वैरागड को ही हरिषेण ने वैराकर लिखा होगा।

विपुलगिरि—विपुलाचल, विपुलाद्रि, विउलगिरि। यह राजगृह के समीप की पांच पहाडियों में से एक है (यतिवृषभ, जिनसेन)। पूज्यपाद ने सिद्धक्षेत्रों में इस का अन्तर्भाव किया है। वीरसेन और यतिवृषभ के कथनानुसार यहां भगवान महावीर ने अपना पहला धर्मोपदेश दिया था। गुणभद्र के वर्णनानुसार भगवान महावीर के प्रथम गणधर श्रीगौतमस्वामी* तथा महामुनि जीवंधर यहां से मुक्त हुए। राजमल्ल के कथनानुसार सुधर्मस्वामी और जम्बूस्वामी§ भी यहीं से मुक्त

---

* अन्यत्र गौतमस्वामी का निर्वाणस्थान वैभारपर्वत अथवा गुणावा बताया गया है यह पहले बता चुके हैं।

§ अन्यत्र जम्बूस्वामीका निर्वाण स्थान जम्बू वन अथवा मथुरा बताया है यह पहले बता चुके हैं।

हुए। मदनकीर्ति ने यहां बारह योजन से दिखाई देनेवाले जिनबिम्ब का उल्लेख किया है। यहां भगवान महावीर के धर्मोपदेश का उल्लेख ज्ञानसागर ने तथा जीवंधर की मुक्ति का उल्लेख जिनसागर ने भी किया है। इस के मार्ग का विवरण राजगृह के वर्णन से जानना चाहिए। इस समय इस पर्वत पर ७ मंदिर हैं। अधिक विवरण के लिए देखिए—प्राचीन तीर्थमाला संग्रह भा. १ पृ. १८।

वृषदीपक—पूज्यपाद ने सिद्धक्षेत्रों में इस का अन्तर्भाव किया है। अधिक विवरण ज्ञात नहीं।

वेत्रवतीन्हद—अवन्ति शान्तिनाथ देखिए।

वेनूर—एनूर, येनूर, वेण्गूर। यहां आठ मंदिर हैं, नौ धनुष ऊंची गोमटदेव की मूर्ति है तथा पाण्डुराय नामक जैन राजा का राज्य है (ज्ञानसागर) यहां सात धनुष ऊंचे लघुगोमटदेव हैं जो मधुनृप द्वारा स्थापित हैं (विश्वभूषण)। यह स्थान मैसूर प्रदेश के दक्षिण कानडा जिले में है, मूडबिद्री से यह १२ मील दूर है। यहां के गोम्मटेश्वर की मूर्ति ३५ फुट ऊंची है तथा चामुण्डराय के वंशज पाण्ड्यराज के छोटे भाई राजा तिम्मराज ने सन १६०४ में इस की स्थापना श्रवणबेळगुळ के आचार्य चारुकीर्ति के उपदेश से की थी (जैन शिलालेख संग्रह भा. ३ लेखांक ६८९ तथा ६९०)। द्रष्टव्य—जैनतीर्थयात्रादर्शक पृ. १६६।

वेरुल—एलूर देखिए।

वैभारगिरि—यह राजगृह के समीप की पांच पहाडियों में से एक है (यतिवृषभ, जिनसेन)। पूज्यपादने सिद्धक्षेत्रों में इस का अन्तर्भाव किया है तथा भगवान महावीर के पहले धर्मोपदेश का यही स्थान बतलाया है। श्रुतसागर तथा दिलसुख ने भी इस का नामोल्लेख किया है। मार्ग आदि का विवरण राजगृह के वर्णन से जानना चाहिए। जिनप्रभसूरि ने इस के विषय में एक कल्प लिखा है (विविधतीर्थकल्प पृ. ९२) उनके कथनानुसार भगवान महावीर के सभी (ग्यारह) गणधरों का निर्वाण इसी पर्वत पर हुआ था। श्वेताम्बर यात्रियों के उल्लेखों के लिए देखिए – प्राचीन तीर्थमाला संग्रह भा. १ पृ. १७-१८।

शत्रुंजय—सत्तुंजय, सेत्तुंजय, अरिंजय, सिद्धाचल। इस पर्वत-पर तीन पांडव—धर्मराज, भीम तथा अर्जुन का निर्वाण हुआ (पूज्यपाद, जिनसेन, गुणभद्र)। इन के अतिरिक्त आठ कोटि द्रविड राजा यहां से मुक्त हुए (निर्वाणकाण्ड, उदयकीर्ति, गुणकीर्ति, मेघराज, चिमणापंडित, जयसागर)। श्रुतसागर, सुमतिसागर, सोमसेन, दिलसुख तथा कवींद्र-सेवक ने भी इस का नामोल्लेख किया है। देवेंद्रकीर्ति का उल्लेख यात्रासम्बन्धी है। ज्ञानसागर ने यहां ललित सरोवर तथा अक्षयवट इन दर्शनीय स्थानों का उल्लेख किया है, समीप के पालीताणा नगर का नाम भी दिया है तथा ऋषभदेव यहां बाईस बार आये थे ऐसी अनुश्रुति बतलाई है। यह पर्वत सौराष्ट्र में पालीताणा शहर के समीप है। पश्चिम रेलवे के भावनगर-सुरेन्द्रनगर रेलमार्ग के सीहोर जंकशन से पालीताणा तक रेलमार्ग है। शहर में दो तथा पर्वत पर एक दि. जैन मंदिर है। श्वेताम्बरों में इसकी बहुत महिमा है, शहर में तथा पर्वतपर मिला कर उन के कोई ३००० मंदिर हैं। जिनप्रभसूरि ने इस के विषय में एक प्रकरण लिखा है (विविधतीर्थकल्प पृ. १-४) उन के वर्णनानुसार इस पर्वतपर भगवान ऋषभदेव के प्रधान गणधर पुण्डरीक का निर्वाण हुआ था, यह इस अवसर्पिणी काल का पहला निर्वाण था, यहां नमि, विनमि, द्रविड, वालिखिल्य, जयराम, नारद, प्रद्युम्न, शाम्ब, आदित्ययशस, सगर, शैलक, शुक, कुन्ती, पांच पांडव, आदि बहुतसे प्रसिद्ध व्यक्तियों का भी निर्वाण हुआ था, नन्दिषेण आचार्यने यहां अजितशान्तिस्तव की रचना की थी, समय समय पर इस तीर्थ का उद्धार राजा सम्प्रति, विक्रमादित्य, सातवाहन, वाग्भट, पादलिप्त तथा आम राजा ने किया था, यहां की आदिनाथमूर्ति सर्व प्रथम भरतचक्रवर्ती ने स्थापित की थी, विक्रम सं. १०८ में जावडि ने उस के स्थानपर नई मूर्ति स्थापित की, महामंत्री वस्तुपाल तथा पेथडशाह ने बनवाये हुए मंदिर यहां हैं, सं. १३६९ में मुसलमानों ने यहां आदिनाथमूर्ति को तोडा था तब सं. १३७१ में समरासाह ने उस का पुनरुद्धार किया था। श्वेताम्बर यात्रियों के अन्य उल्लेखों के लिए देखिए प्राचीन तीर्थमाला संग्रह भा. १ पृ. ४१–४६, जैन तीर्थोनो इतिहास पृ. २-१६। श्वेताम्बर साहित्य में इस

पर्वत के माहात्म्य के संबंध में बहुतसी रचनाएं प्राप्त हैं। द्रष्टव्य–जैन तीर्थयात्रा दर्शक पृ. ५१।

शंखेश्वर—यहां पार्श्वनाथ का प्रसिद्ध मंदिर है, जरासंध के भय को दूर करने के लिए श्रीकृष्ण ने यहां पार्श्वनाथ की पूजा कर शंख फूंका था (ज्ञानसागर)। यह क्षेत्र गुजरात में वीरमगाम से ३१ मील दूर है। जिनप्रभसूरि ने इस के विषय में एक कल्प लिखा है (विविध-तीर्थकल्प पृ. ५२)। यह श्वेताम्बरों के अधिकार में है। श्वे. साहित्य में इस के बहुतसे उल्लेख मिलते हैं। मुनि जयंतविजय ने शंखेश्वर महातीर्थ नामक विस्तृत पुस्तक इस के विषय में लिखी है। यह पहले बता चुके हैं कि लक्ष्मेश्वर अथवा हुलगिरि के शंखजिनेंद्र इस शंखेश्वर तीर्थ से भिन्न हैं। द्रष्टव्य – जैनतीर्थोनो इतिहास (न्या.) पृ. १५३।

शीशलनगर—यहां के चन्द्रनाथ मंदिर का उल्लेख विश्वभूषण ने किया है। अधिक विवरण ज्ञात नही।

शौरीपुर—रूपान्तर शूर्यपुर, सुरिपुर, शूरपुर। यहां बाईसवे तीर्थंकर श्रीनेमिनाथ का जन्म हुआ था* (यतिवृषभ, रविषेण, जटासिंह-नंदि, जिनसेन, ज्ञानसागर)। इस नगर के निकट धान्यमुनि तथा अलसत्कुमार नामक मुनि ने निर्वाण प्राप्त किया (हरिषेण)। यह स्थान उत्तरप्रदेश में यमुना नदी के किनारे है। आग्रा– कानपुर रेलमार्ग के शिकोहाबाद स्टेशन से यह १४ मील दूर है, अब इस ग्राम का नाम बटेश्वर है। यहां दिगम्बर, श्वेताम्बर दोनों के मन्दिर, धर्मशाला हैं। भ. विश्वभूषण ने सं. १७२४ में यहां मन्दिर की प्रतिष्ठा की थी (जैन सिद्धान्त भास्कर भा. १९ पृ. ६४)। श्वे. यात्रियों के उल्लेखों के लिए देखिए–प्राचीन तीर्थमाला संग्रह भा. १ पृ. ३८, जैन तीर्थोनो इतिहास (न्या.) पृ. ५१३, भारतके प्राचीन जैन तीर्थ पृ. ४४; जैन तीर्थयात्रा दर्शक पृ. ९६।

श्रवणबेलगोल—जैनपुर, जैनबद्री। मदनकीर्ति ने जैनपुर में

---

* गुणभद्र के कथानुसार नेमिनाथ का जन्म द्वारका में हुआ था यह पहले बता चुके हैं।

दक्षिणगोम्मटदेव का वर्णन करते हुए लिखा है कि पांचसौ शिल्पियोंने छह मास काम कर इस मूर्ति की केवल एक कक्षा बनाई थी। उदयकीर्ति, सुमतिसागर, सोमसेन, जयसागर, चिमणापंडित ने सिर्फ गोमटदेव नाम का उल्लेख किया है। ज्ञानसागर ने इस मूर्ति के निर्माण की कथा दी है जिस में चामुंडराय द्वारा उपवास के बाद बाण छोडने से मूर्ति के प्रकट होने का कथन है। विश्वभूषण ने यहां छोटे पर्वत चिकवेटा का उल्लेख किया है, भद्रबाहु स्वामी तथा नेमिचन्द्र सिद्धान्त चक्रवर्ती का उल्लेख किया है तथा मूर्ति की ऊंचाई १८ पुरुष बतलाई है। दक्षिण के जैन तीर्थों में यह सर्वाधिक महत्त्व का स्थान है। दक्षिण रेलवे के हासन, अरसीकेरे, मैसूर व बेंगलोर स्टेशनों से यहां तक मोटरमार्ग हैं। यहां दो पर्वत हैं। इन में छोटी पहाडी चिकवेटा अथवा चन्द्रगिरि कहलाती है, इस का पुरातननाम कटवप्र अथवा कल्वप्पु तीर्थ रहा है। इस पर अन्तिम श्रुतकेवली आचार्य भद्रबाहु तथा उनके शिष्य चन्द्रगुप्तने अपने अन्तिम दिन विताये थे। इस पहाडीपर इस समय १४ मंदिर हैं। दूसरी पहाडी दोड्डवेटा, इन्द्रगिरि अथवा विन्ध्यगिरि कहलाती है। इसी के शिखरपर गोमटेश्वर बाहुबली की ५७ फुट ऊंची सुप्रसिद्ध मूर्ति है जिस का निर्माण गंगवंश के राजा राजमल्ल (चतुर्थ) के मन्त्री चामुण्डरायने दसवीं सदी के अन्तिम चरण में करवाया था। इस के अतिरिक्त इस पर्वतपर पांच मन्दिर और हैं। श्रवणवेलगोल ग्राम में भी छह मन्दिर हैं। वहां चारुकीर्ति भट्टारक का मठ भी है जिस का ताडपत्रीय शास्त्रभांडार समृद्ध है। श्रवण वेलगोल में कोई ५०० शिलालेख प्राप्त हुए हैं, इन का संकलन और अध्ययन डॉ. हीरालाल जैन ने जैन शिलालेख संग्रह के प्रथम भाग में प्रस्तुत किया है। द्रष्टव्य– जैन तीर्थ यात्रा दर्शक पृ. १६२।

श्रावस्ती—सावत्थी – यहां तीसरे तीर्थंकर श्रीसंभवनाथ का जन्म हुआ था (यतिवृषभ, रविषेण, जटासिंहनंदि, जिनसेन, गुणभद्र)। यह स्थान उत्तर प्रदेश के गोंडा जिले में है, इस समय सहेटमहेट नाम से यह ग्राम जाना जाता है, गोंडा–गोरखपुर रेलमार्ग के बलरामपुर

स्टेशन से यह १० मील दूर है। यहां से जैन और बौद्ध मंदिरों के बहुत से अवशेष मिले हैं किन्तु इस समय वहां कोई मंदिर नही है। जिनप्रभसूरि ने इस के विषय में एक कल्प लिखा है (विविधतीर्थकल्प पृ. ७०) तथा अनेक कथाओं का उल्लेख किया है। श्वे. परम्परा के अनुसार भगवान महावीर ने यहां एक वर्षावास – चातुर्मास व्यतीत किया था तथा केशी कुमारश्रमण एवं गणधर गौतम का प्रसिद्ध संवाद यहीं हुआ था। हरिषेण ने बृहत्कथाकोश में इस नगर में यतिवृषभ आचार्य की आत्महत्या का प्रसंग बतलाया है (कथा १५६)। अधिक विवरण के लिये देखिए – प्राचीन तीर्थमाला संग्रह भा. १ पृ. ३६, भारत के प्राचीन जैनतीर्थ पृ. ४०, जैनतीर्थयात्रादर्शक पृ. १११।

श्रीपुर—सिरपुर, शिरपुर। यहां अन्तरिक्ष पार्श्वनाथ का प्रसिद्ध मन्दिर है। इस मूर्ति की स्थापना की कथा कवि लक्ष्मण के गीत में दी है। इस के अनुसार इस मूर्ति की स्थापना खर दूषण ने की थी, बहुत समय तक वह एक कुंए में रही, अनंतर इस कुंए के जल से राजा एल का कुष्ठरोग दूर हुआ तब उस ने इस मूर्ति को खोज कर समारोहसे प्रतिष्ठित किया। मदनकीर्ति, उदयकीर्ति, गुणकीर्ति, मेघराज, सुमति-सागर, ज्ञानसागर, जयसागर, चिमणापंडित, सोमसेन तथा हर्ष ने भी अन्तरिक्ष पार्श्वनाथ को वन्दन किया है। श्रीपुर इस समय शिरपुर कहलाता है। यह विदर्भ के अकोला जिले में है*। मध्य रेलवे के खण्डवा – हिंगोली मार्ग के वाशिम स्टेशन से यहां तक मोटरमार्ग है।

श्वेताम्बर परम्परा में भी अन्तरिक्ष पार्श्वनाथ की बहुत मान्यता रही है। जिनप्रभसूरि ने एक कल्प में इसकी स्थापना की कथा देते हुए

---

* पं. प्रेमीजी ने निर्वाण काण्ड में उल्लिखित सिरपुर को मैसूर प्रदेश के धारवाड जिले में स्थित सिरिपुर से अभिन्न माना है (जैनसाहित्य और इतिहास पृ. ४६४) और पं. दरबारीलालजी ने अन्तरिक्ष पार्श्वनाथ का भी संबन्ध वहां से जोड दिया है (शासनचतुस्त्रिंशिका पृ. ४२) जो ठीक नही है। सिरिपुर में पार्श्वनाथ मंदिर तो था किन्तु अन्तरिक्ष मूर्ति नही थी, जब कि विदर्भ के शिरपुर की अंतरिक्ष मूर्ति अब तक सुप्रसिद्ध है।

राजा का नाम श्रीपाल तथा उस की राजधानी विंझउल्ल या विंगउल्ल बताई है जो आधुनिक हिंगोली से अभिन्न हो सकती है (विविधतीर्थकल्प पृ. १०२)। इधर शिरपुर की श्वेताम्बर पेढी ने एक किताब मराठी में छपवाई है जिस में दी हुई कथा के अनुसार श्रीपाल राजा ने अभयदेवसूरि द्वारा सं. ११४२ में इस मूर्ति की स्थापना की थी। किन्तु यह कथा विश्वसनीय नही प्रतीत होती क्यों कि जिनप्रभसूरि ने इस का कोई उल्लेख नही किया है, दूसरे, जिनप्रभसूरि से भी एक सदी पहले मदनकीर्ति ने इस का दिगम्बर तीर्थ के रूप में स्पष्ट उल्लेख किया है तथा अन्तिम कारण यह है कि श्रीपाल अथवा एल राजा का समय सं. ११४२ से कोई एक सदी पहले का है जैसा कि पहले एलूर के वर्णन में बतलाया है। इस तरह स्थापना की कथा संदिग्ध होने पर भी इस में सन्देह नही कि श्वेताम्बर यात्री यहां दर्शनार्थ आते रहे हैं क्यों कि ऐसे बहुतसे उल्लेख प्राप्त हैं–देखिए प्राचीन तीर्थमाला संग्रह भा. १ पृ. ७१, ९८, ११४ आदि, जैन तीर्थोनो इतिहास पृ. ५६। विद्यानन्द का श्रीपुरपार्श्वनाथस्तोत्र प्रकाशित हुआ है, वह संभवतः इस अन्तरिक्ष पार्श्वनाथ से भिन्न मैसूर प्रदेश के धारवाड जिले में स्थित सिरियूर के पार्श्वनाथ के संबंध का है क्यों कि उस में पार्श्वनाथमूर्ति के अंतरिक्ष होने का कोई उल्लेख नही है। निर्वाणकाण्ड में उल्लिखित सिरपुर विदर्भका है या कर्णाटक का यह कहना भी संभव नही क्यों कि उस में भी अन्तरिक्ष होने का उल्लेख नही है। द्रष्टव्य– जैन तीर्थ यात्रादर्शक पृ. ६१।

श्रीरंगपट्टण— यहां एलन्दविप्रकृत चन्द्रप्रभ का मन्दिर है (विश्वभूषण)। यह इस समय छोटा गांव है, मैसूर शहर से यहांतक रेल और मोटर के मार्ग हैं। अठारहवीं सदी में यह दक्षिण के सुप्रसिद्ध शासक टिपू सुलतान की राजधानी रही है। ऊपर जिन एलन्दविप्र का विश्वभूषण ने उल्लेख किया है उन का नाम विशालाक्ष था, वे येलान्दूर ग्राम के थे अतः दक्षिणी रीति के अनुसार उन्हें येलान्दूर पंडित कहते थे, वे मैसूर के राजा चिक्क देवराज (जो सन १६७२ में राज्यारूढ हुए थे) के मन्त्री थे। श्वे. साधु शीलविजयने इन के समय श्रीरंगपट्टण में

ऋषभदेव, पार्श्वनाथ और महावीर के मन्दिरों का दर्शन किया था (जैन साहित्य और इतिहास, पृ. ४५९)।

सक्रीपुरपट्टन—विश्वभूषण ने यहां के पार्श्वनाथ मन्दिर का उल्लेख किया है। यह नगर मैसूर प्रदेश के कडूर जिले में है। इसे अब सक्रीपटन कहते हैं।

समुद्रजिन—मदनकीर्ति के वर्णनानुसार समुद्रमें आदिनाथ की ५२५ धनुष ऊंची मूर्ति थी, इसकी छाया में समुद्र का खारा पानी भी मीठा हो जाता था। मेघराज, सुमतिसागर तथा जयसागरने भी समुद्रमध्य की इस मूर्ति का उल्लेख किया है। किन्तु इन से यह पता नहीं चलता कि किस समुद्र में किस स्थान पर यह मूर्ति है।

सम्मेदाचल—सम्मेतपर्वत, सम्मेदशिखर। इस पर्वत से वर्तमान अवसर्पिणी काल के अजितनाथ से पार्श्वनाथ तक वीस तीर्थंकरों का निर्वाण हुआ (पूज्यपाद, जटासिंहनंदि, जिनसेन, गुणभद्र, निर्वाणकाण्ड, उदयकीर्ति, मेघराज, गुणकीर्ति, सुमतिसागर, जयसागर, ज्ञानसागर, सोमसेन, भ. जिनसेन, चिमणापंडित, श्रुतसागर)। गुणभद्र के वर्णनानुसार दूसरे चक्रवर्ती सगर, तथा आठवे बलदेव रामचन्द्र आदि का भी यहीं से निर्वाण हुआ था। मदनकीर्ति ने यहां अमृतवापी का उल्लेख किया है (जो संभवतः वर्तमान जलमन्दिर का सूचक है) तथा इन्द्र द्वारा प्रतिष्ठित वीस तीर्थंकरों की प्रतिमाओं का भी उल्लेख किया है। भ. ज्ञानकीर्ति के कथनानुसार यहां साह नानू ने मन्दिर बनवाये थे, साह नानू राजा मानसिंह के मन्त्री थे। सम्मेदशिखर दिगम्बर परम्परा में सर्वाधिक सम्मानित तीर्थ रहा है। बिहार में आसनसोल–गया रेलमार्ग के ईसरी स्टेशन से (जिसे कुछ वर्ष पहले पारसनाथ यह नाम दिया गया है) यह पर्वत अठारह मील दूर है। गिरिडीह स्टेशन से भी यह करीब इतना ही दूर पडता है। पर्वत की तलहटी में दिगम्बर, श्वेताम्बर दोनों के मन्दिर व धर्मशालाएं हैं, इसे मधुवन कहते हैं। इस पर्वत के मुख्य तीन भाग हैं, एक ओर सबसे ऊंचे शिखर पर भगवान पार्श्वनाथ की चरणपादुकाओं का मन्दिर है, मध्यवर्ती भागपर अजितनाथ आदि अठारह तीर्थंकरों के

मन्दिर हैं तथा तीसरे भाग में मुख्य पर्वत से कुछ हट कर एक शिखर पर चन्द्रप्रभ तीर्थंकर की चरणपादुकाओं का मन्दिर है। मध्यवर्ती भाग के समीप पहाड की ढलान पर जलमन्दिर है। इस समय पर्वत पर जो मन्दिर हैं वे अठारहवीं सदी में श्वेताम्बरों द्वारा बने हुए हैं। किन्तु जैसा कि ऊपर बताया है, ज्ञानकीर्ति व मदनकीर्ति के उल्लेखों से बारहवीं व सोलहवीं सदी में यहां दिगम्बर मन्दिर भी थे यह स्पष्ट है। अठारहवीं सदी के अन्तिम भाग में यहां पालगंज के राजा का राज्य था उस से श्वेताम्बर संघ ने जमींदारी हक खरीद लिए थे। किन्तु यहां दोनों ही संप्रदायों के लोग समान रूप से पूजनादि करते हैं। जैनेतरों में यह पर्वत पारसनाथ हिल नाम से प्रसिद्ध है। यह दक्षिण विहार के उच्चतम पहाडों में से एक है तथा प्राकृतिक सौन्दर्य की दृष्टि से भी चित्ताकर्षक है। अधिक विवरण के लिए देखिए – प्राचीन तीर्थमाला संग्रह भा. १ पृ. २८–३२, जैनतीर्थयात्रादर्शक पृ. १३०, जैनतीर्थोनो इतिहास पृ. ३०, भारत के प्राचीन जैन तीर्थ पृ. २६।

सवणागिरि—सुवण्णगिरि, सोनागिरि। यहां नंग और अनंग कुमार तथा ५॥ कोटि मुनि मुक्त हुए (निर्वाणकाण्ड, गुणकीर्ति, मेघराज, चिमणापंडित)। विश्वभूषण इसे बुंदेलखंड में बतलाते हैं। श्रुतसागर और दिलसुख ने भी इस का नामोल्लेख किया है। इस समय मध्यरेलवे के झांसी – ग्वालियर मार्ग पर सोनागिरि स्टेशन है, उस से तीन मील पर यह पर्वत है। यहां भ. चन्द्रप्रभ का मुख्य मन्दिर है जिस का जीर्णोद्धार सं. १८८३ में हुआ था, अन्य ७६ मन्दिर भी हैं। यहां सोलहवीं सदी से भट्टारकों के पीठ रहे हैं। इस का नाम सोनागिरि है जिस का संस्कृत रूप सुवर्णगिरि होना चाहिए। किन्तु निर्वाणकाण्ड की अधिकतर प्रतियों में तथा गुणकीर्ति आदि के उल्लेखों में इस का रूप सवणागिरि मिलता है जिस का संस्कृत रूपान्तर श्रमणगिरि होता है। अतः पं. प्रेमीजी ने अनुमान किया है कि निर्वाणकाण्ड में उल्लिखित सवणगिरि – श्रमणगिरि राजगृह के निकट की पांच पहाडियों में से एक होना चाहिए (जैन साहित्य और इतिहास पृ. ४३६–३९)।

मध्ययुग में राजगृह के निकट के एक पर्वत को भी सुवर्णगिरि कहते थे, यह पहले बता चुके हैं। श्वेताम्बर परम्परा में एक और सुवर्णगिरि तीर्थ है—यह राजस्थान में जालोर नगर के निकट है। जैनतीर्थोनो इतिहास (न्या.) पृ. ३२९, द्रष्टव्य – जैनतीर्थयात्रादर्शक पृ. ९१ ।

सहेणाचल—ज्ञानसागर के वर्णनानुसार यह मालव प्रदेश में है, यहां शान्तिनाथ की ऊंची मूर्ति है, यहां से ३॥ कोटि मुनि मुक्त हुए थे। इस समय इस नाम का तीर्थ ज्ञात नही है । शायद सोनागिरि का ही यह नामान्तर है ।

सह्याचल—पूज्यपाद और श्रुतसागर ने इस पर्वत का तीर्थक्षेत्रों में अन्तर्भाव किया है। इस समय सह्य पर्वत का कोई शिखर तीर्थरूप में प्रसिद्ध नही है । गजपंथ का अन्तर्भाव इस में हो सकता है जिस के बारे में पहले वर्णन आ चुका है ।

साकेत—अयोध्या देखिए ।

सागवाडा—शाकवाट, सागपत्तन। ज्ञानसागर और जयसागर ने यहां के आदिनाथ मंदिर का उल्लेख किया है । यह नगर राजस्थान के दक्षिण भाग मे डूंगरपुर के पास है । यहां सोलहवीं सदी से मूल संघ—बलात्कारगण के भट्टारकों का पीठ रहा है जिस का विस्तृत वर्णन हमने 'भट्टारक संप्रदाय' पुस्तक में दिया है। भ. शुभचन्द्र ने सं. १६०८ में यहां पाण्डवपुराण की रचना की थी।

सारंगपुर—सुमतिसागर और जयसागर ने यहां के महावीर-मंदिर का उल्लेख किया है । यह नगर मध्यप्रदेश के देवास जिले में है।

सावत्थी—श्रावस्ती देखिए।

सिद्धवरकूट—नर्मदा नदी के पश्चिम तीर पर सिद्धवरकूट से दो चक्रवर्ती तथा दस कामदेव मुक्त हुए (निर्वाणकाण्ड, गुणकीर्ति, विश्वभूषण, चिमणापंडित)। इस समय यह क्षेत्र हिन्दुओं के तीर्थ ओंकारेश्वर के निकट है। पश्चिम रेलवे के खंडवा – अजमेर मार्ग पर ओंकारेश्वर रोड स्टेशन है उस से सात मील दूर यह स्थान है। स्टेशन

पर तथा ओंकारेश्वर ग्राम में धर्मशालाएं हैं। यहां से नर्मदा पार कर नाव द्वारा जाने पर सिद्धवरकूट के दर्शन होते हैं। यहां सं. १९५० में जीर्णोद्धार कार्य भ. महेन्द्रकीर्ति की प्रेरणासे शुरू हुआ तथा अब तक ११ मन्दिर, मानस्तंभ, धर्मशाला आदि बन चुके हैं। पूज्यपाद ने भी वरसिद्धकूट का उल्लेख किया है किन्तु उस का तात्पर्य राजगृह के समीप के पांच पहाडों में से एक प्रतीत होता है। द्रष्टव्य – जैनतीर्थयात्रा दर्शक पृ. २०३।

सिरपुर—श्रीपुर देखिए।

सिंहपुर—यहां ग्यारहवे तीर्थंकर श्रेयांसनाथ का जन्म हुआ था (यतिवृषभ, रविषेण, जटासिंहनन्दि, जिनसेन, गुणभद्र)। यह स्थान उत्तरप्रदेश में वाराणसी नगर के उत्तर में छह मील पर है तथा अब सारनाथ नाम से जाना जाता है। यहां दिगम्बर और श्वेताम्बर दोनों के मंदिर हैं। मध्ययुगीन श्वे. यात्रियों ने भी (प्राचीन तीर्थमाला संग्रह भा. १ पृ. १३) इस का उल्लेख किया है। भगवान बुद्ध के प्रथम धर्मोपदेश का स्थान होने के कारण सारनाथ बौद्धों का महत्त्व का तीर्थ है, बौद्ध ग्रन्थों में इसे ऋषिपत्तन कहा गया है। आजकल भारत सरकार की राज्यमुद्रा में अशोक के स्तम्भ के जिन सिंहमूर्तियों का चित्र अंकित है वह स्तंभ यहीं प्राप्त हुआ है। धर्मेक्षा (धम्मेख) नाम का विशाल स्तूप भी यहां है। अधिक विवरण के लिए देखिए–भारत के प्राचीन जैन तीर्थ पृ. ३६, जैनतीर्थयात्रादर्शक पृ. ११४, जैनतीर्थोनो इतिहास (न्या.) पृ. ४४२।

सिंहपुर (द्वितीय)— यह कावेरी के तीर पर है, यहां नेमिनाथ का मंदिर है (ज्ञानसागर)। काष्ठासंघ के भ. चन्द्रकीर्ति ने यहां कृष्णभट्ट को विवाद में जीता था तथा चारुकीर्ति पंडित से मुलाकात की थी (भट्टारक संप्रदाय पृ. २९६) इस उल्लेख में इसे नरसिंहपट्टन कहा गया है।

सुप्रतिष्ठ—पूज्यपाद ने इस का तीर्थों में अन्तर्भाव किया है। अधिक जानकारी प्राप्त नही।

सुरिपुर—शौरीपुर देखिए।

सुवर्णगिरि—स्वर्णगिरि देखिए।

सूरत-सूर्यपुर—ज्ञानसागर ने यहां के चन्द्रप्रभ मंदिर का उल्लेख किया है। गुजरात का यह नगर अब भी समृद्ध है। इस के जैन पुरातत्त्व के बारे में ब्र. शीतलप्रसादजी ने 'दानवीर माणिकचन्द्र' ग्रन्थ में विस्तृत जानकारी दी है। यहां मूल संघ-बलात्कारगण तथा काष्ठासंघ-नंदीतट-गच्छ के भट्टारकों की गद्दियां पन्द्रहवी सदी से रही हैं जिन का वृतान्त हमने 'भट्टारक संप्रदाय' पुस्तक में दिया है। इस समय सूरत में ७ मंदिर हैं। श्वेताम्बरों के भी बहुत मंदिर यहां हैं।

सेलग्राम—यहां कमठेश्वर पार्श्वनाथ का मंदिर है (ज्ञानसागर, जयसागर, हर्ष)। इस समय यह नगर सेलू नाम से जाना जाता है। मध्य रेलवे के मनमाड-पूर्णा मार्ग पर यह स्टेशन है।

सोनागिरि—स्वर्णगिरि देखिए।

स्तम्भन—खम्भात देखिए।

स्तवनिधि—तवनिधि देखिए।

हलेबीड—यहां पार्श्वनाथ और शान्तिनाथ के मन्दिर हैं (विश्व-भूषण) यहां के मन्दिर में स्फटिक के चार स्तम्भ हैं (ज्ञानसागर)। हलेबीड इस समय छोटा गांव है, यह मैसूर प्रदेश के हासन जिले में है। बारहवीं से चौदहवीं सदी तक यहां होयसल वंश के राजाओं की राजधानी थी, तब इसे द्वारसमुद्र कहते थे। यहां के मन्दिर उसी समय के बने हैं तथा शिल्पकला की दृष्टि से बहुत सुन्दर हैं। यहां के ८ शिलालेख, जो सन ११९७ से १६३८ तक के हैं, जैनशिलालेख संग्रह के भा. २ व ३ में संकलित हैं, उन से यहां के राजाओं और आचार्यों का अच्छा परिचय मिलता है।

हस्तिनापुर—हस्तिनागपुर, नागपुर, गजपुर, गजसाह्वय, गयउर, हत्थिणाउर, हास्तिनपुर। इस नगर में सोलहवे तीर्थंकर श्रीशान्तिनाथ, सत्रहवे तीर्थंकर श्रीकुन्थुनाथ तथा अठारहवे तीर्थंकर श्रीअरनाथ का जन्म हुआ था (यतिवृषभ, रविषेण, जटासिंहनन्दि, जिनसेन, गुणभद्र)। यहां के इन तीन तीर्थंकरों की वन्दना निर्वाणकाण्ड, उदयकीर्ति, गुणकीर्ति, मेघराज, तथा ज्ञानसागर ने भी की है। इसी नगर में भगवान ऋषभदेव को एक वर्ष के तप के बाद राजा श्रेयांस ने पहला आहारदान अक्षय-तृतीया के दिन दिया था। भरत चक्रवर्ती के सेनापति मेघेश्वर जयकुमार सही नगर के थे। इस समय यह स्थान जंगल में है, उत्तर प्रदेश में मेरठ शहर से २० मील दूर है। यहां दिगम्बर, श्वेताम्बर दोनों के मन्दिर व धर्मशालाएं हैं। हस्तिनापुर के विषय में विजयेन्द्रसूरि की एक पुस्तिका प्रकाशित हो चुकी है। जिनप्रभसूरि ने इस के बारे में एक कल्प लिखा है (विविधतीर्थकल्प पृ. २७) तथा यहां के प्रमुख पुराणपुरुषों का – राजा श्रेयांस, चक्रवर्ती सनत्कुमार, सुभौम, महापद्म एवं महामुनि विष्णुकुमार, पांच पाण्डव आदि का उल्लेख किया है। अधिक विवरण के लिए देखिए – जैनतीर्थयात्रादर्शक पृ. १०१,, भारत के प्राचीन जैनतीर्थ पृ. ४६, प्राचीन तीर्थमाला संग्रह भा. १ पृ. ३९, जैनतीर्थोनो इतिहास (न्या.) पृ. ५२०।

हाडोली—यहां चन्द्रगिरि नाम की पहाडी है तथा चौवीस तीर्थंकरों का मन्दिर है (ज्ञानसागर, विश्वभूषण)। हाडुवल्लि या संगीतपुर मैसूर प्रदेश के उत्तर कनडा जिले में है। यह १५ वीं १६ वीं सदी में इस प्रदेश के जैन राजाओं की राजधानी थी। यहां एक भट्टारकपीठ भी था (जैनिजम इन साउथ इन्डिया पृ. १२५–१२८)।

हासन—यहां पार्श्वनाथ का मन्दिर है (विश्वभूषण)। यह शहर मैसूर प्रदेश के इसी नाम के जिले का मुख्य स्थान है तथा मैसूरअरसीकेरे रेलमार्ग पर स्टेशन है।

हुब्बली—यहां आदिनाथ का मन्दिर है (विश्वभूषण)। यह

शहर मैसूर प्रदेश के धारवाड जिले में एक प्रमुख शहर है तथा दक्षिण रेलवे का जंकशन है।

हुम्बच—हुम्मस – हुम्मच – पोंबुच देखिए।

हुलगिरि—हुलागिरि – लक्ष्मेश्वर देखिए।

हिमवत्—पूज्यपाद ने इस का तीर्थों में समावेश किया है। भगवान आदिनाथ का निर्वाणस्थान कैलास पर्वत हिमवत् का ही एक शिखर है। जिनप्रभसूरि ने यहां छाया – पार्श्वनाथ का वर्णन किया है यह पहले बता चुके हैं। इस समय हिमालय का कोई स्थान जैनतीर्थ के रूप में प्रसिद्ध नही है।

नामसूची

(उल्लिखित अंक पृष्ठों के हैं।)

Jīvarāja Jaina Granthamālā

General Editors :

Dr. A. N. Upadhye & Dr. H. L. Jain

1. *Tiloyapaṇṇatti* of Yativṛṣabha (Part I, chapters 1–4): An Ancient Prākrit Text dealing with Jaina Cosmography, Dogmatics etc. Prākrit Text authentically edited for the first time with the Various Readings, Preface & Hindi Paraphrase of Pt. Balachandra by Drs. A. N. Upadhye & H. L. Jain. Published by Jaina Saṁskṛti Saṁrakṣaka Saṁgha, Sholapur (India). Crown 8vo. pp. 6–38–532. Sholapur 1943. Price Rs. 12·00. Second Edition, Sholapur 1956. Price Rs. 16·00.

1. *Tiloyapaṇṇatti* of Yativṛṣabha (Part II, Chapters 5–9) As above, with Introductions in English and Hindi, with an alphabetical index of Gāthās, with other indices (of Names of works mentioned, of Geographical Terms, of Proper Names, of Technical Terms, of Differences in Tradition of Karaṇasūtras and of Technical Terms compared) and Tables (of Nāraka-jīva, Bhavana-vāsī Deva, Kulakaras, Bhāvana Indras, Six Kulaparvatas, Seven Kṣetras, Twentyfour Tīrthakaras ; Age of the Śalākāpuruṣas, Twelve Cakravartins, Nine Nārāyaṇas, Nine Pratiśatrus, Nine Baladevas, Eleven Rudras, Twentyeight Nakṣatras, Eleven Kalpātīta, Twelve Indras, Twelve Kalpas and Twenty Prarūpaṇās). Crown Octavo pp. 6–14–108–529 to 1032, Sholapur 1951. Price Rs. 16·00.

2. *Yaśastilaka and Indian Culture*, or Somadeva's Yaśastilaka and Aspects of Jainism and Indian Thought and Culture in the Tenth Century, by Professor K. K. Handiqui, Vice-Chancellor, Gauhati University, Assam, with Four Appendices, Index of Geographical Names and General Index. Published by J. S. S. Sangha, Sholapur. Crown Octavo pp. 8–540. Sholapur 1949. Price Rs. 16·00.

3. *Pāṇḍavapurāṇam* of Śubhacandra : A Sanskrit Text dealing with the Pāṇḍava Tale. Authentically edited with Various Readings, Hindi Paraphrase, Introduction in Hindi etc. by Pt. Jinadas. Published by J. S. S. Sangha, Sholapur. Crown Octavo pp. 4–40–8–520. Sholapur 1954. Price Rs. 12·00.

4. *Prākṛta-śabdānuśāsanam* of Trivikrama with his own commentary : Critically Edited with Various Readings, an Introduction and Seven Appendices (1. Trivikrama's Sūtras; 2. Alphabetical index of the Sūtras; 3 Metrical Version of the Sūtrapāṭha; 4. Index of Apabhraṁśa Stanzas; 5. Index of Deśya words, 6. Index of Dhātvādeśas, Sanskrit to Prākrit and vice versa; 7. Bharata's Verses on Prākrit) by Dr. P. L. VAIDYA, Director, Mithilā Institute, Darbhanga. Published by the J. S. S. Sangha, Sholapur. Demy 8vo. pp. 44-178. Sholapur 1954. Price Rs. 10·00.

5. *Siddhānta-sārasaṁgraha* of Narendrasena : A Sanskrit Text dealing with Seven Tattvas of Jainism. Authentically Edited for the first time with Various Readings and Hindi Translation by Pt. JINADAS P. PHADKULE. Published by the J. S. S. Sangha, Sholapur. Crown Octavo pp. about 300. Sholapur 1957. Price Rs. 10·00.

6. *Jainism in South India and Hyderabad Epigraphs* : A learned and well-documented Dissertation on the career of Jainism in the South, especially in the areas in which Kannada, Tamil and Telugu Languages are spoken, by P. B. DESAI, M.A., Assistant Superintendent for Epigraphy, Ootacamund. Some Kannaḍa Inscriptions from the areas of the former Hyderabad State and round about are edited here for the first time both in Roman and Devanāgarī characters, along with their critical study in English and Sārānuvāda in Hindī. Equipped with a List of Inscriptions edited, a General Index and a number of illustrations. Published by the J. S. S. Sangha, Sholapur. Sholapur 1957. Crown Octavo pp. 16-456. Price Rs. 16·00.

7. *Jambūdīvapaṇṇatti-Saṁgaha* of Padmanandi : A Prākrit Text dealing with Jaina Geography. Authentically edited for the first time by Drs. A. N. UPADHYE and H. L. JAINA, with the Hindī Anuvāda of Pt. BALACHANDRA. The introduction institutes a careful study of the Text and its allied works. There is an Essay in Hindi on the Mathematics of the Tiloyapaṇṇatti by Prof. LAKSHMICHANDA JAIN, Jabalpur. Equipped with an Index of Gāthās, of Geographical Terms and of Technical Terms, and with additional Variants of

Amera Ms. Published by the J. S. S. Sangha, Sholapur. Crown Octavo pp. about 500. Sholapur 1957. Price Rs. 16.

8. *Bhaṭṭāraka-sampradāya :* A History of the Bhaṭṭāraka Pīṭhas especially of Western India, Gujarat, Rajasthan and Madhya Pradesh, based on Epigraphical, Literary and Traditional sources, extensively reproduced and suitably interpreted, by Prof. V. JOHRAPURKAR, M.A. Nagpur. Published by the J. S. S. Sangha, Sholapur, Demy Octavo pp. 14–29–326, Sholapur 1960. Price Rs. 8/–.

9. *Prābhṛtādisaṃgraha :* This is a presentation of topic-wise discussions compiled from the works of Kundakunda, the *Samayasāra* being fully given. Edited with Introduction and Translation in Hindi by Pt. KAILASHCANDRA SHASTRI, Varanasi. Published by the J. S. S. Sangha, Sholapur. Demy 8vo. pp. 10–106– 0–288. Sholapur 1960. Price Rs. 6·00.

10. *Pañcaviṃśati* of Padmanandi : (c. 1136 A.D.). This is a collection of 26 Prakaraṇas (24 in Sanskrit and 2 in Prākrit) small and big, dealing with various religious topics: religious, spiritual, ethical, didactic, hymnal and ritualistic. The text along with an anonymous commentary critically edited by Dr. A. N. UPADHYE and Dr. H. L. JAIN with the Hindi Anuvāda of Pt. BALACHANDA SHASTRI. The edition is equipped with a detailed introduction shedding light on the various aspects of the work and personality of the author both in English and Hindi. There are useful Indices. Printed in the N. S. Press, Bombay. Crown Octavo pp. 8–64–284. Sholapur 1962. Price Rs. 10/–.

11. *Ātmānuśāsana* of Guṇabhadra (middle of the 9th century A.D.). This is a religio-did actic anthology in elegant Sanskrit verses composed by Guṇabhadra, the pupil of Jinasena, the teacher of Rāṣṭrakūṭa Amoghavarṣa. The Text is critically edited along with the Sanskrit commentary of Prabhācandra and a new Hindi Anuvāda by Dr. A. N. UPADHYE, Dr. H. L. JAIN and Pt. BALACHANDRA SHASTRI. The edition is equipped with introduction in English and Hindi and some useful Indices. Demy 8vo. pp. 8–112–260, Sholapur 1961. Price Rs. 5/–.

12. *Gaṇitasārasaṁgraha* of Mahāvīrācārya (c. 9th century A.D.): This is an important treatise in Sanskrit on early Indian mathematics composed in an elegant style with a practical approach. Edited with Hindi Translation by Prof. L. C. JAIN, M.SC., Jabalpur. Crown Octavo pp. 16 + 34 + 282 + 86, Sholapur 1963. Price Rs. 12/-.

13. *Lokavibhāga* of Siṁhasūri: A Sanskrit digest of a missing ancient Prākrit text dealing with Jaina cosmography. Edited for the first time with Hindi Translation by Pt. BALACHANDRA SHASTRI. Crown Octavo pp. 8-52-256, Sholapur 1962. Price Rs. 10/-.

14. *Puṇyāsrava-kathākośa* of Rāmacandra: It is a collection of religious stories in simple and popular Sanskrit. The text authentically edited by Dr. A. N. UPADHYE and Dr. H. L. JAIN with the Hindi Anuvāda of Pt. BALACHANDRA SHASTRI. Crown Octavo pp. 48 + 368. Sholapur 1964. Price Rs. 10/-.

15. *Jainism in Rajasthan*: This is a dissertation on Jainas and Jainism in Rajasthan and round about area from early times to the present day, based on epigraphical, literary and traditonal sources by Dr. KAILASHCHANDRA JAIN, Ajmer. Crown Octavo pp. 8 + 284, Sholapur 1963. Price Rs. 11/-

16. *Viśvatattva-Prakāśa* of Bhāvasena (13th century A.D.): It is a treatise on Nyāya. Edited with Hindi Summary and Introduction in which is given an authentic Review of Jaina Nyāya literature by Dr. V. P. Johrapurkar, Nagpur. Demy Octavo pp. 16 + 112 + 372, Sholapur 1964. Price Rs. 12/-.

17. *Tīrtha-vandana-saṁgraha*: A compilation and study of Extracts in Sanskrit, Prākrit and Modern Indian Languages from Ancient and Medieval Works of Forty Authors about (Digambara) Jaina Holy Places, by Dr. V. P. JOHRAPURKAR, Jaora. Demy Octavo pp.   , Sholapur 1965. Price Rs.

WORKS IN PREPARATION

Subhāṣita-saṁdoha. Dharma-parīkṣā, Jñānārṇava, Dharmaratnākara, etc. For copies write to:

Jaina Saṁskṛti Saṁrakshaka Sangha,
SANTOSH BHAVAN, Phaltan Galli,
Sholapur (C. Rly.) India.

जीवराज जैन ग्रन्थमाला द्वारा प्रकाशित ग्रन्थों की सूची

संस्कृतप्राकृतादि विभाग

१. तिलोयपण्णत्ती भा. १ः—आचार्ययतिवृषभकृत जैन भूगोलविषयक प्राचीन प्राकृत ग्रन्थ; पाठान्तर, प्रस्तावना तथा पं. बालचन्द्रशास्त्रीकृत हिन्दी अनुवाद के साथ प्रथमवार संपादित; सं. डॉ. आ. ने. उपाध्ये तथा डॉ. हीरालाल जैन; क्राउन अष्टपत्री पृष्ठ ६+३८+५३२; प्रथम संस्करण १९४३, मूल्य रु. १२; द्वितीय संस्करण १९५६, मूल्य रु. १६।

१. तिलोयपण्णत्ती भा. २ः—उपर्युक्त ग्रन्थ का उत्तरार्ध; विस्तृत अंग्रेजी और हिन्दी प्रस्तावना, गाथासूची तथा अनेक तालिकाओं सहित (तालिकाओं में उल्लिखित ग्रन्थ, भौगोलिक संज्ञाएं, विशेषनाम, पारिभाषिक शब्द, शलाका-पुरुषसूची, देव तथा स्वर्ग सूची, बीस प्ररूपणाएं आदि का समावेश है); क्राउन अष्टपत्री, पृ. ६+१४+१०८+५२९ से १०३२; प्रथम संस्करण १९५१. मूल्य रु. १६।

१अ. तिलोकपण्णत्तीका गणित ले. प्रो. लक्ष्मीचंद्र जैन—यह स्वतंत्र पुस्तिका मिलती है। मूल्य रु. ३

२. यशस्तिलक ॲन्ड इन्डियन कल्चरः—ले. प्रो. कृष्णकान्त हन्दिकी, गौहाटी विश्वविद्यालय के उपकुलपति; इस अंग्रेजी ग्रन्थ में आचार्य सोमदेव के महान ग्रन्थ यशस्तिलक (दसवीं सदी) का भारतीय संस्कृति की दृष्टि से गहन अध्ययन प्रस्तुत किया गया है; विभिन्न सूचियों सहित; क्राउन अष्टपत्री, पृ. ८+५४०; प्रथम संस्करण १९४९. मूल्य रु. १६।

३. पाण्डवपुराण— भट्टारकशुभचन्द्रविरचित संस्कृत कथाग्रन्थ; पाठान्तर, प्रस्तावना तथा हिन्दी अनुवाद सहित, सं पं. जिनदासशास्त्री फडकुले; क्राउन अष्टपत्री, पृ. ४ + ४० + ८ + ५२०; प्रथम संस्करण १९५४. मूल्य रु. १२।

४. प्राकृतशब्दानुशासन— त्रिविक्रमविरचित प्राकृत व्याकरण, उन्हीं की टीका के साथ; पाठान्तर, प्रस्तावना तथा विभिन्न सूचियों सहित; सं. डॉ.

परशुराम लक्ष्मण वैद्य, प्रधान संचालक, मिथिला इन्स्टीटयूट, दरभंगा; डेमी अष्टपत्री, पृष्ठ ४४ + ४७८, प्रथम संस्करण १९५७. मूल्य रु. १० ।

५. सिद्धान्तसारसंग्रह— नरेन्द्रसेनाचार्यकृत प्राचीन संस्कृत ग्रन्थ (बारहवीं शताब्दी), इस में जीवाजीवादि सात तत्त्वों का वर्णन है; पाठान्तर और हिन्दी अनुवाद सहित, सं. पं. जिनदासशास्त्री फडकुले, सोलापूर; क्राउन अष्टपत्री, पृष्ठ ३००, प्रथम संस्करण १९५७; मूल्य रु. १० ।

६. जैनिज़म इन साउथ इन्डिया ॲन्ड सम जैन एपिग्राफ्स— ले. डॉ. पी. बी. देसाई, ॲसिस्टन्ट सुपरिन्टेन्डेन्ट ऑफ एपिग्राफी, उटकमंड; इस अंग्रेजी ग्रन्थ में आन्ध्र, कर्णाटक और तमिलनाड में जैन धर्म के कार्य का विशद और प्रामाणिक वर्णन प्रस्तुत किया गया है; इस में पुराने हैदराबाद राज्य के कई कन्नड शिलालेखों का अंग्रेजी और हिन्दी में विस्तार के साथ संपादन भी किया गया है; विविध सूचियों और चित्रों से सज्जित; क्राउन अष्टपत्री पृष्ठ १६ + ४५६, प्रथम संस्करण, १९५७. मूल्य रु. १६ ।

७. जम्बूदीवपण्णत्तिसंग्रह— आचार्य पद्मनन्दिकृत जैन भूगोल विषयक प्राचीन प्राकृत ग्रन्थ (दसवीं शताब्दी), सं. डॉ. आ. ने. उपाध्ये व डॉ. हीरालाल जैन, हिन्दी अनुवादक पं. बालचन्द्रशास्त्री; प्रस्तावना में इस विषय के अन्यान्य ग्रन्थों का विशद तुलनात्मक अध्ययन किया गया है; तिलोयपण्णत्ती का गणित शीर्षक विस्तृत हिन्दी निबन्ध (ले. प्रो. लक्ष्मीचन्द्र जैन) भी इस में है; विविध सूचियों और पाठान्तरों के साथ; क्राउन अष्टपत्री पृ. ५०० प्रथम संस्करण १९५७. मूल्य रु. १६ ।

८. भट्टारक संप्रदाय— सं. प्रो. विद्याधर जोहरापुरकर; सेनगण, बलात्कारगण तथा काष्ठासंघ के भट्टारकों का इतिहास तथा उस के साहित्यिक शिलालेखीय और परम्परागत साधनों के विस्तृत उद्धरण, प्रस्तावना तथा विविध सूचियों से सुसज्जित; डेमी अष्टपत्री पृ. १४+२९ + ३२६, प्रथम संस्करण १९५८. मूल्य रु. ८ ।

९. कुन्दकुन्द प्राभृतसंग्रह— सं. पं. कैलाशचन्द्रशास्त्री; आचार्य कुन्दकुन्द के समग्र ग्रन्थों का विषयानुसारी वर्गीकरण-अध्ययन, समयसार के

संपूर्ण अनुवाद के साथ, विस्तृत प्रस्तावना सहित; डेमी अष्टपत्री पृ. १०+१०६+१०+२-८, प्रथम संस्करण १९६०, मूल्य रु. ६ ।

१०. पंचविंशति— पद्मनन्दि आचार्यकृत संस्कृत के २४ और प्राकृत के २ प्रकरणों का संग्रह (१२ वीं सदी) विविध धार्मिक विषयों पर सुबोध विवेचन, अज्ञातकर्तृक टीका के साथ; सं. डॉ. आ. ने. उपाध्ये व डॉ. हीरालाल जैन, हिन्दी अनुवादक पं. बालचन्द्रशास्त्री, विस्तृत प्रस्तावना (अंग्रेजी और हिन्दी) तथा सूचियों सहित; क्राउन अष्टपत्री पृ. ८ + ६४ + २८४, प्रथम संस्करण १९६२. मूल्य रु. १० ।

११. आत्मानुशासन— आचार्य गुणभद्रकृत प्राचीन संस्कृत ग्रन्थ (नौवीं सदी); इस में विविध धार्मिक उपदेशपर सुभाषित हैं; प्रभाचन्द्रकृत संस्कृत टीका के साथ प्रथमबार संपादित; सं. डॉ. आ. ने उपाध्ये, डॉ. हीरालाल जैन व पं. बालचन्द्रशास्त्री; हिन्दी अनुवाद, विस्तृत प्रस्तावना (हिन्दी और अंग्रेजी) तथा सूचियों सहित; डेमी अष्टपत्री पृ. ८ + ११२ + २६० प्रथम संस्करण १९६१. मूल्य रु. ५ ।

१२. गणितसारसंग्रह— महावीराचार्यकृत प्राचीन संस्कृत ग्रन्थ (नौवीं शताब्दी); भारतीय गणितशास्त्र में इस का महत्त्वपूर्ण स्थान है; हिन्दी अनुवाद, विस्तृत प्रस्तावना, सूचियों और तालिकाओं सहित; सं. प्रो. लक्ष्मीचन्द्र जैन, एम्. एस्सी., जबलपुर; क्राउन अष्टपत्री पृ. १६ + ३४ + २८२ + ८६, प्रथम संस्करण १९६३. मूल्य रु. १२ ।

१३. लोकविभाग— सर्वनन्दि आचार्य कृत जैन भूगोलविषयक प्राचीन प्राकृत ग्रन्थ (शक सं. ३२२) का सिंहसूरिकृत संस्कृत रूपान्तर, हिन्दी अनुवाद, प्रस्तावना, सूचियों सहित, सं. पं. बालचन्द्रशास्त्री; क्राउन अष्टपत्री पृ. ८ + ५२ + २५६, प्रथम संस्करण १९६२. मूल्य रु. १० ।

१४. पुण्यास्रव कथाकोष— रामचन्द्रकृत संस्कृत ग्रन्थ, इस में सरल धार्मिक कथाओं का संग्रह है, सं. डॉ. आ. ने. उपाध्ये व डॉ. हीरालाल जैन, हिन्दी अनुवादक पं. बालचन्द्रशास्त्री; क्राउन अष्टपत्री पृ.४८ + ३६८, सोलापुर १९६४. मूल्य रु. १० ।

१५. जैनिजम इन राजस्थान-- ले. प्रो. कैलाशचन्द्र जैन, अजमेर; इस अंग्रेजी ग्रन्थ में राजस्थान में प्राचीन समय से अबतक जैन समाज के इतिहास का वर्णन और विवेचन किया गया है और उस के साहित्यिक, शिलालेखीय और परम्परागत साधनों का मूल्यांकन प्रस्तुत किया गया है; अष्टपत्री क्राउन अष्टपत्री पृ. ८+२८४, प्रथम संस्करण १९६३. मूल्य रु. ११।

१६. विश्वतत्त्वप्रकाश-- आचार्य भावसेन कृत पुरातन संस्कृत ग्रन्थ (तेरहवीं शताब्दी); इस में विभिन्न दर्शनों के विचारों का जैन दार्शनिक दृष्टि से परीक्षण किया गया है; हिन्दी सारानुवाद, प्रस्तावना तथा सूचियों सहित, प्रस्तावना में जैन तार्किक साहित्य शीर्षक विस्तृत निबन्ध भी है; सं. डॉ. विद्याधर जोहरापुरकर, डेमी अष्टपत्री पृ. १६+११२+३९२, प्रथम संस्करण १९६४. मूल्य रु. १२।

१७. तीर्थवंदनसंग्रह— जैन तीर्थक्षेत्रों के विषय में ४० दिगम्बर जैन लेखकों की कृतियों का संकलन और अध्ययन, सं. डॉ. विद्याधर जोहरापुरकर, जावरा, डेमी अष्टपत्री पृ. २०० प्रथम संस्करण १९६५, मूल्य रु. ५।

आगामी प्रकाशन

अमितगतिकृत सुभाषितरत्नसन्दोह, धर्मपरीक्षा, शुभचन्द्रकृत ज्ञानार्णव; जयसेनकृत धर्मरत्नाकर, इत्यादि.